एम. ए. प्रथम सत्र — पाठ्यक्रम – **MSKTC-101**

संस्कृत
नाटक तथा काव्य
इकाई 1-22

सम्पादक: डॉ. देवराज

दूरवर्ती एवं ऑनलाइन शिक्षा केन्द्र
हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, शिमला - 5

विषयानुक्रमणिका

			पृ. संख्या
प्रथम अध्याय	इकाई – 1	भवभूति का व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व	3-10
द्वितीय अध्याय	इकाई – 2	भवभूति की कृतियाँ	11-19
तृतीय अध्याय	इकाई – 3	उत्तररामचरित की नाट्यकला	20-32
चतुर्थ अध्याय	इकाई – 4	उत्तररामचरित प्रथम अङ्क	33-47
पञ्चम अध्याय	इकाई – 5	उत्तररामचरित द्वितीय अङ्क	48-58
षष्ठ अध्याय	इकाई – 6	उत्तररामचरित तृतीय अङ्क	59-73
सप्तम अध्याय	इकाई – 7	उत्तररामचरित चतुर्थ अङ्क	74-83
अष्टम अध्याय	इकाई – 8	उत्तररामचरित पञ्चम अङ्क	84-94
नवम अध्याय	इकाई – 9	उत्तररामचरित षष्ठम अङ्क	95-106
दशम अध्याय	इकाई – 10	उत्तररामचरित सप्तम अङ्क	107-114
एकादश अध्याय	इकाई – 11	श्रीहर्ष का परिचय	115-121
द्वादश अध्याय	इकाई – 12	नैषधीयचरित	122-131
त्रयोदश अध्याय	इकाई – 13	नैषधीयचरित : प्रथम सर्ग (पद्य 1-15)	132-142
चतुर्दश अध्याय	इकाई – 14	नैषधीयचरित : प्रथम सर्ग (पद्य 16-30)	143-153
पञ्चदश अध्याय	इकाई – 15	नैषधीयचरित : प्रथम सर्ग (पद्य 31-45)	154-163
षोडश अध्याय	इकाई – 16	नैषधीयचरित : प्रथम सर्ग (पद्य 46-60)	164-173
सप्तदश अध्याय	इकाई – 17	नैषधीयचरित : प्रथम सर्ग (पद्य 61-75)	174-183
अष्टादश अध्याय	इकाई – 18	नैषधीयचरित : प्रथम सर्ग (पद्य 76-90)	184-193
नवदश अध्याय	इकाई – 19	नैषधीयचरित : प्रथम सर्ग (पद्य 91-105)	194-203
विंशति अध्याय	इकाई – 20	नैषधीयचरित : प्रथम सर्ग (पद्य 106-120)	204-213
एक विंशति अध्याय	इकाई – 21	नैषधीयचरित : प्रथम सर्ग (पद्य 121-135)	214-222
द्वाविशंति अध्याय	इकाई – 22	नैषधीयचरित : प्रथम सर्ग (पद्य 136-145)	223-229

प्रथम अध्याय

इकाई 1

भवभूति का व्यक्तित्व एव कर्त्तृत्व

संरचना

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 भवभूति का जीवन परिचय

1.3.1 भवभूति का समय

- स्वयं आकलन अभ्यास प्रश्न-1

1.4 भवभूति की प्रकृति

- स्वयं आकलन अभ्यास प्रश्न-2

1.5 सारांश

1.6 कठिन शब्दावली

1.7 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

1.8 सहायक ग्रन्थ

1.9 अभ्यास के लिए प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों, इससे पूर्व स्नातक स्तर की कक्षा में आपने संस्कृत के विभिन्न कवियों के विषय में पढ़ा होगा। इन कवियों में प्रमुखतया भास, कालिदास, बाणभट्ट, सुबन्धु, दण्डी और अम्बिकादत्त व्यास है। स्नातकोत्तर स्तर की कक्षा में आपको प्रथम पत्र 'नाटक तथा काव्य' का है। जिसके अन्तर्गत आपको नाटक में भवभूति कृत 'उत्तररामचरित' तथा काव्य में श्रीहर्ष चरित 'नैषधीयचरित' महाकाव्य निर्धारित किया गया है। नैषधीयचरित महाकाव्य और उसके रचयिता पर अगली इकाईयों में वर्णन किया जायेगा। इस इकाई में उत्तररामचरित के रचयिता भवभूति के व्यक्तित्व और कर्त्तृत्व पर प्रकाश डाला जायेगा। भवभूति को संस्कृत नाट्य सहित्य में युग-परिवर्तन करने वाला प्रतिभाशाली कवि कहा जाता है, जिन्होंने कई दृष्टियों में कालिदास को भी पीछे छोड़ दिया है। वह अपने युग के सशक्त एवं विशिष्ट नाटककार थे। उस युग के आलोचक उनकी प्रतिभा का वास्तविक मूल्यांकन उपस्थित करनें में असमर्थ रहे, फलतः कवि के मन में

अन्तःक्षोभ की अग्नि धधकती दिखाई पड़ती है। इस इकाई के अन्तर्गत भवभूति का परिचय, उनकी कृतियों विशेषकर उत्तररामचरित का अध्ययन किया जायेगा। इसलिए उद्देश्य के बाद सर्वप्रथम भवभूति के सम्बन्ध में कहा जायेगा।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पचात् आप जानने में सक्षम होंगे-

- भवभूति के जन्म स्थान से सम्बन्धित जानकारी।
- भवभूति का काल निर्धारण।
- भवभूति की प्रकृति

1.3 भवभूति का परिचय

यह हर्ष का विषय है कि संस्कृत के कवियों में भवभूति के विषय में कुछ अधिक निश्चय के साथ कहा जा सकता है। इसका कारण यह है कि उन्होंने अपनी तीनों कृतियों में अपने विषय में कुछ कहा है। उनके कथन का सारांश यह है-

यद्यपि भवभूति का नाम संस्कृत नाट्य साहित्य में अमर है और कालिदास के बाद यदि कोई सर्वश्रेष्ठ नाटककार कहा जा सकता है तो वह भवभूति ही है, परन्तु इनके विषय में जो भी थोड़ा बहुत ऐतिहासिक तथ्य प्राप्त होता है उसका आधार केवल मात्र इनकी रचनाएं ही है। भवभूति ने महावीरचरित नाटक में अपने जन्मस्थान, वंश आदि का विस्तार पूर्वक परिचय दिया है। भवभूति के पूर्वज दक्षिण देश के पद्मपुर नामक नगर में रहते थे। कश्यप वंशीय उदुम्बर नाम के ब्राह्मण परिवार में उनका जन्म हुआ था। उनके पूर्वज कृष्ण यजुर्वेद की तैत्तिरीय शाखा के अनुयायी थे तथा उनके घर में पंचाग्नियाँ सदैव विद्यमान रहा करती थीं। उनका निवास स्थान पद्मपुर था जो विदर्भ (आधुनिक बरार) प्रान्त का एक नगर था। उनके पूर्वज बाजपेय तथा सोमयाग यज्ञों के करने वाले थे। उन्होंने उस काल में प्रचलित सभी विद्याओं का पारायण कियार था। विद्वानों के उस कुल में महाकवि नाम के एक व्यक्ति हुए जिनकी पाँचवी पीढ़ी मे भवभूति के पितामह का नाम गोपालभट्ट तथा पिता का नाम नीलकण्ठ था। उनकी माता का नाम जातुकर्णी था। भवभूति ने अपने लिए ''**श्रीकण्ठपदलाच्छनः भवभूतिर्नामा**'' यह विवरण दिया है। इस विवरण को लेकर विद्वानों में मतभेद हैं।

कुछ विद्वान् उनका वास्तविक नाम भवभूति तथा श्रीकण्ठ को उनकी उपाधि मानते हैं। दूसरे आचार्य श्रीकण्ठ वास्तविक नाम तथा भवभूति उनकी उपाधि मानते हैं। 'भवभूतिर्नामा' का अर्थ 'भवभूति नाम से प्रसिद्ध) यह करके उन्होंने भवभूति को उनकी उपाधि ही माना है। इस विषय में किंवदन्ती है कि उनके द्वारा प्रयुक्त भवभूति शब्द के विचित्र प्रयोग के कारण लोग उन्हें भवभूति कहने लगे थे। कुछ आचार्य की दृष्टि में यह प्रयोग है- **साम्बा पुनातु भवभूतिपवित्रमूर्तिः।** दूसरे आचार्यों ने - '**गिरिजायाः स्तनो वन्दे**

भवभूतिसिताननो' इस उक्ति को भवभूति नामकरण का कारण माना है। कुछ विद्वानों ने उम्बेकाचार्य तथा भवभूति को अभिन्न माना है, परन्तु इस सम्बन्ध में पुष्ट प्रमाणों का अभाव है।

भवभूति ने अपने गुरु का नाम ज्ञाननिधि लिखा है। इन्हीं ज्ञाननिधि से भवभूति ने अनेक शास्त्रें का ज्ञान प्राप्त किया था। उन्होंने अपने आप को पदवाक्य प्रमाणज्ञ कहा है जिससे उनके वैयाकरण, मींमासक तथा नैयायिक होने का पता चलता है। कवि होने के नाते साहित्यशास्त्र का परिचय तो उन्हें था ही। उनकी कृतियों से पता चलता है कि वह वेदान्त से भी पूर्ण परिचित थे। वेदान्त के विवर्तवाद का उन्होंने उल्लेख किया है। इन शास्त्रें के अतिरिक्त उन्हें निरुक्त, तन्त्र, जातक, धर्म, शास्त्र, राजनीति, कामसूत्र तथा नाट्यशास्त्र का भी ज्ञान था। वेदत्रयी का उन्होंने उल्लेख किया है तथा यजर्वेद के एक मन्त्र का उद्धरण भी दिया है। वाल्मीकि रामायण तथा कालिदास की कृतियों का भी उन्होंने अध्ययन किया था। इन दोनों ही कवियों का प्रभाव भवभूति पर स्पष्ट रूप में प्रतीत होता है।

भवभूति के नाटकों की प्रस्तावना से सूचित होता है कि भवभूति को अपने जीवनकाल में अपनी अपनी रचनाओं से कोई विशेष ख्याति प्राप्त नही हुई है। उत्तरराम चरित उनकी उत्कृष्ट रचना मानी जाती है, उसमें भी उन्होंने अपने कटु आलोचकों का कुछ संकेत किया है। किन्तु उनकी मृत्यु के पश्चात शनै: शनै: उनके प्रशंसकों की संख्या बढ़ने लगी और कुछ काल के पश्चात भवभूति को कालिदास से बढ़कर माना जाने लगा। वर्तमान काल में भवभूति को कालिदास के समान ही विश्व का एक महान कवि माना जाता है।

भवभूति के पूर्वज उच्चकोटि के विद्वान थे। स्वंय भवभूति भी अपनी विद्वता के लिए प्रसिद्ध थे। मालतीमाधव के एक श्लोक के अनुसार वे वेद, उपनिषद, सांख्य, योग तथा साहित्य के परम ज्ञाता थे।अपने नाटकों में उन्होंने अपने आपको **पदवाक्यप्रमाणज्ञ:**कहा है, जिससे प्रतीत होता है कि वे व्याकरण, न्याय तथा मीमांसा के पूर्ण ज्ञाता थे। भवभूति की इस ज्ञानराशि का परिचय हमें उनकी रचनाओं में अनेक स्थानों पर मिलता है। उत्तररामचरित **'भद्रा ह्लेषां वाचि लक्ष्मी निर्षिक्ता'** श्लोक से उनके वेद ज्ञान का, **'अन्धतामिसत्रा ह्लसूर्या नाम ते लोका:'** से उपनिषद ज्ञान का, अनेक स्थानों पर विवर्तवाद के निर्देश से वेदान्त ज्ञान का न्यायशास्त्र ज्ञान का तथा प्रथम अङ्क में अर्थवाद शब्द के प्रयोग से उनके मीमांसा ज्ञान का परिचय प्रकट होता है।

1.3.1 भवभूति का समय

भवभूति का समय निर्धारित करने में विशेष कठिनाई नहीं हैं । कुछ तथ्यों के आधार पर उसकी पूर्व सीमा और अपर सीमा निर्धारित की जा सकती हैं।

पूर्वसीमा और अपर सीमा- बाण ने ६०६ से ६४८ ई० के लगभग हर्षचरित के आरम्भ में अपने पूर्ववर्ती प्रसिद्ध कवियों और नाटककारों का उल्लेख किया है, किन्तु उसमे भवभूति का उल्लेख नही है। अत: वह बाण का परवर्ती कवि सिद्ध होता है। उसका समय ६५०ई० पूर्व नही रखा जा सकता है। कल्हण ने राजतरंगिणी में राजा यशोवर्मा को भवभूति और वाक्पतिराज का आश्रयदाता बताया है।

कविवार्कपतिराजश्रीभवभूत्यादिसेवित: ।

जितो ययौ यशोवर्मा तदगुणस्तुतिवन्दिताम् ।।(राजतरंगिणी)

वाक्पतिराज ने गउडवहो (गौडवधः) में भवभूति की प्रशंसा में प्राकृत में एक पद्य लिखा है (गउडवहो, पद्य सं० ७६६) । इसका संस्कृत रूपान्तर इस प्रकार है ।

भवभूतिजलनिधिनिर्गतकाव्यामृतरसकणा इव स्फुरन्ति ।

यस्य विशेषा श्रद्यापि विकटेषु कथानिवेशेषु ।।

वाक्पतिराज ने गउडवहो (पद्य ८२७-८३१) में यशोवर्मा के राज्यकाल में एक खग्रास सूर्यग्रहण का उल्लेख किया है। डॉ० याकोबी ने इस सूर्यग्रहण का समय १४ अगस्त ७३३ ई० निकाला है। अतः सिद्ध होता है कि वाक्पतिराज ७३३ ई० में यशोवर्मा का आश्रित कवि था और उस समय तक भवभूति की कीति फैल चुकी थी और वह उसका ज्येष्ठ समकालीन आश्रित कवि था । वाक्पतिराज संभवतः लगभग ७३० ई० से ७५० ई० या ७५३ ई० तक यशोवर्मा का आश्रितकवि रहा। गउडवहो का रचनाकाल ७४० ई० के लगभग माना जाता है। यदि ७३३ ई० में भवभूति की आयु लगभग ५० वर्ष मानी जाए तो उसका जन्म- समय ६८३ ई० या ६८० ई० मानना उचित होगा। यदि उसकी आयु ७० या ८० वर्ष मानी जाए तो उसका अन्तकाल ७५० या ७६० ई० के ग) से लगभग होगा। इस प्रकार भवभूति का समय लगभग ६८० ई० से ७५० ई० तक उल्लेख मानना उचित है।राजशेखर ने तो बालरामायण में अपने आप को भवभूति का अवतार माना है। राजशेखर का समय ९ वीं शती का अन्त तथा १० वीं शती का आरम्भ है। बाण ने अपने हर्षचरित के आरम्भ में कालिदास, भास, सुबन्धु इत्यादि का नाम तो लिया है परन्तु भवभूति के नाम का निर्देश नही किया। अत: भवभूति का समय बाण के पश्चात ही रहा होगा।

स्वयं आकलन कीजिए –

अभ्यास प्रश्न 1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए-

1. भवभूति के पिता का नाम क्या था ?
2. भवभूति के गुरु का नाम क्या था ?
3. भवभूति का समय क्या माना गया है ?
4. भवभूति के पूर्वज किस शाखा के अनुयायी थे ?

5. व्याकरण, न्याय और मीमांसा के ज्ञाता होने के कारण भवभूति किस संज्ञा से प्रसिद्ध थे ?

1.4 भवभूति की प्रकृति

भवभूति प्रकृति से गम्भीर तथा स्वाभिमानी थे। अनेक स्थानों पर तो उनका स्वाभिमान आत्मश्लाघा की कोटि तक पहुँचता प्रतीत होता है। यद्यपि काव्यों (रूपकों) में वीर, श्रृंगार तथा करुण रस प्रमुख रूप से वर्णित है परन्तु उन्हें सफलता करुण रस के वर्णन में ही मिली है। सम्भवतः उनकी गम्भीर प्रकृति अनुकूल होने के कारण उनका मन करुण प्रसंगों में ही अधिक रमता था। उनके नाटकों में विदूषकों का अभाव भी इस बात का प्रमाण है कि उनकी गम्भीर प्रकृति हास्य के अनुकूल नहीं थी। उनके नाटकों में हास्य का प्रायः अभाव है। एक दो स्थानों पर ही हास्य के कुछ छींटे पड़े गए हैं अन्यथा काव्य गम्भीरता लिए हुए ही चलता। इसी गम्भीरता के कारण ही उन्हें करुण रस के अमर कवि के रूप में प्रसिद्धि भी प्राप्त हुई तथा '**उत्तरेरामचरिते भवभूतिर्विशिष्यते**' अर्थात् उत्तररामचरित में भवभूति (कालिदास के भी) आगे बढ़ गये हैं जैसी सूक्तियाँ प्रचलित हुई।

भवभूति बड़े स्वाभिमानी थे। उक्तियों से पता चलता है कि उन्हें अपने जीवन काल में (कम से कम प्रारम्भिक जीवन में) उतना सम्मान नहीं मिला था जितना वह चाहते थे। उस समय सम्भवतः कालिदास की कीर्ति ही सर्वत्र छायी हुई थी जिसके कारण नाटककार के रूप में भवभूति को प्रतिष्ठा नहीं मिल सकी थी। इसी अवस्था का बोध उनकी निम्न उक्ति से होता है-

ये नाम केचिदिह नः प्रथयेन्त्यवज्ञां जानन्ति ते किमरि तान् प्रति नैष यत्नः।
उत्पस्यते मम तु कोऽपि समानधर्मा कालो ह्ययं निरुवधिर्विपुला च पृथ्वी।।

मालतीमाधव नामक प्रकरण में उनकी इस उक्ति से पता चलता है कि उन्हें अपनी प्रथम कृति महावीरचरित पर कटु आलोचना का सामना करना पड़ा होगा, जिन्हें सुनकर भवभूति के स्वाभिमान को ठेस पहुँची होगी तथा उसकी की परिणति पूर्वोद्धृत श्लोक में वर्णित आक्रोश के रूप में हुई होगी। परन्तु उत्तररामचरित में भवभूति पर्याप्त आश्वस्त प्रतीत होते हैं। उन्हें स्वयं को वश्या वाक् या वाग्वश्य (वाक् सरस्वती है वश में जिसके) कहा है। '**सर्वथा व्यवर्त्तव्य कुतो ह्यवचनीयता। यथा स्त्रीणां तथा वाचां साधुत्वे दुर्जनो जनः**' इस उक्ति से यह भी सिद्ध होता है कि आलोचकों की विशेष चिन्ता न करते हुए वह अपने कार्य (नाटक लेखन) में तत्पर रहे। तृतीय अङ्क में वर्णित '**अहो सम्विधानकम्--**' जैसी आत्मप्रशंसापरक उक्तियाँ अनेक स्थानों पर प्रयुक्त हुई है। चतुर्थ अङ्क में वर्णित '**महती पुनस्तस्मिन् भगवतो वाल्मीकेरास्था**' पञ्चम अङ्क में वर्णित '**हन्त! मिश्रीकृतक्रमो रसो वर्तते**' तथा सप्तम अङ्क में '**पदिदमस्माभिगार्षेण चक्षुषा समुद्वीक्ष्य पावन वचनामृतं**

करुणाद्भुतरसं च किंचिदुपनिबद्धम्। तत्र काव्यगौरवादवघातव्यम् आदि उक्तियों में प्रकारान्तर से कवि अपनी प्रशंसा कर रहा है। इन उक्तियों से यद्यपि आत्म प्रशंसा झलकती है, परन्तु इन्हें गर्वोक्तियाँ नहीं कहा जा सकता। उत्तररामचरित की रस प्रवणता इन उक्तियों की यथार्थता की साक्षी है- **कारुण्यं भवभूतिरेव तनुते-**

भवभूति का करुण रस में वही स्थान है, जो श्रृङ्गार-रस में कालिदास का। दोनों ही नाटककार के रूप में प्रतिस्पर्धी महाकवि हैं। भवभूति में बहिर्दृष्टि के साथ ही सूक्ष्म अन्तर्दृष्टि भी है। मानव की अन्तः स्थिति का जितना सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक विश्लेषण भवभूति ने किया है, वह अन्यत्र दुर्लभ है। जयत् की नश्वरता को देखकर भवभूति के कारुण्य की धारा बह निकलती थी। उन्होंने राम-कथा, मुख्यतया सीता-परित्याग, को लेकर अपनी भावनाओं को मूर्त रूप दिया है। उनकी वाणी में इतना बल है कि वे वृक्ष-वनस्पति ही नहीं, अपितु पर्वतोंको भी रुला देने की क्षमता रखते हैं। नीरस से नीरस व्यक्ति भी उत्तररामचरित को एक बार पढ़कर अवश्य ही आँसू गिरा देगा । मवभूति में भावों की कोमलता, हृदय-शिता, तादात्म्यानुभूति और संवेदनशीलता है, अतएव कवियों ने 'कारुण्यं भवभूतिरेव तनुते', कहकर भवभूति का यशोगान किया है। यहाँ पर करुण रस के कुछ अत्यन्त मार्मिक प्रसंग प्रस्तुत किए जा रहे हैं।

रावण ने छद्म-नीति का प्रयोग करके सीता का हरण किया। उनके वियोग में राम की वह दयनीय स्थिति थी कि पत्थर भी रो देते थे और वज्र का भी हृदय फट जाता था।

अर्थदंरक्षोभिःकनकहरिणछद्मविधिना
तथा वृत्तं पापैर्व्यथयति यथा क्षालितमपि ।
जनस्थाने शून्ये विकलकरणैरार्यचरितै-
रपि ग्रावा रोदित्यपि दलति वज्ज्रस्य हृदयम् ।।(उत्तर० १-२८)

सीता-परित्याग से राम के हृदय की वही अवस्था थी, जो पुटपाक में किसी धातु की होती है।

अनिर्भींन्नों गभीरत्वादन्तर्गुढघनव्यथः ।
पुटपाकप्रतीकाशो रामस्य करुणो रसः ।।(उत्तर० ३-१)

राम ने गर्भिणी सीता का परित्याग किया था। वह भयभीत बाल-मृगी के तुल्य चंचल नेत्र तथा सुकुमार अंगों वाली थी। राम को विश्वास है कि जंगलीहिंसक जन्तु उसे अवश्य खा गए होंगे ।

त्रस्तैकहायनकुरङ्गविलोलदृष्टे स्तस्याः परिस्फुरितगर्भभरालसायाः ।
ज्योत्स्नामयोव मृदुबालमृणालकल्पा क्रव्याद्भिरङ्गलतिका नियतं विलुप्ता।

अतः इन उक्तियों में कवि का मिथ्याभिमान नहीं, सच्चा स्वाभिमान झलकता है जिसके बल पर वह अपने जीवनकाल में आलोचकों का सामना कर सके तथा निरन्तर लिखते रहे।

स्वयं आकलन कीजिए –

अभ्यास प्रश्न 2

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए –

1. भवभूति की किस रस में प्रधानता है?
2. भवभूति की रचना में किसका अभाव है?
3. भवभूति का प्रकरण ग्रन्थ है?
4. भवभूति के कितने रूपक प्राप्त होते है?
5. भवभूति की राम कथा पर आधारित ग्रन्थ हैं ?

1.5 सारांश

इस इकाई में भवभूति के जन्मस्थान, काल निर्धारण तथा भवभूति की प्रकृति का वर्णन किया गया है। जिसके अन्तर्गत भवभूति के पूर्वज दक्षिण देश के पद्मपुर नामक नगर में रहते थे। उनका सम्बन्ध कश्यपवंशीय ब्रह्मण परिवार से बताया गया है। इनके पूर्वज कृष्णयजुर्वेद की तैतिरीय शाखा के अनुयायी प्रतीत होते हैं। इन्होंने अपनी रचनाओं में प्रकृति का विशेष वर्णन किया है। इनकी रचनाओं में वीर, श्रृङ्गार तथा करुण रस प्रमुख रूप से वर्णित है।

1.6 कठिन शब्दावली

अवज्ञा=अवहेलना, तिरस्कार, अनादर।
आत्मश्लाघा=अपनी प्रशंसा।
सम्विधानकम्=रचना वैचित्र्य।
परिपोष=आगे बढ़ाना।
सामिष=माँस सहित।
विज्ञातुम्=जानना।
सविता=सूर्य।
व्यतिषजति=परस्पर मिलाना।
विवर्त=किसी वस्तु की भ्रम के कारण अन्य रूप में प्रतीति।

1.7 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1 1. नीलकण्ठ। 2. ज्ञाननिधि। 3. सातवीं शताब्दी 4.कृष्णयजुर्वेद की तैत्तिरीयशाखा। 5. पदवाक्यप्रमाणज्ञ:

अभ्यास प्रश्न 2 1. करुण रस 2. विदूषक 3. मालतीमाधव 4. तीन 5. दो (उत्तररामचरित, महावीरचरित)

1.8 सहायक ग्रन्थ

1. उत्तररामचरितम्, महाकवि भवभूति,   चौखम्बा संस्कृत सीरीज वाराणसी।
2. उत्तररामचरितम्, महाकवि भवभूति,व्याख्याकार आनन्दस्वरूप, सम्पादक: जनार्दनशास्त्रीपाण्डेयमोतीलाल बनारसीदास दिल्ली, वाराणसी।
3. संस्कृत साहित्य का इतिहास, बलदेव उपाध्याय, शारदा निकेतन वाराणसी।
4. संस्कृत साहित्य कोश, राजवंश सहाय हीरा, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

1.9 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. भवभूति का परिचय देते हुए उनके कर्त्तृत्व पर प्रकाश डालिये।
2. भवभूति की प्रकृति पर प्रकाश डालिये।

द्वितीय अध्याय
इकाई-2
भवभूति की कृतियाँ

संरचना

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 भवभूति की कृतियाँ
- स्वयं आकलन अभ्यास प्रश्न-1

2.4 नाटकों की संक्षिप्त कथा
- स्वयं आकलन अभ्यास प्रश्न-2

2.5 कथा स्त्रोत तथा भवभूति कृत परिवर्तन
- स्वयं आकलन अभ्यास प्रश्न-3

2.6 सारांश
2.7 कठिन शब्दावली
2.8 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर
2.9 सहायक ग्रन्थ
2.10 अभ्यास के लिए प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों, इस इकाई के अन्तर्गत भवभूति के दो नाटकों तथा एक प्रकरण का वर्णन किया जायेगा। जिसके अन्तर्गत नाटकों में महावीरचरित तथा उत्तररामचरित हैं जबकि प्रकरण ग्रन्थ मालतीमाधव है। महावीरचरित और उत्तररामचरित दोनों रामायण आधारित नाटक हैं। इस इकाई में भवभूति की रचनाओं की संक्षिप्त कथा वर्णित की गई है तथा इन कथाओं के मूल स्रोत को भी वर्णित किया जायेगा।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पचात् आप जानने में सक्षम होंगे-
- भवभूति की कृतियों का परिचय।
- भवभूति के नाटकों की संक्षिप्त कथा।
- भवभूति के कथा स्रोत ।

2.3 भवभूति की कृतियाँ

भवभूति के तीन रूपक प्राप्त होते हैं। उनमें दो नाटक तथा एक प्रकरण हैं। महावीरचरित तथा उत्तररामचरित दोनों नाटकों का विषय राम कथा है। महावीरचरित में रामजन्म से लेकर राम-रावण युद्ध के पश्चात् राज्याभिषेक तक की घटनाओं को नाटक का आधार बनाया गया है। इसमें कवि ने अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए न केवल कुछ घटनाओं को परिवर्तित रूप में प्रस्तुत किया है, कुछ नवीन पात्रें की सृष्टि भी की है तथा कुछ चरित्र को भिन्न रूप में प्रस्तुत किया है। कथा में कुछ राजनैतिक दाव-पेचों की सृष्टि माल्यवान् नामक पात्र के माध्यम से की गई है तथा इस प्रकार कुटिलता तथा सरलता का संघर्ष दिखाने का प्रयत्न किया गया है। राम को महावीर के रूप से चित्रित किया गया है। इसी कारण नाटक का नाम भी महावीरचरित रखा गया है। उत्तररामचरित में राज्याभिषेक के बाद की घटनाओं का वर्णन है। इस नाटक का अगले अनुच्छेद में विस्तार से वर्णन किया जायेगा।

भवभूति की तीसरी कृति (जो कालक्रम से दूसरी मानी जाती है) मालतीमाधव नामक प्रकरण है जिसमें 10 अङ्कों में माधव तथा मालती के प्रेम का वर्णन है। अवान्तर कथा के रूप में इसमें मकरन्द और मदयन्तिका के प्रणय का वर्णन भी है। इसमें भवभूति को विशेष सफलता नहीं मिली है। माधव (नायक) की अपेक्षा नायके के मित्र मकरन्द का चरित्र अधिक प्रभावशाली हो गया है तथा सारे प्रकरण में मकरन्द का व्यक्तित्व माधव व्यक्तित्व पर छाया रहता है। फिर भी श्रृङ्गार रस के परिपोष तथा काव्यात्मकता के कारण इस कृति का नाट्यसाहित्य में महत्त्वपूर्ण स्थान है।

स्वयं आकलन कीजिए –

अभ्यास प्रश्न 1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए –

1. भवभूति की कितनी रचनाएँ हैं ?
2. भवभूति का प्रकरण ग्रन्थ क्या है ?
3. उत्तररामचरित कितने अंकों में विभक्त है ?
4. उत्तररामचरित का नायक कौन है ?
5. उत्तररामचरित की नायिका कौन है ?

2.4 नाटकों की संक्षिप्त कथा

उत्तररामचरित

उत्तररामचरित सात अङ्क का नाटक है जिसमें राम के राज्याभिषेक के बाद की कथा वर्णित है। इसलिये कवि ने इसका नाम उत्तररामचरित रखा है। इस नाटक के कथानक की प्रमुख घटनायें निम्नलिखित हैं-

प्रथम अङ्क

पूर्व कवियों को नमस्कार तथा वाग्देवी की वन्दना के मंगलश्लोक के पश्चात् प्रस्तावना में सूचित किया गया है कि दशरथ की पुत्री शान्ता के पति ऋष्यश्रृंग के ग्यारह वर्ष में समाप्त होने वाले यज्ञ में भाग लेने के लिए विशिष्ट की देखरेख में राम की सभी माताएँ अरुन्धती के साथ वन में गई हुई हैं, साथ ही इस बात का संकेत भी दिया है कि प्रजा में सीता के विषय में प्रवाद फैला हुआ है। राज्याभिषेक के बाद जनक भी विदेह लौट गए हैं तथा जनक के जाने से दुःखी सीता के मनोविनोद के लिए राम धर्मासन से उठकर वासगृह (अन्तःपुर) में प्रवेश कर रहे हैं। इसी समय ऋष्यश्रृंग के आश्रम से महर्षि अष्टावक्र पधारते हैं तथा राम की प्रजारंजन तथा सीता के दोहद की पूर्ति के लिए वशिष्ठ और अरुन्धती का सन्देश सुनाते हैं। उधर लक्ष्मण सूचना देते हैं कि चित्रकार ने राम का चित्र चित्रित कर दिया है। राम सीता सहित लक्ष्मण के साथ चित्र देखने के लिए चल पड़ते हैं। चित्रशाला में राम के विगत जीवन की सभी प्रमुख घटनायें चित्रित की गई हैं। एक चित्र में राम को जृम्भाकस्त्रों की प्राप्ति का दृश्य वर्णित है। उन्हें देखते हुए राम सीता से उन्हें नमस्कार करवाते हैं जिससे सीता की सन्तान को भी उनकी प्राप्ति हो जाए। चित्रें में दण्डकारण्य के दृश्यों को देखकर सीता पुनः उन्हें देखने के लिए उत्कण्ठित होती है तथा राम से पुनः दण्डकारण्य देखने की इच्छा प्रकट करती है। इस दोहद की पूर्ति के लिए राम, लक्ष्मण को रथ तैयार करने की आज्ञा देते हैं। इसी बीच चित्र-दर्शन से श्रान्त सीता, राम जी की भुजा का तकिया लगाकर सो जाती है। सीता के सोने के पश्चात् लोकवृत्तान्त को जानने के लिए नियुक्त किया गया। दुर्मुख नामक गुप्तचर सूचना देता है कि प्रजाओं में सीता-विषयक प्रवाद फैला हुआ है, यह सूचना राम के कान में दी गई है तथा कवि ने इसका उल्लेख नहीं किया है। इस समाचार को सुनकर प्रजारंजन के लिए राम सीता के परित्याग का निश्चय कर लेते हैं तथा सीता-परित्याग रूप विपत्ति के कारण उनका हृदय अत्यन्त ही खिन्न हो जाता है। प्रजारंजन तथा पत्नी प्रेम के संघर्ष में पति राम पर राजा राम की विजय होती है तथा वह लक्ष्मण के पास सीता को वन में छोड़ने का आदेश भेज देते हैं। सीता के भावी वियोग से दुःखी राम राक्षसों से उत्पात का समाचार सुनकर पुनः कर्त्तव्य पालन के लिए शत्रुघ्न को भेजने का निश्चय करके सीता को पृथ्वी माता को सौंपकर बाहर चले जाते हैं। यह अङ्क चित्रदर्शन अङ्क के रूप में प्रसिद्ध है।

द्वितीय अङ्क

दूसरे अङ्क की घटनायें बारह वर्ष के पश्चात् प्रारम्भ होती है। स्थान दण्डकारण्य है। इस अङ्क के प्रारम्भ में प्रयुक्त विष्कम्भक से पता चलता है कि वाल्मीकि के आश्रम में कुश और लव नामक दो मेधावी छात्र हैं जिनके साथ पढ़ने में आत्रेयी नहीं चल पाती। इसलिये वह अध्ययन के लिये दण्डकारण्य में आई है। आत्रेयी ने वासन्ती को यह सुचना भी दी है कि वाल्मीकि ने रामायण की रचना आरम्भ कर दी है तथा राम की स्वर्ण मूर्ति को सहधर्मचारिणी के रूप में प्रतिष्ठित करके अश्वमेध यज्ञ प्रारम्भ कर दिया है। अश्वमेध

से अश्व की रक्षा के लिए लक्ष्मण के पुत्र चन्द्रकेतु को नियुक्त किया गया है। इसी बीच एक ब्राह्मण के पुत्र की अकाल मृत्यु हो जाती है तथा आकाशवाणी से पता चलता है कि इस मृत्यु का कारण शम्बूक नामक शूद्र का तप करना है। राम कर्त्तव्यपालन के रूप में शम्बूक का वध करने के लिए दण्डकारण्य में ही आए हुए हैं। मुख्य अंश के प्रारम्भ में राम प्रविष्ट होते हैं तथा अपने कर्त्तव्य का पालन करते हुए शूद्र मुनि शम्बूक पर तलवार चलाते हैं। राम के हाथ से मरने पर शम्बूक तुरन्त मुक्त हो जाता है तथा इस उपकार के लिए राम की स्तुति करता है। फिर वह राम को दण्डकारण्य की सैर कराता है। दण्डकारण्य को देखकर राम को सीता का स्मरण हो आता है जिससे वह शोकाभिभूत हो जाते हैं। अन्त में शम्बूक उन्हें सूचित करता है कि अगस्त्यपत्नी लोपामुद्रा राम की प्रतीक्षा कर रही है। राम उनके दर्शन के लिए चल पड़ते हैं। इस अङ्क का नाम पंचवटी प्रवेश है।

तृतीय अङ्क

इस अङ्क के प्रारम्भ में तमसा तथा मुरला नामक नदियों के वार्तालाप से विदित होता है कि राम उधर आ रहे हैं तथा भगवती भागीरथी के प्रभाव से अदृश्य हुई सीता भी सूर्योपासना के लिए वहाँ आई हुई है। इन्हीं के वार्तालाप से यह भी विदित होता है कि लक्ष्मण द्वारा वन में परित्यक्ता सीता ने प्रसववेदना से व्याकुल होकर अपने आप को गंगा को अर्पण कर दिया था। वहीं उसने कुश तथा लव नामक दो बालकों को जन्म दिया है तथा गंगा और वसुन्धरा के समझाने पर दूध छोड़ने की अवस्था में दोनो बच्चों को वाल्मीकि के आश्रम में भेज दिया। गंगा सीता को लेकर गोदावरी से मिलने के बहाने से पंचवटी से इसीलिये आई है कि कहीं पूर्वानुभूत दृश्यों को देखकर पुननर्वा अवीभूत शोक के कारण राम का अनिष्ट न हो जाये।

मुख्य अङ्क में एक ओर राम तथादूसरी ओर सीता (अदृश्य रूप में) प्रवेश करते हैं। पुराने स्थानों को देखकर राम को सीता का स्मरण हो जाता है तथा वह अत्यधिक शोकाभिभूत हो जाते हैं। सीता की सखी वासन्ती की उक्तियों से यह शोक और भी प्रबुद्ध हो जाता है तथा इसी शोक में राम मूचिर्छत हो जाते हैं। उनकी यह मूच्र्छा सीता के स्पर्श से ही दूर हो जाती है। राम की इस अवस्था को स्वयं अपनी आँखों से देखकर सीता की ग्लानि दूर हो जाती है तथा उसे विश्वास हो जाता है कि राम ने उसी हृदय से चाहते हुए भी प्रजानुरंजन के लिए छोड़ने का निश्चय किया था। इस अङ्क में करुण रस का जैसा परिपाक हुआ है वैसा सारे संस्कृत साहित्य में अन्यत्र नहीं हुआ है। यहाँ सीता अदृश्य होने के कारण छाया के रूप में विद्यमान है, अतः इस अङ्क को छायांकन कहते हैं।

चतुर्थ अङ्क

इस अङ्क के विष्कम्भक में दाण्डायन तथा सौधातकि के वार्तालाप से पता चलता है कि विशिष्ठ मुनि अरुन्धती तथा कौशल्या आदि दशरथ की रानियों के साथ वाल्मीकि आश्रम में आ गए हैं तथा यहीं पर जनक भी पधारे हैं। इसी वार्तालाप से यह भी पता चलता है कि वशिष्ठ मुनि सामिष (माँस सहित) मधुपर्क स्वीकार करते हैं तथा जनक

निरामिष। कवि ने दण्डायन के माध्यम से इस विषय में शास्त्र का प्रमाण भी उद्धृत किया है। परन्तु सौधातकि ने विशिष्ठ को व्याघ्र ही कहा है क्योंकि उनके लिए बछिया की बलि दी गई थी। सौधातकि को मुनियों का आना इसलिए अच्छा लगता है क्योंकि उनके आने पर छुट्टी मिल जाती है।

मुख्य अङ्क में जनक प्रवेश करते हैं। उन्हें सीता के निर्वासन से अत्यधिक दुःख हुआ है। कौशल्या उनसे मिलने में कुछ हिचकती है परन्तु अरुन्धती तथा कञ्चुकी के कहने से वह उनके पास चली जाती है। कौशल्या की अवस्था को देखकर जनक को दुःख होता है परन्तु राम के व्यवहार पर उन्हें क्रोध आता है। कौशल्या तथा अरुन्धती की प्रार्थना पर वह शान्त हो जाते हैं तथा राम को क्षमा कर देते हैं। उधर बालकों के साथ खेलता हुआ लव उधर आ निकलता है। उसकी रामसदृश आकृति को देखकर कौशल्या का ध्यान उधर जाता है। अन्त में जनक भी उसमें राम तथा सीता का साम्य देखते हैं, परन्तु उन्हें वास्तविकता का पता नहीं चल पाता। लव से वार्तालाप के समय कुछ बालक आते हैं और उसे कुछ दिखाने के लिए ले जाते हैं। अश्वरक्षकों की दर्पोक्ति सुनकर लव को क्रोध आ जाता है। वह अपने साथियों से घोड़े को घेरने के लिए कहता है किन्तु वह रक्षकों की घुड़कियों से डरकर भाग जाते हैं परन्तु लव युद्ध के लिये तैयार हो जाता है। कौशल्या और जनक के मिलने के कारण इस अङ्क को कौशल्याजनकयोगांक कहते है।

पंचम अङ्क

इस अङ्क में लव से पराजित सेना को सान्त्वना देने तथा बचाने के लिए आए हुए चन्द्रकेतु के साथ लव से वार्तालाप का वर्णन है। चन्द्रकेतु के सारथि को भी लव में राम का सादृश्य देखकर आश्चर्य होता है। इधर चन्द्रकेतु को भी उसमें अकारण स्नेह हो जाता है। चन्द्रकेतु के आह्वान पर लव उसकी ओर चलता है तो सेना उसका पीछा करने लगती है। इस सेना को वह जृम्भाकस्त्रों का प्रयोग करके सुला देता है। लव के पास जृम्भाकस्त्रों की सिद्धि देखकर सुमंत को और भी आश्चर्य होता है। लव और चन्द्रकेतु दोनों एक-दूसरे की ओर आकृष्ट होते हैं परन्तु लव राम की अधिक प्रशंसा से पुनः उत्तेजित हो जाता है तथा राम के दूषणों की ओर संकेत करता है। इससे वातावरण में पुनः कटुता आ जाती है तथा लव और चन्द्रकेतु दोनों युद्ध के लिए सन्नद्ध हो जाते हैं। प्रस्तुत अङ्क को कुमार विक्रमांक कहते हैं।

षष्ठ अङ्क

इस अङ्क के आरम्भ में विष्कम्भक है जिसमें विद्याधर तथा विद्याधरी के वार्तालाप के माध्यम से लव तथा चन्द्रकेतु के युद्ध में प्रयुक्त आग्नेय, वारण तथा वायव्य अस्त्रें के प्रयोग की सूचना दी गई है। अन्त में यह भी सूचित किया गया है कि शम्बूक के वध से प्रतिनिर्वृत राम वहीं पर आ गए हैं जिससे चन्द्रकेतु तथा लव का युद्ध बन्द हो गया है।

मुख्य अङ्क में राम चन्द्रकेतु का आलिंगन करके कुशल समाचार पूछते हैं। चन्द्रकेतु उनका परिचय लव से कराता है। लव के देखकर राम भी आश्चर्य-चकित रह जाते हैं। उनके हृदय से सहसा वात्सल्य उमड़ पड़ता है। लव द्वारा प्रयुक्त जृम्भाकस्त्र की बात सुनकर उन्हें और भी आश्चर्य होता है। राम का परिचय जानकर लव उनसे क्षमा माँगते हैं। परन्तु राम उसके कार्य को वीरोचित ही बताते हैं। इसी बीच युद्ध की बात सुनकर कुश भी वहाँ आ जाता है। लव और कुश में अपना और सीता का साम्य देखकर तथा उनके हाथों में राज-चिन्ह देखकर राम विस्मित होते हैं। लव और कुश उन्हें रामायण के कुछ अंश सुनाते हैं जिन्हें सुनकर राम और भी शोक-सन्तप्त हो जाते हैं, इसी बीच उन्हें सूचना मिलती है कि बालकों के युद्ध की बात को सुनकर अरुन्धती, वशिष्ठ, वाल्मीकि, जनक और कौशल्या भी उधर ही आ रहे हैं। इस समाचार से राम को और भी दुःख तथा भय होने लगता है क्योंकि सीता निर्वासन रूपी कुकृत्य को करके वह जनक आदि के सामने जाने से सकुचाते हैं। इस अङ्क को कुमार प्रत्यभिज्ञान कहा जाता है।

सप्तम अङ्क

यह अङ्क गर्भाघङ्क के रूप में प्रस्तुत किया गया है। नाटक के अन्दर दूसरा नाटक गर्भाङ्क् कहलाता है। इस गर्भाङ्क् की प्रस्तावना में सूचना दी गई है कि लक्ष्मण ने वाल्मीकि के अनुरोध पर गंगा के तट पर एक प्रेक्षागृह की व्यवस्था की है जिसमें सभी वर्गों के बैठने की व्यवस्था है। पृथ्वी की पुत्री सीता लक्ष्मण द्वारा वन में छोड़ी जाने के बाद प्रसव-काल में अपने आप को गंगा को अर्पित करती है, इस उक्ति के साथ प्रस्तावना समाप्त होती है।

इस घटना को वास्तविक समझकर राम व्याकुल हो जाते हैं और लक्ष्मण उन्हें यह नाटक है कहकर सान्त्वना देते हैं। तदनन्तर एक-एक बालक को गोदी में लिए हुए गंगा तथा पृथ्वी, सीता को सहारा देती है। इस प्रसन्नता के समाचार से सीता मूर्च्छित हो जाती है। इस दुःख से राम भी मूर्च्छित हो जाते हैं। पृथ्वी तथा गंगा सीता को अपना परिचय देती हैं तथा पुत्रें के पालन के लिए जीवित रहने को सहमत कर लेती हैं। उसी समय जृम्भकास्त्र उपस्थित होते हैं क्योंकि चित्रदर्शन के समय राम ने उन्हें सीता की सन्तति के पास उपस्थित होने की आज्ञा दी थी। बालकों को संस्कार के लिए वाल्मीकि के आश्रम में रखने का निश्चय करके दोनोचली जाती हैं। इससे राम पुनः मूर्च्छित हो जाते हैं। तभी गंगा से सीता, गंगा तथा पृथ्वी निकलती हैं। राम की मूर्च्छा से सब चिन्तित होते हैं। अन्त में अरुन्धती की आज्ञा से सीता राम का स्पर्श करती है जिससे राम को तुरन्त चेतना आ जाती है। अरुन्धती सीता के पतिव्रत्य की प्रशंसा करके राम द्वारा उसके ग्रहण के विषय में प्रजा का मत जानना चाहती है। लक्ष्मण सूचित करते हैं कि प्रजा के सभी लोग सती शिरोमणि सीता को प्रणाम कर रहे हैं। अरुन्धती की आज्ञा पर राम सीता को स्वीकार करते हैं तथा लव कुश से उनका समागम होता है। इसी बीच लवणासुर को

मारने वाले शत्रुघ्न भी यहाँ आ जाते हैं तथा भरतवाक्य के साथ नाटक की समाप्ति होती है। उत्तररामचरित का यह अङ्क सम्मेलनांक कहलाता है।

स्वयं आकलन कीजिये-

अभ्यास प्रश्न 2

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिये-

1. उत्तररामचरित के प्रथम अङ्क का नाम क्या है?
2. उत्तररामचरित का गर्भांक किसे माना है?
3. उत्तररामचरित के तृतीय अङ्क का नाम क्या है?
4. उत्तररामचरित में सीता की प्रिय सखी कौन थी?
5. उत्तररामचरित में किस रस की प्रधानता है?

2.5 कथा स्रोत तथा भवभूति कृत परिवर्तन

ऊपर के कथानक से स्पष्ट है कि भवभूति ने वाल्मीकि द्वारा निर्दिष्ट कथा को आधार मानते हुए भी उसमें पर्याप्त परिवर्तन किए हैं। योंतो रामकथा महाभारत, दशरथ-जातक, जैन ग्रन्थ तथा पुराणों में उपलब्ध होती है परन्तु भवभूति के उपजीव्य वाल्मीकि ही रहे हैं। पद्मपुराण की कथा भवभूति की कथा से पर्याप्त मिलती है। परन्तु इस पुराण के रचना-काल काल के सम्बन्ध में पर्याप्त मतभेद हैं। रामायण की कथा को आधार मानकर भी भवभूति ने उसमें पर्याप्त परिवर्तन किए हैं। यह परिवर्तन निम्नलिखित हैं-

प्रथम अङ्क में चित्रशाला के दृश्य की योजना मौलिक है। दण्डकारण्य के दृश्यों को देखकर सीता उन्हें फिर से देखना चाहती है। अतः सीता निर्वासन का कार्य कुछ सरल हो जाता है। इसका संयोग श्रृंगार भावी वियोग को और भी कष्टकर बना देता है।

दूसरे अङ्क की शम्बूक घटना रामायण से ली गई है परन्तु कवि ने इसका स्थान दण्डकारण्य रखा है। पंचवटी परिसर में पहुँच जाते हैं तथा घटनाओं को याद करके और दुःखी होते है।

तीसरे अङ्क में छाया सीता की कल्पना भी एकदम मौलिक है। राम तथा सीता के मिलन से पूर्व सीता के मन की परितुष्टि आवश्यक थी। कवि ने सीता को प्रत्यक्ष ही राम की मानसिक स्थिति से परिचित करा दिया है। सीता को विश्वास हो जाता है कि राम हृदय से सीता को अब भी चाहते हैं, परन्तु लोकरंजन के लिए ही उन्हें सीता को छोड़ना पड़ा है। इस अङ्क में वासन्ती की कल्पना भी नवीन तथा साभिप्राय है। इस परिस्थिति में राम के साथ किसी का होना नितान्त आवश्यक था।

चौथे अङ्क में वशिष्ठ, अरुन्धती, जनक, कौशल्या आदि की वाल्मीकि के आश्रम में स्थिति नवीन कल्पना है। यहाँ जनक तथा कौशल्या के सीता-परित्यागजन्य आक्रोश को दूर कराया गया है।

पाँचवे तथा छठे अङ्क में लव तथा कुश को राम के समक्ष उपस्थित करके जृम्भकास्त्र के प्रयोग से प्रत्यभिज्ञान कार्य कराया गया है तथा राम के हृदय में अत्यन्त स्नेह जागृत कराया गया है।

अन्तिम अङ्क में गर्भाङ्क की योजना मौलिक है। इससे सीता तथा राम के पुनर्मिलन में स्वाभाविकता आ गई है। नाटक देखने के बहाने से वहाँ जनता को उपस्थित किया गया है तथा उनकी अनुमति के बाद ही सीता स्वीकार की गई है। इसी अङ्क में सीता की माता वसुन्धरा (पृथ्वी) को भी उपस्थित किया गया है।

आवश्यकता के अनुसार भवभूति ने वासन्ती, तमसा, मुरला, दाण्डायन, सौधातकि आदि नवीन पात्रों की कल्पना भी की है।

प्रकृति को पृष्ठभूमि के रूप में चित्रित करना भी एक मौलिक कल्पना है। पूर्वानुभूत सुखों की घटनास्थलों को देखकर दुःख का नया होना स्वाभाविक बन गया है।

स्वयं आकलन कीजिये-

अभ्यास प्रश्न 3

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. उत्तररामचरित का आधार ग्रन्थ ...... है।
2. उत्तररामचरित में शम्बूक घटना ...... अङ्क में है।
3. उत्तररामचरित में सीता को छाया के रूप में .... अङ्क में प्रतिबिम्बित किया है।
4. उत्तररामचरित में जनक और कौशल्या का सीता परित्यागजन्य आक्रोश...... अङ्क में वर्णित है।
5. उत्तररामचरित में वसुन्धरा को ....अङ्क में उपस्थित किया है।

2.6 सारांश

इस इकाई में भवभूति की कृतियों का वर्णन किया गया है। इसमें भवभूति के उत्तररामचरित का विस्तार पूर्वक अध्ययन किया गया है। उत्तररामचरित के चित्रदर्शन, पंचवटीप्रवेश, छाया, कौशल्याजनकयोग, कुमारविक्रम, कुमारप्रत्यभिज्ञान और सम्मेलन नामक सातों अंकों का संक्षिप्त परिचय दिया गया है। जिससे आप अवश्य ही लाभान्वित हुए होंगे।

2.7 कठिन शब्दावली

प्रवाद - अफवाह।

दोहद - गर्भवती स्त्री की प्रबल रुचि।

सामिष - माँस सहित।

मधुपर्क

शहद का मिश्रण, एक सम्मानयुक्त उपहार जो किसी अतिथि को या कन्या के पिता के द्वार पर आ जाने पर दूल्हे को अर्पित किया जाता है।

निरामिष - माँस रहित।

2.8 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न- 1	1. तीन	2. मालतीमाधव	3. सात
	4. राम	5. सीता	
अभ्यास प्रश्न -2	1. चित्रदर्शन	2. सप्तम अङ्क	3. छायाङ्क
	4. तमसा	5. करुण रस	
अभ्यास प्रश्न- 3	1. रामायण	2. द्वितीय	3. तृतीय
	4. चतुर्थ	5. सप्तम	

2.9 सहायक ग्रन्थ

1. उत्तररामचरितम्, महाकवि भवभूति, चौखम्बा संस्कृत सीरीज वाराणसी।
2. उत्तररामचरितम्, महाकवि भवभूति,व्याख्याकार आनन्दस्वरूप, सम्पादक: जनार्दनशास्त्री पाण्डेय, मोतीलाल बनारसीदास दिल्ली, वाराणसी।
3. संस्कृत साहित्य का इतिहास, बलदेव उपाध्याय, शारदा निकेतन वाराणसी।
4. संस्कृत साहित्य कोश, राजवंश सहाय हीरा, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

2.10 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. भवभूति के कथा-स्त्रोत पर प्रकाश डालिये।
2. भवभूति की कृतियों पर प्रकाश डालिए।

तृतीय अध्याय
इकाई-3
उत्तररामचरित की नाट्यकला

संरचना

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 उत्तररामचरित की नाटकीयता

- स्वयं आकलन अभ्यास प्रश्न- 1

3.4 पात्र तथा चरित्र चित्रण

- स्वयं आकलन अभ्यास प्रश्न- 2

3.5 रस परिपाक

3.5.1 अन्य रस

3.6 उत्तररामचरित का प्रतिपाद्य

3.6.1 कुछ अन्य विशेषताएँ

3.6.2 प्रकृति चित्रण

- स्वयं आकलन अभ्यास प्रश्न- 3

3.7 सारांश

3.8 कठिन शब्दावली

3.9 स्वयं आंकलन प्रश्नों के उत्तर

3.10 सहायक ग्रन्थ

3.11 अभ्यास के लिए प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों, इस इकाई में उत्तरामचरित की नाटकीयता का अध्ययन किया जायेगा, जिसके अन्तर्गत पात्र चित्रण, भवभूति की शैली, रस परिपाक और उत्तररामचरित का प्रतिपाद्य विवेचन प्रस्तुत किया जायेगा। नाटकीयता में उत्तररामचरित की दो प्रमुख घटनाओं- राम द्वारा सीता का परित्याग तथा स्वीकृति को वर्णित किया जायेगा। इन्हीं घटनाओं को भवभूति ने उत्तररामचरित का केन्द्रबिन्दु माना है। पात्र चित्रण के अन्तर्गत उत्तररामचरित के नाटक के नायक श्रीराम तथा नायिका सीता है। श्रीराम तथा सीता दोनों ही पात्र ऐसें हैं जिनके चरित्र भारतीय इतिहास के समाज में स्थिर हो चुके हैं। भवभूति के उत्तररामचरित में करुण रस की प्रधानता हैं इसके अतिरिक्त इनकी शैली को इस इकाई में वर्णित किया जायेगा।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जानने में सक्षम होंगे-

- उत्तररामचरित की नाटकीयता।
- पात्र तथा चरित्र चित्रण।
- भवभूति की शैली।
- रस परिपाक।
- उत्तररामचरित का प्रतिपाद्य।

3.3 उत्तररामचरित की नाटकीयता

संस्कृत के साहित्यकारों ने रूपकों के तीन प्रमुख तत्त्व माने हैं। रूपकों का ही एक विशेष भेद नाटक है। इसके भी वस्तु, नेता तथा रस यह तीन प्रमुख तत्त्व होते हैं। नाटक के इतिवृत को ही वस्तु या कथावस्तु कहा जाता है। किसी भी कथा को नाटककार अपनी आवश्यकतानुसार संघटित करता है। इसी को वस्तु-योजना अथवा कथानक का संविधान कहते हैं। उत्तररामचरित की वस्तुयोजना में कवि ने पर्याप्त कौशल का परिचय दिया है।

इस नाटक में दो घटनायें प्रधान हैं- राम द्वारा सीता का परित्याग तथा स्वीकृति। इन दोनों घटनाओं को केन्द्रबिन्दु मानकर भवभूति ने इस नाटक की वस्तु-योजना की है। पहली घटना प्रथम अङ्क में घटित होती है। इसके लिए कवि ने प्रारम्भ से ही पृष्ठभूमि तैयार की है तथा राम द्वारा सीता के परित्याग को एक प्रकार से अपरिहार्य सिद्ध किया है। प्रारम्भ में ही इस बात की सूचना दे दी गई है कि जनता में सीता सीता के विषय में प्रवाद फैला हुआ है। वशिष्ठ के सन्देश में लोकराधन की बात कही गई है। अरुन्धती का सन्देश सीता को दोहद की पूर्ति को आवश्यक बताता है। चित्र-दर्शन से सीता को पुनः दण्डक वन देखने की इच्छा होती है जिसकी पूर्ति के लिए तुरन्त आदेश दिया जाता है। दुर्मुख के मुख से सीता-विषयक जनप्रवाद को सुनकर राम के हृदय में एक अन्तर्द्वन्द्व चलता है जिसमें पति राम पर राजा राम की विजय होती है तथा कर्त्तव्य पर प्रेम की बलि चढ़ जाती है। इस अवसर पर वशिष्ठ, अरुन्धती तथा कौशल्या आदि को भी दीर्घकाल के लिए दूर भेज दिया गया है जिससे ऐसे व्यक्तियों की अनुपस्थिति हो गई है जो इस कार्य का कुछ विरोध करते या राम को समझाते। लक्ष्मण को सीता परित्याग की आज्ञा दी गई है उसमें कवि ने जानबूझकर**'नूतनो राजा रामः समाज्ञापयति'**कहकर आज्ञा की अपेक्षा कर्त्तव्य की ओर संकेत किया है। इस प्रकार भवभूति की वस्तु-योजना ने सीता-परित्याग को अवश्यम्भावी बना दिया है। लोकराधन के लिए 'मैं सीता को भी छोड़ सकता हूँ।' राम की यह उक्ति सीता द्वारा समर्थित हो चुकी है। इसलिए सीता भी परोक्ष रूप से अपने परित्याग का अनुमोदन कर देती है।

सीता-परित्याग के बाद दूसरी घटना सीता तथा राम के मिलन की है। इस मिलन को भी मनोवैज्ञानिक तथा स्वाभाविक बनाने के लिए सातवें अङ्क से पूर्व कवि ने दूसरे, तीसरे तथा चौथे अङ्क की घटनाओं की सृष्टि की है। पाँचवे तथा छठे अङ्क के कार्य व्यापार का सीता-मिलन रूप कार्य से अटूट सम्बन्ध नहीं है फिर भी कवि ने वीर रस के लिए उन्हें स्थान दिया है। लव तथा कुश से राम का मिलन तथा बालकों को जन्म से ही जृम्भकास्त्रों की सिद्धि का उल्लेख अवश्य ही सीता-मिलन के लिए पृष्ठभूमि तैयार करने के लिए सहायक सिद्ध होते हैं। शम्बूक के वध के लिए कवि ने राम को पुनः दण्डकवन में पहुँचा दिया है। वहाँ पूर्वपरिचित स्थानों को देखने से राम का दुःख फिर से नया हो जाता है। इस अवसर पर सीता की अदृश्य स्थिति अत्यन्त ही महत्त्वपूर्ण है। वह परोक्ष रहते हुए भी प्रत्यक्ष रूप में राम की व्यथा देख लेती है। सुवर्ण मूर्ति की घटना उसे विश्वास दिला देती है कि राम के हृदय में अभी भी सीता का स्थान सुरक्षित है। सीता-मिलन से पूर्व उसके हृदय का आक्रोश दूर करना आवश्यक था। तभी उनके हृदयों का मिलन हो सकता था। छाया सीता की योजना करके कवि ने अत्यन्त कुशलता का परिचय दिया है। सीता का मनोमालिन्य दूर करके कवि ने जनक तथा कौशल्या के खेद को भी दूर किया है। इसी कार्य के लिए उन्होंने इन पात्रों को वाल्मीकि के आश्रम में पहुँचाया है। भवभूति ने सीता की माता वसुन्धरा के कोप की शान्ति का भी उल्लेख किया है तथा अन्त में जिस प्रथा के प्रवाद के कारण सीता निर्वासन हुआ था उसकी भ्रान्ति का निवारण भी दिखाया है। इस प्रकार सीता निर्वासन से सम्बद्ध सभी पहलुओं पर विचार करके अन्त में भवभूति ने राम द्वारा सीता की स्वीकृति कराके उसके मिलन को नाटक की अन्तिम घटना के रूप में प्रस्तुत किया है। भवभूति ने मूलकथा के इस अंश को इसीलिए परिवर्तित किया है कि जिससे नाटक सुखान्त बन जाये। मूलकथा में राम तथा सीता का मिलन नहीं होता। अपने सतीत्व का साक्ष्य देते हुए सीता पृथ्वी में समा जाती है। परन्तु भवभूति को कथा का ऐसा अन्त इष्ट नहीं था। आदर्श दाम्पत्य प्रेम की जिस प्रतिष्ठा के लिए भवभूति ने इस नाटक की रचना की थी। वह प्रतिष्ठा राम तथा सीता के मिलन के द्वारा ही सकती थी। इसीलिए भवभूति ने मूलकथा का यह अंश बदल दिया है।

भवभूति के संवादों के विषय में भी कुछ विचार करना आवश्यक है। कथा-सूत्र को आगे बढ़ाने के लिए कवि को संवादों का ही सहारा लेना पड़ता है। परन्तु भवभूति के कुछ संवाद आवश्यकता से अधिक लम्बे हैं। कुछ संवादों की भाषा लम्बे-लम्बे समासों से युक्त है अतः क्लिष्ट हो गई है। दोनों कारणों से नाटक में विरसता आ जाती है, परन्तु इस प्रकार के स्थल बहुत अधिक नहीं हैं।

उत्तररामचरित के पाँचवे तथा छठे अङ्क का युद्ध वर्णन भी बहुत प्रांसगिक नहीं है। यदि इन दोनों अङ्को को छोड़ दें तो कथांश को कोई क्षति नहीं पहुँचेगी। लव का वीरदर्प प्रस्तुत करने के लिए ही इन अंकों का कलेवर बढ़ाया गया है। राम-सीता मिलन

कार्य मुख्य रूप से इन अंशों का विशेष सम्बन्ध नहीं है। केवल जृम्भकास्त्र के प्रयोग की घटना कुछ प्रत्यभिज्ञान का कार्य करती सी प्रतीत होती हैं। परन्तु उसे भी व्यक्तिगत प्रभाव से उत्पन्न कहकर जिज्ञासा की समाप्ति कर दी गई है। वैसे सातवें अङ्क में भी जृम्भकास्त्र का उल्लेख है। वही प्रमाण लव-कुश को राम की सन्तान बनाने में पर्याप्त हैं इसलिए इन दोनों अंकों का मुख्य घटना से अटूट सम्बन्ध नहीं है।

स्वयं आकलन कीजिए-

अभ्यास प्रश्न 1

रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए-

1. नाटक के प्रमुख.........तत्त्व है।
2. 'लोकाराधना के लिए मैं सीता का परित्याग कर सकता हूँ।' यह कथन ....का है।
3. सीता की अदृश्य स्थिति .... अङ्क में चित्रित है।
4. उत्तररामचरित नाटक ....है।

3.4 पात्र तथा चरित्र-चित्रण

नेता संस्कृत नाटकों का दूसरा तत्त्व है। आधुनिक काल में इसे ही पात्रें का चरित्र-चित्रण कहते हैं। प्रस्तुत नाटक का नायक राम तथा नायिका सीता है। ये दो मुख्य पात्र हैं। अतः इन्हीं के चरित्र-चित्रण में कवि ने विशेष रुचि ली है। शेष पात्र गौण हैं। फिर भी भवभूति ने उनके व्यक्तित्व को उभारने का प्रयत्न किया है।

राम तथा सीता दोनों ही पात्र ऐसे हैं जिनके चरित्र भारतीय इतिहास तथा समाज में स्थिर हो चुके हैं। इतिहास की इस स्थिरता को भंग करना सरल नही है। फिर भी भवभूति ने अपनी कला से एक विशिष्ट राम को जन्म दिया है जो राम न तो वाल्मीकि का है और न कालिदास का। वह शुद्ध रूप भवभूति का है। भवभूति ने राम के दो ही रूपों का उल्लेख किया है-राजा राम और पति राम। प्रथम अङ्क में उनके दोनों रूपों का संघर्ष है जिसमें राजा राम रूप ही विजयी होता है। इस रूप में प्रत्येक प्रकार से प्रजा का रंजक करना ही उनका प्रमुख कर्त्तव्य है-

स्नेहं दयां च सौख्यं च यदि वा जानकीमपि।
आराधनाय लोकस्य मुञ्चतो नास्ति मे व्यथा।।

यह उक्ति उनके लोकाराधन की तत्परता को सहज ही स्पष्ट कर देती है। केवल वचन मात्र से ही नहीं अपितु कर्म से भी वे यही सिद्ध करते हैं। प्रजा में सीता-विषयक प्रवाद को सुनकर वे पुनः उसे छोड़ने का निश्चय कर लेते हैं। जिसे प्राप्त करने के लिए उन्होंने अनेक कष्ट सहे थे तथा रावण जैसे प्रतापी राजा से भी युद्ध किया था। इस विषय में उन्होंने जो दृढ़ता दिखाई वह **'एष नूतनो राजा रामः समाज्ञापयति'**वाक्य से स्प्ष्ट है। नये राजा की आज्ञा का उल्लंघन सरल नहीं है। प्रजारंजन के लिए ही वे शूद्र मुनि शम्बूक का वध जैसा कठोर कार्य भी करते हैं। सीता के भावी वियोग के दुःख से आक्रान्त होने पर

भी राक्षसों के अत्याचार की बात सुनकर वे तुरन्त सचेत हो जाते तथा शत्रुघ्न को उनके दमन के लिए भेजने को चल पड़ते हैं।

नाटक के शेष भाग में राम का दूसरा (पति का) रूप ही सर्वत्र वर्णित है। लोकाराधन के लिए सीता को निर्वासित करने का निश्चय करते ही वह अपने आप को अपराधी समझने लगते हैं तथा अपने पति को निर्घूण, अपूर्वकर्मचाण्डाल आदि विशेषणों से पुकारते हैं। सीता के वियोग से दुःखी उनका पति हृदय निरन्तर अशान्त रहता है। तीसरे अङ्क में उनकी मानसिक दशा का चित्रण करने में कवि ने अभूतपूर्व कौशल दिखाया है। यहाँ उनके अश्रुओं तथा मूर्च्छाओं ने उन्हें मानव की साधारण भावभूमि पर ला बैठाया है जहाँ बैठकर वह बड़प्पन को भूल जाते हैं तथा अनेक बार करुण क्रन्दन करते हैं। इस प्रसंग में एक बार तो वह प्रजा को उपालम्भ भी दे बैठते हैं- **'हे भगवन्तः पौरजानपादाः। न किल इदमशरणैरद्यास्वाभिः प्रसीदत रुद्धते'**इस उक्ति में प्रजा के प्रति उनका आक्रोश पति राम के हाथों राजा की राम पराजय का प्रतीक ही है। वस्तुतः राम के चरित्र के इस द्वन्द्व को देखकर ही वासन्ती ने कहा है-

वज्रादपि कठोराणि मृदूनि कुसुमादपि।
लोकोत्तराणां चेतांसि को नु विज्ञातुमर्हति।।

प्रस्तुत श्लोक अत्यन्त ही संक्षेप से परन्तु पूर्णरूपसे राम के चरित्र के दोनों गुणों को प्रकट कर रहा है। यही भवभूति के राम की निजी विशेषता है।सीता के चरित्र-चित्रण में भी कवि ने पर्याप्त कौशल का परिचय दिया है। वह वसुन्धरा की पुत्री है जो वसुन्धरा धैर्यधारियों में धुरीण समझी जाती है। सलिए सीता में धैर्य की स्थिति मातृगुण के रूप में होनी आवश्यक है। उनके पिता जनक हैं जो प्रजापति के समान हैं। इसलिए सीता को अपमानित होने पर भी प्रजा के पालन के लिए जीवित रहना पड़ता है। वह रघुकुल वधू है जिस कुल का प्रारम्भ सूर्य से हुआ है तथा जिसमें वशिष्ठ जैसे गुरु हैं।

विश्वम्भरा भगवती भवतीसूत राजा प्रजापतिसमोजनकः पिता ते।
तेषां वधूस्त्वमसि नन्दिनि पार्थिवाना येषां कुलेषु सविता च गुरुर्वचन।।

नाटक के प्रारम्भ में ही कवि ने सीता के ऊपर मातृकुल, पितृकुल, श्वसुरकुल तथा पुरोहित कुल की लाज लाद दी है। सीता ने अपने धैर्य से इन चारों कुलों की लाज रखी है। प्रजारंजन के लिए यदि राम उसका परित्याग करते हैं तो भी उसे इस पर कोई आपत्ति नहीं है। रघुकुल की सन्तति के पालन के लिए वह जीवित रहती है। सीता के दर्शन हमें पहले तीसरे तथा सातवें अघङ्क में ही होते हैं। परन्तु उसकी करुण मूर्ति प्रभावित किए बिना नहीं रहती। पहले अङ्क में उसका परित्याग तब होता है जब वह पूर्ण गर्भाङ्क है। तीसरे अङ्क में सीता को कवि ने ठीक ही **'करुणस्य मूर्तिरथवा शरीरिणी विरहव्यथेन वनमेति जानकी'**कहा है। परित्याग के पश्चात् भी राम के विषय में उसका प्रेम कम नहीं

होता है। वह जानती है कि राजा राम ने सीता का परित्याग किया है उसके पति ने नहीं। इसलिए तीसरे अङ्क में वह तमसा से कहती हैं- **भगवति तमसे। अपसराव तावत्। मा प्रेक्ष्यानभ्नुज्ञातेन सन्निधानेन राजाधिकं कोपिष्यति।** यहाँ राम के लिए आर्यपुत्र का प्रयोग न करके 'राजा' शब्द का प्रयोग साभिप्राय है। परन्तु इसी अङ्क में आगे सीता ने राम को 'आर्यपुत्र' कहकर सम्बोधित किया है। यह तभी हुआ है जब सीता को राम के सम्बन्ध में पूरा विश्वास हो गया है। परित्याग के बाद भी वह राम की निन्दा नहीं सुनना चाहती और वह भी अपनी प्रिय सखी वासन्ती के मुख से। सीता की पतिभक्ति का इससे बड़ा और क्या प्रमाण हो सकता है? इसलिए भवभूति ने उसे गृहलक्ष्मी कहा है। उर्मिला को लेकर लक्ष्मण से उपहास करना सीता की हास्यप्रियता का द्योतक है। उसके पाले हुए करि-शावक पर जब विपत्ति आती है तो वह उसकी रक्षा के लिए व्यग्र हो उठती है। इससे उसकी दयालुता का पता चलता है। वास्तव में भवभूति ने सीता को कोमलता, सहृदयता तथा करुणा की मूर्ति के रूप में चित्रित किया है।

अन्य पात्रों में जनक, लव, चन्द्रकेतु तथा वासन्ती के चरित्र कुछ उभर सके हैं। सौधातकि का वशिष्ठ को व्याघ्र कहना ऐसी उक्ति है जो पाठकपर अमिट छाप छोड़ जाती है। शेष पात्रें की योजना मात्र कथा निर्वाह के लिए ही हैं।

स्वयं आकलन कीजिए –

अभ्यास प्रश्न - 2

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए –

1. दुर्मुख का वर्णन किस अङ्क में आया है?
2. उत्तररामचरित में कितनी घटनाएं प्रधान मानी गई है?
3. जृम्भकास्त्र का उलेख किस अङ्क में किया गया है?
4. सीता के पिता कौन थे?
5. उत्तररामचरित के किस अङ्क में हमे सीता के दर्शन होते है?

3.5 रस परिपाक

रस योजना की दृष्टि से भवभूति ने इस नाटक में मौलिकता का परिचय दिया है। संस्कृत नाट्याचार्यों के अनुसार नाटक में वीर अथवा श्रृंगाररस अंगीरस होते हैं। शेष रसों का वर्णन अंगी रस अर्थात् गौण रसों के रूप में ही हुआ करता है। परन्तु भवभूति ने इस परम्परा को तोड़ते हुए अपने नाटक में करुण रस को अंगी रस (प्रधान रस) के रूप में रखा है तथा शेष रसों में से कुछ को अंग रस के रूप में।

प्रथम अङ्क में प्रारम्भ में श्रृंगार का वर्णन है जो करुण की पृष्ठभूमि का कार्य करता है। सीता के प्रति ऐसी आसक्ति होने पर भी राम को सीता परित्याग का निर्णय करना

पड़ता है। इसालिए उनका शोक और भी घना हो जाता है। प्रथम अङ्क के उत्तरार्द्ध में राम की उक्तियों में करुण रस का ही परिपाक है। द्वितीय तथा तृतीय अङ्क में करुण रस ही प्रमुख है। चौथे अङ्क में भी जनक और कौशल्या के सन्दर्भ में करुण रस का चित्रण है। पाँचवें तथा छठे अङ्क के विष्कम्भक में वीर रस की ही प्रधानता है परन्तु छठे अङ्क का वात्सल्य करुण का ही अंग है। सातवें में अद्‌भुत तथा करुण का अद्‌भुत संयोग है। इस प्रकार सम्पूर्ण नाटक में करुण ही प्रमुख है। वीर, श्रृंगार, हास्य तथा अद्‌भुत करुण के ही अंग होकर ही आए है। इनमें वीर रस करुण का सहायक नहीं है। शेष करुण की पुष्टि करते हैं।

एको रसः करुण एव निमित्तभेदाद् भिन्नः पृथक् पृथगिवाश्रायते विवर्तान्।
आवर्तबुद्‌बुद्‌तंरगमयान्विकारानम्भो यथा सलिलमेव तु तत्समग्रम्।।

भवभूति की यह उक्ति इस नाटक में रस की प्रमुखता की परिचायक है। करुण रस के उत्कृष्ट वर्णन के कारण ही भवभूति के इस नाटक को कवि समाज में प्रतिष्ठा प्राप्त हुई है। इसी कारण**'उत्तरे रामचरिते भवभूतिर्विशिष्यते'**जैसी उक्तियाँ प्रसिद्ध हुई हैं।

करुण रस के परिपाक के भवभूति ने विभाव, अनुभाव तथा संचारी भावों की योजना बड़ी कुशलता से की है। इस नाटक के करुण में आलम्बन विभाव के रूप में सीता का (कुछ स्थलों पर राम का भी) वर्णन किया गया है। सीता-विषयक शोक के आश्रय के रूप में राम, वासन्ती, जनक, कौशल्या, वसुन्धरा की योजना की गई है। इन सभी पात्रें को सीता-परित्याग का दुःख है परन्तु उसके रूप भिन्न-भिन्न है। राम को पत्नी का वियोग हुआ है, जनक को पुत्री का, कौशल्या पुत्र-वधू से विचिच्त हुई तो वसुन्धरा पुत्री से, वासन्ती को अपनी सखी की चिन्ता है, परन्तु करुणा के रूप में उन सबकी अनुभूतियाँ समान है।

उद्दीपन विभाव के रूप में माँसाहारी जन्तुओं तथा निर्जन वन का उल्लेख हुआ है। इस नाटक में कवि ने प्रकृति को करुण के उद्दीपन के रूप में चित्रित करने में बड़ी सफलता प्राप्त की है। पंचवटी के दृश्य राम के शोक को और भी उद्दीप्त कर देते हैं। इस स्थानों में की गई श्रृंगार-क्रीड़ाएँ जब याद आती हैं तो राम का दुःख निःसीम होने लगता है।

करुण रस के अनुभवों की योजना में तो कवि ने अति ही कर दी है।उन्होंने केवल अश्रू तथा रुदन से ही काम नहीं चलाया है, स्थान-स्थान पर उनके पात्र मूर्च्छित होते हुए दिखाया है। जब भवभूति का करुण रस ऐसा है कि जिसमें**'अपि ग्रावा रोदित्यपि दलति वज्रस्य हृदयम्'-** तो राम का मूर्च्छित होना तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है, परन्तु आलोचकों की दृष्टि में उत्तररामचरित में मूर्च्छा का आधिक्य दोष की स्थिति तक पहुँचा हुआ है।

संचारी भावों की योजना में तो भवभूति को कमाल हासिल है। उन्होंने पात्रें के आवेग, दीनता, निषाद, नैराश्य आदि भावों का चित्रण बड़ी कुशलता से किया है। अनेकों स्थलों पर भावशबलता की योजना बड़ी ही सुन्दर हुई है। अनुभाव की अनिर्वचनीयता को प्रकट करने में तो भवभूति ने कमाल ही कर दिया है। निम्न श्लोकों में इस प्रकार का चित्रण द्रष्टव्य है-

विनिश्चेतुं शक्यो न सुखमिति वा दुःखमिति वा
प्रमोहो निद्रा वा किमु विषविसर्पः किमु मदः।
तव स्पर्शे स्पर्शे मम हि परिमूढन्द्रियगणो
विकारश्चैतन्यं भ्रमयति च संमीलयति च।।
तटस्थं नैराश्यादपि च कलुषं विप्रियवशाद्
वियोगे दीर्घेस्मिन्झटितिघटनात्स्तम्भितमिव।
प्रसन्नं सौजन्याद् दयितकरुणैर्गाढकरुणं
द्रवीभूत प्रेम्णा तव हृदयमस्मिन् क्षण इव।।

3.5.1 अन्य रस

अन्य रसों में सम्भोग श्रृंगार का वर्णन अत्यन्त ही उत्कृष्ट है। भवभूति के श्रृंगार में अश्लीलता नहीं है। पति पत्नी के प्रकृष्ट प्रेम को उन्होंने सफलता पूर्वक चित्रित किया है। एक दो स्थलों पर उन्होंने आलिंगन आदि का भी वर्णन किया है परन्तु उसमें भी उतावलापन नहीं है, गम्भीरता है। प्रथम अङ्क में इस प्रकार के कुछ वर्णन हैं तथा ऐसे ही वर्णन दूसरे तथा तीसरे में भी है। पूर्णगर्भा सीता के प्रसंग में कही गई ये उक्तियाँ शारीरिक आकर्षण का नहीं मानसिक परितोष का परिणाम है।

वीर रस की योजना में भी कवि को पर्याप्त सफलता मिली है। भाषा पर उनका आधिपत्य है। इसलिए रस के अनुसार उनकी शैली भी बदलती रहती है। वीर रस की रचनाओं में उन्होंने लम्बे समासों का प्रयोग किया है। साथ ही भावों से मेल खाती ध्वनियों का प्रयोग करके नाद प्रभाव उत्पन्न करने का सफल प्रयत्न किया है-

झणज्झणित कङ्कणक्वणितकिङ्किणीकं धनुर्ध्वनद्गुरुगुणाटनीकृतकरालकोलाहलम्। 6/1

जैसी रचनायें उनकी ध्वनि प्रभाव की शक्ति का परिचय देती हैं। इस पंक्ति में प्रयुक्त वर्णध्वनि भाव का अनुसरण कर रही है। शब्दों के उच्चारण के समय किकिंणी की तथा कन-कन झन-झन की ध्वनि निकलती है जो शब्दों से प्रतीत होने वाले भाव को और भी प्रभावशाली बना देती है।

पहले लिखा जा चुका है कि भवभूति की गम्भीर प्रकृति हास्य के प्रतिकूल है। इसलिए उनके नाटकों में विदूषक का अभाव है। उत्तररामचरित में भी हास्य का प्रायः अभाव ही है। सौधातकि की एक उक्ति तथा अश्व का वर्णन अवश्य कुछ हास्य की झलक लिए हुए है। सातवें अङ्क में अद्भुत रस है। यह स्वयं कवि ने अपने पात्रें के माध्यम से

माना है। गंगा से सीता निकलना एक आश्चर्यजनक घटना है। राम और सीता का मेल भी मूल कथा से भिन्न होने के कारण अद्‌भुत ही है।

3.6 उत्तररामचरित का प्रतिपाद्य

यद्यपि काव्य का प्रमुख उद्देश्य रसानुभूति ही है तथापि कवि काव्य के माध्यम से रसानुभूति के साथ-साथ कुछ और भी कहना चाहता है। भवभूति ने भी उत्तररामचरित में प्रमुख रूप से करुण की अनुभूति कराते हुए कुछ और भी कहने का प्रयत्न किया है। भवभूति का यह और कुछ है- दाम्पत्य प्रेम की प्रतिष्ठता।

भवभूति के अनुसार दाम्पत्य प्रेम के तीन गुण होते हैं- निष्कारणता, सुखजनकता तथा अक्षयता। न केवल राम तथा सीता के माध्यम से ही, अपितु अन्य पात्रें के माध्यम से भी भवभूति ने प्रेम की इन विशेषताओं की ओर संकेत किया है। उत्कृष्ट प्रेम किसी कारण से नहीं होता। वह तो बिना ही किसी कारण से सहसा हो जाता है। वास्तव में सकारण प्रेम निस्वार्थ नहीं हो सकता तथा उत्कृष्ट प्रेम को अकारण माना है-

व्यतिषजति पदार्थानान्तरः कोऽपि हेतु र्न खलु बहिरुपाधीन्प्रीतयः संश्रयन्ते।
विकसति हि पतङ्गस्योदये पुण्डरीकं द्रवति च हिमरश्मावुद्गते चन्द्रकान्तः।। 6/12

प्रस्तुत श्लोक को अकारण प्रेम के सम्बन्ध में भवभूति का सिद्धान्त वाक्य माना जा सकता है। पाँचवे अङ्क के श्लोकों में भी यही बात कही गई है-

यदृच्छासंवादः किमु किमु गुणानामतिशयः
पुराणो वा जन्मान्तरनिबिडबद्धः परिचयः।
निजो वा संबन्धः किमु विधिवशात्कोऽप्यविदितः
ममैतस्मिन् दृष्टे हृदयमवधानं रचयति।। 5/16
अहेतुः पक्षपातो यस्तस्य नास्ति प्रतिक्रिया।
स हि स्नेहात्मकस्तन्तुरन्तर्मर्माणि सीव्यति।। 5/17

प्रेम की सुख जनकता के विषय में भी भवभूति ने अनेक संकेत किए हैं। परन्तु निम्न उक्ति में तो यह बात स्पष्ट रूप से कही गई है-

न किंचिदापि कुर्वाणः सौख्यैर्दुः खान्यपोहति।
तत्तस्य किमपि द्रव्य यो हि यस्य प्रियी जनः।।

प्रिय का संसर्ग सुखकारी होता है विशेषतः पत्नी का, यह बात कवि ने अनेक स्थानों पर कही है। प्रथम अङ्क में इसके प्रमाण हैं-

म्लानस्य जीवकुसुमस्य विकासनानि संतर्पणानि सकलेन्द्रियमोहनानि।
एतानि ते सुवचनानि सरोरुहाक्षि कर्णामृतानि मनसश्च रसायनानि।। 1/36
इयं गेहे लक्ष्मीरियममृतवर्तिर्नयनयो रसावस्याः स्पर्शो वपुषि बहुलश्चन्दनरसः।

अयं बाहु कण्ठे शिशिरमसृणो मौक्तिकसरः किमस्या न प्रेयो यदि परमसह्यस्तु विरहः।। 1/38

आदर्श प्रेम की तीसरी विशेषता है उसकी अक्षयता या स्थिरता। यह प्रेम निरन्तर बढ़ता रहता है कभी कम नहीं होता। शारीरिक आकर्षण जन्य प्रेम अस्थायी होता है क्योकि शरीर से आकर्षण के ह्रास साथ-साथ इसका भी ह्रास हो जाता है परन्तु भार्यानिबन्ध प्रेम स्थिर है। कालिदास ने भी भाव-निबन्ध रति को उत्कृष्ट कहा है। भवभूति ने दाम्पत्य प्रेम की इस विशेषता को बड़ी भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित की है-

अद्वैत सुख दुःखयोरनुगतं सर्वास्ववस्थासु यद्।
विश्रामी हृदयस्य यत्र जरसा यस्मिन्न हार्यो रसः।।
कालेनावरणात्ययात् परिणतं यत् स्नेहासारे स्थितं
भद्र् तस्य सुमानुषस्य किथमप्येकं हि तत् प्राप्यते।।

भवभूति का यह श्लोक उनके काव्य के उद्देश्य या प्रतिपाद्य की घोषणा कर रहा है। दाम्पत्य का आदर्श प्रेम ऐसा है जो सुख-दुःख में एक सा रहता है तथा सभी अवस्थाओं में विद्यमान रहता है। उसी से हृदय को शान्ति मिलती है तथा बुढ़ापा भी उसके आकर्षण को कम नहीं कर सकता। जितना समय बीतता है उतना ही यह परिपक्व होता है, प्रेमियों के हृदय की परतें खुलती चली जाती हैं जिससे उनमें कोई दुराव नहीं रहा जाता। वह प्रेम का सार होता है, ऐसा दाम्पत्य स्नेह किसी सौभाग्यशाली को ही मिलता है। परन्तु इसकी प्रार्थना सभी करते हैं। उत्तररामचरित में भवभूति ने इसी दाम्पत्य प्रेम की प्रतिष्ठा की है।

3.6.1 कुछ अन्य विशेषताएँ

उत्तररामचरित में भवभूति ने अनेक स्थानों पर ऐसे संवादों का प्रयोग किया है जो भावी घटनाओं की ओर संकेत करते हैं। भवभूति इस प्रकार के संवादों की रचना में पर्याप्त कुशल है। सीता के सम्बन्ध में जनता के प्रवाद की बात का संकेत प्रस्तावना में ही कर दिया है। प्रजारंजन के लिए सीता को छोड़ने की बात भी परित्याग की परिस्थिति उत्पन्न होने से पूर्व ही कह दी है। चित्रदर्शन में जृम्भकों का उल्लेख, भागीरथी तथ वसुन्धरा से प्रार्थना करना भी भावी घटनाओं से सम्बद्ध है। इस प्रकार के अन्य भी अनेक संकेत है। 'परमसह्यस्तु विरहः' राम की इस उक्ति के बाद प्रतीहारी का यह वचन 'देव! समुपस्थित' सुन्दर पताकास्थानक है जिसके एक क्षण के लिए दो अर्थ निकलते हैं। इसी प्रकार तीसरे अघङ्क में राम की यह उक्ति 'अस्ति चेदानीमश्वधसहधर्मचारिणी' में सीता तथा वासन्ती के हृदय में शंका उत्पादन कर देती है कि राम ने दूसरा विवाह कर लिया है जो 'नहि, नहि। हिरण्यमयी सीताप्रतिकृतिः' इस अग्रिम उक्ति से दूर हो जाती है। भवभूति ने इस कला का सफल उपयोग करके नाटक में औत्सुक्य की वृद्धि की है।

3.6.2 प्रकृति चित्रण

प्रकृति चित्रण संस्कृत साहित्य का आवश्यक अंग है। रसानुभूति के लिए उद्दीपन के रूप में तो प्रकृति का वर्णन आगे तक चलता रहा परन्तु आलम्बन के रूप में भी वन, पर्वत तथा आश्रम आदि के वर्णन की परम्परा वाल्मीकि, कालिदास तथा अश्वघोष आदि के काव्य में उपलब्ध होती है।

प्रकृति का चित्रण चाहे आलम्बन रूप में हो चाहे उद्दीपन रूप में, दो प्रकार का हो सकता है- बिम्बग्राही तथा परिगणनात्मक। प्रथम प्रकार के वर्णन में वर्ण्य वस्तु का शब्दचित्र इतना सजीव रूप में उपस्थित किया जाता है कि उस वर्णन से उस वस्तु का बिम्ब ही पाठक के मस्तिष्क में उपस्थित हो जाता है। वाल्मीकि, कालिदास तथा अश्वघोष के अधिकांश प्रकृति वर्णन इसी प्रकार के हैं। ये वर्णन स्वाभावोक्तिपूर्ण भी हो सकते हैं तथा अलंकृत भी।

दूसरे प्रकार के प्रकृति वर्णन में परिगणनामात्र ही होता है। वर्ण्य वस्तु का चित्र नाम मात्र से ही वर्णित होता है। इस प्रकार का वर्णन प्रायः श्लिष्ट तथा अलंकृत होता है। संस्कृत के परवर्ती भारवि, माघ, श्रीहर्ष आदि कवियों ने प्रकृति चित्रण में इस शैली को अपनाया है। इस प्रकार उनके काव्यों में प्रकृति चित्रण श्लिष्ट तथा अलंकृत होने के कारण मात्र उद्दीपन रूप में ही हुआ है। उसमें बिम्बग्रहीत नहीं है।

भवभूति का प्रकृति चित्रण बिम्बग्राही है। प्रकृति के जो भी शब्दचित्र उन्होंने किए हैं वे सभी बिम्बग्राही हैं। दूसरे तथा तीसरे अघ्ङ्क में इस प्रकार के अनेक दृश्य हैं। दूसरे अङ्क में बहते हुए झरनों का सुन्दर शब्दचित्र है-

इह समदशकुन्ताक्रान्तवानीरवीरुत् प्रसवसुरभिशीतस्वच्छतोया वहन्ति।
फलभरपरिणामश्यामजम्बूकनिकु×जस्खलनमुखरभूरिड्डोतसो निर्झरिण्यः।। 2/20

भवभूति के प्रकृति चित्रण की विशेषता यह है कि उन्हें प्रकृति के कोमल तथा कठोर, आह्लादक तथा भयानक, सरस तथा शुष्क सभी रूप समान रूप से प्रिय है। कालिदास ने प्रकृति के कोमल तथा सरस रूपों को भी अपनी लेखनी का विषय बनाया है, परन्तु भवभूति की सहानुभूति प्रकृति के सभी रूपों को प्राप्त हुई है। दूसरे अघङ्क में अजगर के पसीने को पीते हुए गिरगिटों ने भी उनकी लेखनी से अमरत्व प्राप्त किया है-

निष्कूजस्तिमिताःक्वचित्क्वचिदपिप्रोच्चण्डसत्त्वस्वनाः
स्वेच्छासुप्तगभीरघोरभुजगश्वासप्रदीप्ताग्नयः।
सीमानःप्रदरोदरेषुविलसत्स्वल्पाम्भसोयास्वयं
तृष्यद्भिः प्रतिसूर्यकैरजगरस्वेदद्रवः पीयते।। 2/16

इसी अङ्क का एक श्लोक उल्लुओं, कौओं तथा साँपों को भवभूति के स्नेह का पात्र बना रहा है-

कूजत्कुञ्जकुटीरकौशिकघटाघूत्कारवत्कीचक
स्तम्बाडम्बरमूकमौकुलिकुलः क्रौञ्चावतोऽगिरिः।
एतस्मिन्प्रचलाकिनांप्रचलतामुद्वेजिताः कूजितैरुद्वेल्लन्ति
पुराणराहिण तरुस्कन्धेषु कुम्भीनसाः।। 2/29

इन सभी वर्णनों में प्रकृति आलम्बन के रूप में है तथा ये सभी वर्णन बिम्बग्राही हैं। प्रकृति वर्णन के इस क्षेत्र में भवभूति निश्चय ही कालिदास से आगे बढ़ गए हैं। उनकी शकुन्तला तो उसी प्रकृति की गोद में पली है। इसलिए यदि विदा होते समय वह इन सभी से मिलती है तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है। परन्तु भवभूति के राम राजमहलों में पले हैं तथा वह बारह वर्ष के लम्बे समय के बाद दण्डक वन में आये हैं। फिर भी उन्हें इन दृश्यों से लगाव है। उत्तररामचरित के दूसरे तथा तीसरे अङ्क का प्रकृति चित्रण इस बात का साक्षी है कि भवभूति को प्रकृति से सच्चा लगाव है। इसलिए उनके सभी वर्णन स्वानुभूत से हैं।

स्वयं आकलन कीजिये-
अभ्यास प्रश्न - 3
रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये-

1. भवभूति के प्रकरण का नाम ---है।
2. उत्तररामचरित के प्रथम व द्वितीय अङ्क् की घटना में --- वर्षों का अन्तराल है।
3. उत्तररामचरित के तृतीय अङ्क् का नाम --- है।
4. उत्तररामचरित में गर्भाङ्क --- अङ्क् में है।
5. उत्तररामचरित का आधार ग्रन्थ --- है।

3.7 सारांश

इस इकाई में भवभूति के उत्तररामचरित की नाटकीयता का वर्णन किया गया है जिसके अन्तर्गत प्रमुख पात्र, रस और शैली का चित्रण आया है। इसमें वस्तुयोजना तथा घटनाओं की प्रधानता

3.8 कठिन शब्दावली

आत्मश्लाघा=अपनी प्रशंसा।	अवज्ञा=अवहेलना, तिरस्कार, अनादर।
सम्विधानकम्=रचना वैचित्र्य।	परिपोष=आगे बढ़ाना।
सामिष=माँस सहित।	विज्ञातुम्=जानना।
सविता=सूर्य।	व्यतिषजति=परस्पर मिलाना।

विवर्त=किसी वस्तु की भ्रम के कारण अन्य रूप में प्रतीति।

3.9 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न – 1

1. तीन (वस्तु, नेता, रस) 2. श्रीराम 3. तृतीय अंक 4. सुखान्त

अभ्यास प्रश्न - 2

1. प्रथम अङ्क 2. दो (सीता परित्याग,स्वीकृति) 3. सप्तम अङ्क 4. जनक 5. प्रथम अङ्क

अभ्यास प्रश्न -3

1. मालतीमाधव 2. द्वादश 3. छायाङ्क 4. सप्तम 5. रामायण

3.10 सहायक ग्रन्थ

1. उत्तररामचरितम्, महाकवि भवभूति, चौखम्बा संस्कृत सीरीज वाराणसी।
2. उत्तररामचरितम्, महाकवि भवभूति,व्याख्याकार आनन्दस्वरूप, सम्पादक: जनार्दनशास्त्री पाण्डेय, मोतीलाल बनारसीदास दिल्ली, वाराणसी।
3. संस्कृत साहित्य का इतिहास, बलदेव उपाध्याय, शारदा निकेतन वाराणसी।
4. संस्कृत साहित्य कोश, राजवंश सहाय हीरा, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

3.11 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. भवभूति की भाषा शैली पर प्रकाश डालिए।
2. उत्तररामचरित का प्रतिपाद्य क्या है? उदाहरण देते हुए उत्तर लिखिये।
3. उत्तररामचरित के प्रमुख रस पर आलोचनात्मक निबन्ध लिखिये।

चतुर्थ अध्याय
इकाई-4
उत्तररामचरित : प्रथम अङ्क

संरचना

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 उत्तररामचरित के प्रथम अङ्क के 1-17 पद्यों का अर्थ
- स्वयं आकलन अभ्यास प्रश्न-1

4.4 उत्तररामचरित के प्रथम अङ्क के 18-34 पद्यों का अर्थ
- स्वयं आकलन अभ्यास प्रश्न-2

4.5 उत्तररामचरित के प्रथम अङ्क के 35-51 पद्यों का अर्थ
- स्वयं आकलन अभ्यास प्रश्न-3

4.6 सारांश
4.7 कठिन शब्दावली
4.8 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर
4.9 सहायक ग्रन्थ
4.10 अभ्यास के लिए प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों, आरम्भिक इकाइयों में आप भवभूति के विषय में पढ़ चुके हैं। इस इकाई में उनके प्रसिद्ध नाटक उत्तररामचरित के प्रथम अङ्क चित्रदर्शन के पद्यों का सरलार्थ किया जायेगा। उत्तरारामचरित के गद्य भाग को पढ़ने के लिए सहायक ग्रन्थों का अध्ययन अवश्य करें। जिसके फलस्वरूप आप सम्पूर्ण नाटक का अध्ययन आप सम्यक् रूप से करनें में सफल होंगे। इसके प्रथम अङ्क के प्रथम पद्य में भवभूति ने अपने से पूर्ववर्ती कवियों को नमस्कार तथा सरस्वती की स्तुति प्रस्तुत की है। इसमें पद्य के अन्त में उसमें प्रयुक्त अलंकार को भी स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है। अब इस नाटक के प्रथम अङ्क के पद्यों को समझने का प्रयास करते हैं।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप समझने में सक्षम होंगे।

- सभी पद्यों का अर्थ।
- पद्यों में प्रयुक्त अलंकार।
- पद्यों की व्याख्या।

4.3 **उत्तररामचरित के प्रथम अङ्क् के 1-17 पद्यों का अर्थ**

इदं कविभ्यः पूर्वेभ्यो नमोवाकं प्रशास्महे।
वन्देमहि च तां वाचममृतामात्मानः कलाम्।। 1 ।।

सरलार्थ-

पूर्व कवियों (वाल्मीकि, व्यास आदि) के लिए इस नमस्कार वचन का कथन या निर्देश करते हैं और ब्रह्मा की अंशभूता उस सरस्वती को प्रणाम करते हैं।

यह पद्य मंगल के लिए नाटक के आरम्भ में दिया गया है। इसमें भवभूति ने अपने पूर्ववर्ती कवियों को नमस्कार किया है तथा ब्रह्मा की अंशभूता सरस्वती की स्तुति की गई है। प्रशास्महे में उपसर्ग तथा तिङ्न्त पद को अलग मानने पर इस पद्य में सुबन्त तथा तिङ्न्त रूप बारह पद हैं। नान्दी में आठ या बारह पद होते हैं।

यं ब्रह्माणमियं देवी वाग्वश्येवानुवर्तते।
उत्तरं रामचरितं तत्प्रणीतं प्रयोक्ष्यते।। 2 ।।

सरलार्थ-

जिस भवभूति को यह वाग्देवता अर्थात् सरस्वती वशवर्तिनी होकर अनुसरण करती है" उसके द्वारा रचित उत्तररामचरित का अभिनय किया जायेगा।

इस पद्य में 'ब्रह्मणाम्' पद ब्रह्मा तथा ब्राह्मण का वाचक है। ब्राह्मण से भवभूति का बोध होता है। सरस्वती भवभूति की वशवर्तिनी थी अर्थात् वाणी पर भवभूति का पूरा अधिकार था। कवि की यह दर्पोक्ति अक्षरशः सत्य है।

वसिष्ठाधिष्ठिता देव्यो गता रामस्य मातरः।
अरुन्धतीं पुरस्कृत्य यज्ञे जामातुराश्रमम्।। 3 ।।

सरलार्थ-

महर्षि वसिष्ठ के द्वारा संरक्षित राम की माताएँ अरुन्धती को आगे करके यज्ञ के लिए दामाद ऋष्यश्रृंग के आरम को गई हुई हैं।

कन्यां दशरथो राजा शान्तां नाम व्यजीजनत्।
अपत्यकृतिकां राज्ञे लोमपादाय यां ददौ।। 4 ।।

सरलार्थ-

महाराज दशरथ के शान्ता नाम की पुत्री को जन्म दिया जिसे उन्होंने कृत्रिम या दत्तक पुत्री के रूप में लोमपाद के लिए दे दिया।

सर्वथा व्यवहर्तव्यं कुतो ह्यवचनीयता।
यथा स्त्रीणां तथा वाचां साधुत्वे दुर्जनो जनः।। 5 ।।

सरलार्थ-

सब प्रकार से व्यवहार करना चाहिए, निर्दोषता कैसे सम्भव हो सकती है? मनुष्य जिस प्रकार स्त्रियों के पातिव्रत्य पर शंकालु रहता है उसी प्रकार वचन की निर्दोषता में भी रहता है अर्थात् कवियों के काव्य में भी शंकालु रहता है।

इस पद्य में 'कुतो ह्यवचनीयता' इस वाक्य के प्रति उत्तरार्द्ध का पद कारण होने से काव्यलिंग अलंकार है तथा 'यथा स्त्रीणां तथा वाचां' इस वाक्य में उपमा अंलकार है।

देव्यामपि हि वैदेह्यां सापवादो यतो जनः।

रक्षोगृहस्थितिर्मूलमग्निशुद्धौ त्वनिश्चयः।। 6 ।।

सरलार्थ-

पतिव्रता सीता के विषय में भी लोग निन्दा करते हैं। राक्षस रावण के घर में रहना उसका कारण है परन्तु अग्निपरीक्षा में तो निश्चय अर्थात् विश्वास नहीं करते हैं।

स्नेहात् सभाजयितुमेत्य दिनान्यमूनि नीत्वोत्सवेन जनकोऽद्य गतो विदेहान्।

देव्यास्ततो विमनसः परिसान्त्वनाय धर्मासनाद् विशति वासगृहं नरेन्द्रः।। 7 ।।

सरलार्थ-

स्नेह के कारण से अभिनन्दन करने के लिए आए हुए इन दिनों को राज्याभिषेक रूपी उत्सवों में व्यतीत कर राजा जनक आज विदेह या मिथिला को चले गए हैं। इस कारण से दुःखी मन वाली सीता को सान्त्वना देने के लिए महाराज राम राजासन से उठकर शयन कक्ष में प्रवेश करते हैं।

किन्त्वनुननित्यत्वं स्वातन्त्यमपकर्षति।

संकटा ह्याहिताग्नीनां प्रत्यवायैर्गृहस्थता।। 8 ।।

सरलार्थ-

किन्तु अनुमानों की अनिवार्यता स्वतन्त्रता को छीन लेती है क्योंकि अग्निहोत्रियों की गृहस्थी विघ्नों के कारण कष्टमयी रहती है।

विश्वंभरा भगवती भवतीमसूत राजा प्रजापतिसमो जनकः पिता तेः।

तेषां वधूस्त्वमसि नन्दिनि पार्थिवानां येषां कुलेषु सविता च गुरुर्वयं च।। 9 ।।

सरलार्थ-

हे आनन्ददायिनी! विश्व को भरण करने वाली भगवती वसुन्धरा ने आपको उत्पन्न किया है, प्रजापति ब्रह्मा के समान राजा जनक आपके पिता हैं, और तुम उन राजाओं की कुलवधू हो जिनके कुल के सूर्य और हम गुरु हैं।

लौकिकानां हि साधूनामर्थं वागनुवर्तते।

ऋषीणां पुनराद्यानां वाचमर्थोऽनुधावति।। 10 ।।

सरलार्थ-

लौकिक महात्माओं की वाणी अर्थ का अनुसरण करती हैं, परन्तु प्राचीन ट्टषियों की वाणी का अर्थ अनुसरण करता है। इस पद्य में दूसरे साधुओं की अपेक्षा वसिष्ठ आदि ट्टषियों का आधिक्य प्रतिपादित किया है इसलिए यहाँ व्यतिरेक अलंकार है।

जामातृयज्ञेन वयं निरुद्धास्त्वं बाल एवासि नवं च राज्यम्।

युक्तः प्रजानामनुरंजने स्यास्तस्माद्यशो यत्परमं धनं वः।। 11 ।।

सरलार्थ-

हम लोग जामाता के यज्ञ के कारण से रुके हुए हैं, तुम बालक ही हो और राज्य भी नया-नया मिला है। अतः प्रजा को प्रसन्न करने में तत्पर हो जाओ जिससे यश होता है जो आप लोगों का सर्वश्रेष्ठ धन है।

स्नेहं दयां च सौख्यं च यदि वा जानकीमपि।

आराधनाय लोकस्य मुय्चतो नास्ति मे व्यथा।। 12 ।।

सरलार्थ-

प्रजाओं के अनुरंजन के लिए स्नेह, दया, सुख और सीता को भी त्यागते हुए मुझे कष्ट नहीं होगा। प्रस्तुत पद्य में राम की लोकराधना की भावना का पता चलता है। उनके लिए लोकराधना सीता से भी बढ़कर है जिसके कारण आगे चलकर सीता काभी परित्याग करना पड़ता है। प्रस्तुत पद्य में आने वाली विपत्ति पहले ही झाँकती है।

उत्पत्तिपरिपूतायाः किमस्याः पावनान्तरैः।

तीर्थोदकं च वह्निश्च नान्यतः शुद्धिमर्हतः।। 13 ।।

सरलार्थ-

जन्म से ही पवित्र इस सीता का अन्य पवित्र करने वाले पदार्थों से क्या ? तीर्थ का जल और अग्नि किसी अन्य से पवित्र होने की इच्छा नहीं रखते। इस पद्य में दृष्टान्त अलंकार है।

क्लिष्टो जनः किल जनैरनुरंजनीयस्तन्नो यदुक्तमशिवं न हि तत्क्षमं ते।

नैसर्गिकी सुरभिणः कुसुमस्य सिद्धा मूर्घ्नि स्थितिर्न चरणैरवताडनानि।। 14 ।।

सरलार्थ-

कष्ट में पड़े हुए व्यक्ति का प्रसन्न करना लोगों का कर्त्तव्य है, इस कारण तुम्हारे विषय में लोगों का अमंगल वाक्य है, निज्चित रूप से वह तुम्हारे लिए उचित नहीं है। सुगन्धित पुष्प का सिर पर रहना स्वभावसिद्ध है, परन्तु चरणों से प्रहार या कुचलना स्वभावसिद्ध नहीं है।

इस पद्य में सीता जैसे दुःखी व्यक्ति का तो अन्यजनों द्वारा अनुरंजन किया जाना चाहिए। इसी विशेष अर्थ का अगली पंक्तियों के सामान्य अर्थ द्वारा समर्थन किया गया है। अतः यहाँ सामान्य का विशेष से समर्थन रूप अर्थान्तरन्यास अलंकार है।

ब्रह्मादयो ब्रह्महिताय तस्वा परस्सहड्डं शरदां तपांसि।

एतान्यदर्शन्गुरवः पुराणाः स्वान्येव तेजांसि तपोमयानि।। 15 ।।

सरलार्थ-

ब्रह्मा आदि प्राचीन गुरुओं ने वेद के हित के लिए हजारों वर्षों तक तपस्या करके अपने ही तपोमय तेजःस्वरूप इन अस्त्रें को देखा। यह जृम्भकास्त्रें के सम्बन्ध में राम की उक्ति है।

सम्बन्धिनो वसिादीनेषु तातस्तवार्चति।

गौतमश्च शतानन्दो जनकानां पुरोहितः।। 16 ।।

सरलार्थ-

यह तुम्हारे पिता अपने सम्बन्धियों की पूजा कर रहे हैं और जनक के पुराहित गौतम-पुत्र शतानन्द वसि" आदि की पूजा कर रहे हैं। इस पद्य में जनक और शतानन्द के द्वारा एक ही क्रिया करने के सम्बन्ध से तुल्ययोगिता अलंकार है।

जनकानां रघूणां च सम्बन्धः कस्य न प्रियः।

यत्र दाता ग्रहीता च स्वयं कुशिकनन्दनः।। 17 ।।

सरलार्थ-

जनकवंश का और रघुवंश का सम्बन्ध किसे प्रिय नहीं है? जिस सम्बन्ध में स्वयं विश्वामित्र दान देने वाले और लेने वाले हैं। इस पद्य में 'किसे प्रिय नहीं है?' अर्थात् सभी को प्रिय है, ऐसा अर्थ होने के कारण अर्थापति अलंकार है।

स्वयं आकलन कीजिए –

अभ्यास प्रश्न 1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए –

1. उत्तररामचरित के मंगलाचरण में किसकी स्तुति की गई है?
2. नान्दी में कितने पद होते है?
3. राम की बहन कौन थी?
4. राजा दशरथ के दामाद कौन थे?
5. राजा जनक के कुल पुरोहित कौन थे?

4.4 उत्तररामचरित के प्रथम अङ्क के 18-34 पद्यों का अर्थ

समयः स वर्तत इवैष यत्र मां समनन्दयत्सुमुखि! गौतमार्पितः।
अयमागृहीतकमनीयकङ्कणस्तव मूर्तिमानिव महोत्सवः करः।। 18 ।।

सरलार्थ-

हे सुन्दर मुख वाली! यह वह समय ऐसा लग रहा है, जिस समय में शतानन्द के द्वारा अर्पित किये हुए तथा सुन्दर कंगन को धारण करने वाले, शरीरधारी महोत्सव के समान, तुम्हारे इस हाथ ने मुझे आनन्दित किया था। इस पद्य के 'मूर्तिमान् महोत्सव इव' में उत्प्रेक्षा अलंकार है।

जीवत्सु तातपादेषु नूतने दारसंग्रहे।
मातृभिश्चिन्त्यमानानां ते हि नो दिवसा गताः।। 19 ।।

सरलार्थ-

पूज्य पिता जी के जीवित रहते समय, नये-नये विवाह के समय, माताओं के द्वारा चिन्ता किए जाते हुए हमारे वह दिन व्यतीत हो गए।

प्रतनुविरलैः प्रान्तोन्मीलन्मनोहरकुन्तलैर्दशनकुसुमैर्मुग्धालोकं शिशुर्दधती मुखम्।
ललितललितैर्ज्योत्स्नाप्रायैरकृत्रिमविभ्रमैरकृत मधुरैरम्बानां मे कुतूहलमङ्गकैः।। 20 ।।

सरलार्थ-

अति सूक्ष्म और विरल तथा कपोल पर लहराते हुए सुन्दर केशों से और फूलों की तरह दाँतों से, सुन्दर दर्शन वाले मुख को धारण करती हुई, यह बाला अत्यन्त सुन्दर, चान्दनी के सदृश और स्वाभाविक विलासों से युक्त प्यारे लगने वाले अघोर से मेरी माताओं में कौतूहल पैदा करती थी।

इङ्गुदीपादपः सोऽयं श्रृङ्गवेरपुरे पुरा।
निषादपतिना यत्र स्निग्धेनासीत् समागमः।। 21 ।।

सरलार्थ-

यह वही श्रृङ्गवेरपुर में इंगुदी का वृक्ष है, जहाँ पर पहले स्नेहयुक्त निषादराज से भेंट हुई थी।

पुत्रसंक्रान्तलक्ष्मीकैर्यद्वृदेक्ष्वाकुभिर्धृतम्।
धृतं बाल्ये तदार्येण पुण्यमारण्यकव्रतम्।। 22 ।।

सरलार्थ-

पुत्र को राजलक्ष्मी देकर इक्ष्वाकुवंश के वृद्ध राजाओं ने जो वनवास का व्रत धारण किया था, उस पवित्र व्रत को आर्य ने बाल्यावस्था में ही धारण किया।

तुरगविचयव्यग्राननुर्वीभिदः सगराध्वरे कपिलमहसा रोषात्प्लुष्टान् पितुश्च पितामहान्।
अगणिततनूतापस्तप्त्वा तपांसि भगीरथो भगवति! तवस्पृष्टानद्भिश्चिरादुददीधरत्।। 23 ।।

सरलार्थ-

हे भगवति गंगा! सगर के यज्ञ में घोड़े के अन्वेषण में लगे हुए, पृथ्वी को खोदने वाले और क्रोध से कपिल मुनि के तेज से विदग्ध हुए पिता के पितामहों (सगर पुत्रें) को भगीरथ ने शरीर के कष्टों की परवाह न कर तपों को तपकर चिरकाल के पश्चात् तुम्हारे जल के स्पर्श से उद्धार किया।

अलसललितमुग्धान्यध्वसम्पातखेदा-दशिथिलपरिरम्भैर्दत्तसंवाहनानि।
परिमृदितमृणालीदुर्बलान्यङ्क्कानि त्वमुरसि मम कृत्वा यत्र निद्रामवाप्ता।। 24 ।।

सरलार्थ-

जहाँ पर मार्ग में उत्पन्न हुई थकावट के कारण आलस्ययुक्त, कोमल और सुन्दर, दृढ़ आलिङ्गनों से दबाये हुए, परिमर्दित कमल की डंडियों के समान दुर्बल अंगों को मेरी छाती पर रखकर सो गई थी। इस पद्य में सीता के थकावट के कारण जडीभूत अंगों की तुलना मसली हुई कमल डडियों से की है। इसलिए इसमें उपमा अलंकार है।

एतानि तानि गिरिनिर्झरिणीतटेषु वैखानसाश्रिततरूणि तपोवनानि।
येष्वातिथेयपरमा शमिनो भजन्ते नीवारमुष्टिपचना गृहिणो गृहाणि।। 25 ।।

सरलार्थ-

पर्वत की नदियों के तटों पर वानप्रस्थों से आश्रित वृक्षों वाले यह वह पर्वत हैं, जिनमें अतिथि सत्कार में तत्पर मुट्ठी भर नीवार को पकाने वाले, शान्तचित्त वाले गृहस्थी मुनिजन गृहों में निवास करते हैं। इस पद्य में चित्रकूट पर्वत तथा शान्त चित्त वाले मुनियों की विशेषताओं को वर्णित किया है। इसलिए इसमें उद्धात अलंकार है।

स्मरसि सुतनु तस्मिन् पर्वते लक्ष्मणेन प्रतिविहितसपर्यासुस्थयोस्तान्यहानि।
स्मरसि सरसनीरां तत्र गोदावरीं वा स्मरसि च तदुपान्तेष्वावयोर्वर्तनानि।। 26 ।।

सरलार्थ-

हे सुन्दर शरीर वाली! उस पर्वत पर लक्ष्मण के द्वारा की गई सेवा से आराम पाने वाले हम दोनों के उन दिनों को याद करती हो? अथवा वहाँ पर मधुर जल वाली गोदावरी को याद करती हो? और गोदावरी के किनारे हम दोनों के रहने भ्रमण को याद करती हो?

किमपि किमपि मन्दं मन्दमासत्तियोगादविरलितकपोलं जल्पतोरक्रमेण।
अशिथिलपरिरम्भव्यापृतैकैकदोष्णोरविदितगतयामा रात्रिरेव व्यरंसीत।। 27 ।।

सरलार्थ-

समीपता के योग से कपोल सटाकर धीरे-धीरे बिना किसी क्रम से बोलते हुए और प्रगाढ़ आलिङ्गन में लगे हुए एक'एक बाहु वाले हम दोनों के बिना जाने बीते हुए पहरों वाली रात ही समाप्त हो जाया करती थी।

अथेदं रक्षोभिः कनकहरिणच्छप्रविधिना तथा वृत्तं पापैर्व्यथयति यथा क्षालितमपि।
जनस्थाने शून्ये विकलकरणैरार्यचरितैरपि ग्रावा रोदित्यपि दलति वज्रस्य हृदयम्।। 28 ।।

सरलार्थ-

उसके बाद पापी राक्षसों ने सोने के बने हुए मृग की कपटविधि से ऐसा किया, जो कि बदला लेने पर भी अभी तक दुःख होता है। निर्जन जनस्थान में नेत्र आदि इन्द्रियों की क्रिया में असमर्थ आर्यों के चरितों से पत्थर भी रोता है और वज्र का हृदय भी फटता है।

अयं तावद्वाष्पस्त्रुटित इव मुक्तामणिसरो विसर्पन् धाराभिर्लुठति धरणीं जर्जरकणः।
निरुद्धो{प्यावेगः स्फुरदधरनासापुटतया परेषाममुन्नेयो भवति चिरमाध्मातहृदयः।। 29 ।।

सरलार्थ-

प्रवाहों से फैलता हुआ और टूटे हुए कणों वाला यह आपका अश्रुसमूह टूटे हुए मुक्तामणियों के हार के समान जमीन पर गिरता है। बहुत काल तक हृदय को पूर्ण करने वाला अतिशयित यह दुःख रोके जाने पर भी होंठ और नाक का स्फुरण होने से दूसरों से अनुमेय होता है। इस पद्य में अश्रुसमूह की टूटे हुए मुक्तामणियों के हार से समानता होने से उपमा अलंकार है।

तत्कालं प्रियजनविप्रयोगजन्मा तीव्रोऽपि प्रतिकृतिवाच्छया विसोढः।
दुःखानिर्मनसि पुनर्विपच्यमानो ह्रन्मर्मव्रण इव वेदनां तनोति।। 30 ।।

सरलार्थ-

प्रियजन (सीता) के विरह से उत्पन्न, दुःसह होने पर भी बदला लेने की इच्छा से उस समय सहा गया दुःखानल फिर मन में परिपक्व होता हुआ हृदय के मर्मस्थल के फोड़े के समान दुःख देता है। इस पद्य में सीता के वियोग से उत्पन्न दुःख की फोड़े से समानता होने से उपमा अलंकार है।

एतस्मिन्मदकलमल्लिकाक्षपक्षव्याधूतस्फुरदुरुदण्डपुण्डरीकाः।
वाष्पाम्भः परिपतनोद्गमान्तराले संदृष्टाः कुवलयिनो भुवो विभागाः।। 31 ।।

सरलार्थ-

इस सरोवर में मद से मधुर शब्द करने वाले मल्लिकाक्ष हंसों के पंखों से कम्पित और हिलते हुए लम्बे नालदण्डों वाले सफेद कमलों से युक्त भूमि के भाग, आँसुओं के गिरने तथा निकलने के मध्य समय में नीलकमल वाले दिखाई पड़े।

दिष्ट्या सोऽयं महाबाहुरन्जनानन्दवर्धनः।

यस्य वीर्येण कृतिनो वयं च भुवनानि च।। 32 ।।

सरलार्थ-

हर्ष की बाता है कि यह वही महाबाहु, अंजना के आनन्द को बढ़ाने वाले (हनुमान्) हैं, जिनके पराक्रम से हम और सारा भुवन कृतार्थ हो गया है।

सोऽयं शैलः ककुभसुरभिर्माल्यवान्नाम यस्मिन्नीलः
स्निग्धः श्रयति शिखरं नूतनस्तोयवाहः।
आर्येणास्मिन्विरमविरमातः परं न क्षमोऽस्मि
प्रत्यावृत्तः स पुनरिव मे जानकीविप्रयोगः।। 33 ।।

सरलार्थ-

यह वही अर्जुन के फूलों से सुगन्धित माल्यवान् नाम का पर्वत है, जहाँ पर जहाँ पर श्यामवर्ण वाले और चिकने बादल शिखर का आश्रय लेते है। आर्य ने यहाँ---रुको, रुको, इसके बाद देखने या सुनने में समर्थ नहीं हूँ। वह मेरा जानकीवियोग फिर से लौट सा आया है। इस पद्य में 'सीता का वियोग फिर से मानों लौट सा आया है' के कारण से उत्प्रेक्षा अलंकार है।

जीवयन्निव ससाध्वसश्रमस्वेदबिन्दुरधिकण्ठमर्प्यताम्।
बाहुरैन्दवमयूखचुम्बितस्यन्दिचन्द्रमणिहारविभ्रमः।। 34 ।।

सरलार्थ-

भय और परिश्रम के कारण पसीने की बून्दों से युक्त, चन्द्रमा की किरणों से स्पृष्ट होने से द्रवित हुए चन्द्रकान्त मणि के हार के समान शोभा वाला और जान सा डालता हुआ (अपना) बाहु मेरे गले में डाला जाए।

स्वयं आकलन कीजिये-

अभ्याय प्रश्न 2

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिये-

1. उत्तररामचरित के प्रथम अङ्क का नाम लिखिये।
2. इस नाटक के मगंलाचरण में किसकी स्तुति है?
3. दशरथ की रानियाँ किसके यज्ञ में गई हुई थी?
4. ॠष्यश्रृंग के आश्रम से कौन आया है?
5. श्रीराम ने शरीरधारी महोत्सव के समान आनन्द देने वाला किसे कहा है?

4.5 उत्तररामचरित के प्रथम अङ्क के 35-51 पद्यों का अर्थ

विनिश्चेतुं शक्यो न सुखमिति वा दुःखमिति वा
प्रमोहो निद्रा वा किमु विषविसर्पः किमु मदः।
तव स्पर्शे स्पर्शे मम हि परिमूढन्द्रियगणो-
विकारश्चैतन्यं भ्रमयति च संमीलयति च।। 35 ।।

सरलार्थ-

तुम्हारे प्रत्येक स्पर्श के कारण इन्द्रियसमूह को मूढ करने वाला मनोविकार मेरी चेतना को भ्रमित कर रहा है और कभी संकुचित कर रहा है। इसलिए यह सुख है या दुःख है, गाढ मूर्च्छा है या निद्रा है, विष का प्रसार है या नशा है, निश्चय नहीं किया जा सकता है। इस पद्य में निश्चय नहीं किए जा सकने के कारण संशय है, अतः सन्देह अलंकार है।

म्लानस्य जीवकुसुमस्य विकासनानि संतर्पणानि सकलन्द्रियमोहनानि।
एतानि ते सुवचनानि सरोरुहाक्षि कर्णामृतानि मनसश्च रसायनानि।। 36 ।।

सरलार्थ-

हे कमल के समान नेत्रों वाली! तुम्हारे ये मधुर वचन मुरझाये हुए जीवन रूपी पुष्पों को विकसित करने वाले हैं, पूरी तरह तृप्त करने वाले, समस्त इन्द्रियों को विह्नल करने वाले, कानों में अमृतस्वरूप और मन की शक्ति को बढ़ाने वाले रसायन की तरह है। इस पद्य में जीवन में पुष्पों का आरोप होने से रूपक अलंकार है।

आविवाहसमयाद् गृहे वने शैशवे तदनु यौवने पुनः।
स्वापहेतुरनुपाश्रितोऽन्यया रामबाहुरुपधानमेष ते।। 37 ।।

सरलार्थ-

विवाह के समय से लेकर घर में, वन में, बचपन में और उसके बाद यौवन में, निद्रा का साधन, दूसरी स्त्री द्वारा अनाश्रित यह राम का बाहु तुम्हारा तकिया है।

इयं गेहे लक्ष्मीरियममृतवर्तिर्नयनयारसावस्याः स्पर्शो वपुषि बहुलश्चन्दनरसः।
अयंबाहुः कण्ठेशिशिरमसृणो मौक्तिकसरः किमस्यानप्रेयोयदि परमसह्यस्तु विरहः।। 38 ।।

सरलार्थ-

यह सीता घर में लक्ष्मी है, यह आँखों के लिए अ×जन की शलाका है। इसका यह स्पर्श शरीर में गाढ़ चन्दन का रस है और यह बाहु गले में शीतल और कोमल मोतियों का हार है। इसकी क्या वस्तु प्रिय नहीं है? यदि कोई असहनीय वस्तु है तो वह है इसका वियोग।

इस पद्य की प्रथम पंक्ति में सीता को गृहलक्ष्मी तथा नयनों की अमृतशलाका कहा है। अतः इस अंश में रूपकानुप्राणित उल्लेख अलंकार है। दूसरे तथा तीसरे चरण में रूपक है।

अद्वैतं सुखदुखयोरनुगतं सर्वास्ववस्थासु यद् विश्रामो
हृदयस्य यत्र जरसा यस्मिन्नहार्यो रसः।
कालेनावरणात्ययात्परिणते यत्स्नेहसारे स्थितं
भद्रं तस्य सुमानुषस्य कथमप्येकं हि तत्प्राप्यते।। 39 ।।

सरलार्थ-

जो दाम्पत्य सुख और दुःख में एकरूप है और सभी अवस्थाओं या परिस्थियों में अनुगत है, जिसमें हृदय का विश्राम है, जिसमें प्रीति बुढ़ापे में भी नहीं हट सकती है। जो समय में प्रतिबन्ध के हट जाने से परिपाक को प्राप्त हुए स्नेह रूपी उत्कृष्ट भाग में स्थित है, उस दाम्पत्य का वह कल्याणमय प्रेम बड़ी ही कठिनाई से मिलता है।

हा हा धिक् परगृहवासदूषणं यद्वैदेह्याः प्रशमितमद्भुतैरुपायैः।
एतत्तत्पुनरपि दैवदुर्विपाकादालर्कं विषमिव सर्वतः प्रसृप्तम्।। 40 ।।

सरलार्थ-

हाय! हाय! धिक्कार है! वैदेही सीता के दूसरे के घर में रहने के दोष को अनूठे उपाय से शान्त कर दिया था, वही यह भाग्य के दुष्परिणाम से पागल कुत्ते के विष के समान फिर से सर्वत्र फैल गया है। इस पद्य में सीता सम्बन्धी प्रवाद की उपमा पागल कुत्ते के विष से की गई है, इसलिए इस पद्य में उपमा अलंकार है।

सत्तां केनापि कार्येर्ण लोकस्याराधनं व्रतम्।
यत्पूरितं हि तातेन मां च प्राणांश्च मुञ्चता।। 41 ।।

सरलार्थ-

किसी भी कार्य से लोक का अनुरंजन करना सज्जनों का श्रेष्ठ कार्य है, इसको पिता जी ने मुझे और प्राणों को छोड़ते हुए पूर्ण किया था।

यत्सावित्रैर्दीपितं भूमिपालैर्लोकश्रेष्ठै: साधु शुद्धं चरित्रम्।
मत्संबन्धात्कश्मला किंवदन्ती स्याच्चेदस्मिन्हन्त धिग्मामधन्यम्।। 42 ।।

सरलार्थ-

लोक में श्रेष्ठ सूर्यवंशीय राजाओं द्वारा जिस प्रशस्त और पवित्र चरित्र को प्रकाशित किया गया था, उसमें यदि मेरे सम्बन्ध के कारण मलिन जनश्रुति हो तो मुझ पुण्यहीन को धिक्कार है।

त्वया जगन्ति पुण्यानि त्वय्यपुण्या जनोक्तयः।

नाथवन्तस्त्वया लोकास्त्वमनाथा विपत्स्यसे।। 43 ।।

सरलार्थ-

तुझसे संसार पवित्र है, तुम्हारे ही विषय में लोगों की अपवित्र उक्तियाँ हैं। तुम्हारे ही कारण से लोक स्वामीयुक्त हैं और तुम अनाथ होकर विपत्ति को प्राप्त होने वाली है। इस पद्य में पुण्य के विषय में अपुण्य उक्तियाँ कही गई है जिसके कारण यहाँ विरोधाभास अलंकार है।

इक्ष्वाकुवंशोऽभिमतः प्रजानां जातं च दैवाद्वचनीयबीजम्।

यच्चाद्भुतं कर्म विशुद्धिकाले प्रत्येतु कस्तद्धयतिदूरवृत्तम्।। 44 ।।

सरलार्थ-

इक्ष्वाकुवंश प्रजाओं को अभीष्ट है, परन्तु दुर्भाग्य से उसमें निन्दा का कारण हो गया है। शुद्धि के समय में जो विस्मयजनक कार्य हुआ वह भी बहुत दूर हुआ, उस पर कौन विश्वास करे।

शैशवात्प्रभृति पोषितां प्रियां सौहृदादपृथगाश्रयामिमाम्।

छद्मना परिददामि मृत्यवे सौनिको गृहशकुन्तिकामिव।। 45 ।।

सरलार्थ-

बाल्यकाल से लेकर पालित-पोषित की गई तथा स्नेह के कारण अनन्य आश्रयवाली इस सीता को छल से मृत्यु को मैं उसी प्रकार अर्पित कर रहा हूँ जिस प्रकार कसाई घर में पाली हुई चिड़िया को मृत्यु के लिए अर्पित कर देता है। इस पद्य में सीता की तुलना घर की पालतू चिड़िया से की है इसलिए इसमें उपमा अलंकार है।

अपूर्वकर्मचण्डालमयि मुग्धे विमुञ्च माम्।

श्रितासि चन्दनभ्रान्त्या दुर्विपाकं विषद्रुमम्।। 46 ।।

सरलार्थ-

हे भोली-भाली सीते! अभूतपूर्व कर्म करने वाले मुझ चाण्डाल को छोड़ दे। तुमने चन्दन वृक्ष की भ्रान्ति से विषवृक्ष का आश्रय लिया हुआ है।

दुःखसंवेदनायैव रामे चैतन्यमाहितम्।

मर्मोपघातिभिः प्राणैर्वज्रकीलायितं हृदि।। 47 ।।

सरलार्थ-

दुःख को भोगने के लिए ही राम में चेतना स्थापित है। मर्मस्थल पर प्रहार करने वाले प्राणों ने हृदय में वज्र की कील के सदृश आचरण किया है। इस पद्य में पहले पाद में उत्प्रेक्षा तथा दूसरे पाद में उपमा अलंकार है।

ते हि मन्ये महात्मानः कृतघ्नेन दुरात्मना।

मया गृहीतनामानः स्पृश्यन्त इव पाप्मना।। 48 ।।

सरलार्थ-

कृतघ्न और दुष्ट स्वभाव वाले मुझसे नाम लिए हुए वह पुण्यात्मा लोग पाप से मानों छुए जा रहे हैं। ऐस मैं मानता हूँ। इस पद्य में उत्प्रेक्षा अलंकार है।

विश्रम्भादुरसि निपत्य लब्धनिद्रामुन्मुच्य प्रियगृहिणीं गृहस्य शोभाम्।

आतङ्कस्फुरितकठोरगर्भगुर्वीं क्रव्याद्भ्यो बलिमिव निर्घृणः क्षिपामि।। 49 ।।

सरलार्थ-

विश्वास के कारण छाती पर पड़कर सोई हुई घर की लक्ष्मी तथा उद्वेग के कारण कम्पित हुए गर्भ से भारी प्रिय पत्नी को उठाकर हिंसक पशुओं के लिए ग्रासोपहार के समान फैंक रहा हूँ। इस पद्य में 'बलिमिव' में उपमा अलंकार है।

ऋषीणामुग्रतपसां यमुनातीरवासिनाम्।

लवणत्रसितः स्तोमः शरण्यं त्वामुपस्थितः।। 50 ।।

सरलार्थ-

यमुना के तट पर रहने वाले और कठोर तपस्या करने वाले ट्टषियों का समूह लवण नामक राक्षस से त्रस्त होकर रक्षा करने वाले आपके पास आया है।

जनकानां रघूणां च यत्कृत्स्नं गोत्रमङ्गलम्।

यां देवयजने पुण्ये पुण्यशीलामजीजनः।। 51 ।।

सरलार्थ-

जनकवंश तथा रघुवंश के राजाओं की जो (सीता) सम्पूर्ण कुल का मगंलस्वरूप है, पवित्र आचरण करने वाली जिसको आपने पवित्र यज्ञभूमि में उत्पन्न किया था।

स्वयं आकलन कीजिये-

अभ्यास प्रश्न 3

रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिये-

1. एतानि ते सुवचनानि----कर्णामृतानि मनसश्च रसायनानि।
2. कवि ने श्रीराम के नेत्रों में अमृत की अंजनशलाका ---- को कहा है।
3. अयोध्या में पागल कुते के विष के समान --- फैल गया है।
4. --- वंश प्रजाओं को प्रिय है।
5. किमस्या न प्रेयो यदि परमसह्यस्तु----।

4.5 सारांश

इस इकाई में चित्रदर्शन अङ्क के पद्यों का अर्थ उसमें प्रयुक्त अलंकारों के साथ स्पष्ट किया है। प्रथम अङ्क में चित्रशाला की योजना कवि की मौलिक कल्पना है जिसके द्वारा कवि की सहृदयता, भावुकता तथा कलात्मक नैपुण्य का परिचय प्राप्त होता है। इस दृश्य के द्वारा सीता के विरह को तीव्र बनाने के लिए सुन्दर पीठिका प्रस्तुत की गई है तथा इसमें भावी घटनाओं के बीजांकुरों का आभास भी दिखाया गया है।

4.6 कठिन शब्दावली

अवचनीयता = निर्दोषता।	नैसर्गिकी = स्वाभाविक।
प्रतनुविरलैः = अत्यन्त सूक्ष्म तथा विरल।	प्लुष्टान् = दग्ध हुए।
अशिथिलपरिरम्भैः = गाढ़ आलिङ्गनों के द्वारा।	स्यन्दिन = प्रवित होने वाला।
प्रिणत = परिपाक को प्राप्त हुआ।	प्रसृप्तम् = पैल गया है।
कश्मला = मलिन।	बीभत्स = घृणित।
कृतघ्नेन = अकृतज्ञ।	अशनम् = भोजन।

4.7 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1-	1. वागदेवता	2. द्वादश	3. शान्ता
	4. ऋष्यश्रृङ्ग	5. शतानन्द	
अभ्यास प्रश्न 2	1. चित्रदर्शन	2. सरस्वती	3. ऋष्यश्रृङ्ग
	4. अष्टावक्र	5. सीता के हाथ को	
अभ्यास प्रश्न 3	1. सरोरुहाक्षि	2. सीता	3. लोकापवाद
	4. इक्ष्वाकु	5. विरह:	

4.8 सहायक ग्रन्थ

1. उत्तररामचरितम्, महाकवि भवभूति, चौखम्बा संस्कृत सीरीज वाराणसी।
2. उत्तररामचरितम्, महाकवि भवभूति, व्याख्याकार आनन्दस्वरूप, सम्पादक: जनार्दनशास्त्री पाण्डेय, मोतीलाल बनारसीदास दिल्ली, वाराणसी।

4.9 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. उत्तररामचरित के प्रथम अङ्क की घटना पर प्रकाश डालिये।
2. निम्नलिखित पद्यों का सप्रसंग अर्थ लिखिये-
   प्रथम अङ्क - 14, 27, 31, 35, 37, 39 ।

3. निम्नलिखित सूक्तियों की व्याख्या कीजिये-

यथा स्त्रीणां तथा वाचां साधुत्वे दुर्जनो जनः। 1/5

सङ्कटा ह्याहिताग्नीनां प्रत्यवायैर्गृहस्थता। 1/8

तीर्थोदकं च वह्निश्च नान्यतः शुद्धिमर्हतः। 1/13

नैसर्गिकी सुरभिणः कुसुमस्य सिद्धा मूर्ध्नि स्थितिर्न चरणैरवताडनानि। 1/14

अपि ग्रावा रोदित्यपि दलति वज्रस्य हृदयम्। 1/28

हृन्मर्मव्रण इव वेदनां करोति। 1/30

कर्णामृतानि मनसश्च रसायनानि। 1/36

पञ्चम अध्याय

इकाई-5

उत्तररामचरित : द्वितीय अङ्क

सरंचना

5.1 प्रस्तावना

5.2 उद्देश्य

5.3 उत्तररामचरित के द्वितीय अङ्क के 1-15 पद्यों का अर्थ

- स्वयं आकलन अभ्यास प्रश्न-1

5.4 उत्तररामचरित के द्वितीय अङ्क के 16-30 पद्यों का अर्थ

- स्वयं आकलन अभ्यास प्रश्न-2

5 .5 सारांश

5.6 कठिन शब्दावली

5.7 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

5.8 सहायक ग्रन्थ

5.9 अभ्यास के लिए प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों, इस इकाई में भवभूति के प्रसिद्ध नाटक उत्तररामचरित के द्वितीय अङ्क पंचवटीप्रवेश में प्रयुक्त सभी पद्यों का सरलार्थ किया जायेगा। उत्तराराामचरित के गद्य भाग को पढ़ने के लिए सहायक ग्रन्थों का अध्ययन अवश्य करें। द्वितीय अङ्क का प्रारम्भ लगभग बारह वर्ष के अन्तराल के बाद हुआ है। इस बारह वर्ष की घटनाओं का संक्षेप से निर्देश करने के लिए अङ्क के आरम्भ में विष्कम्भक दिया गया है। अब इस नाटक के द्वितीय अङ्क के पद्यों को समझने का प्रयास करते हैं।

5-2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप समझने में सक्षम होगे-

- सभी पद्यों का अर्थ।
- पद्यों में प्रयुक्त अलंकार।
- पद्यों की व्याख्या।

5.3 उत्तररामचरित के द्वितीय अङ्क के 1-15 पद्यों का अर्थ

यथेच्छ भोग्यं वो वनमिदमयं मे सुदिवसः सतां
सद्भिः संगः कथमपि हि पुण्ययेन भवति।
तरुच्छाया तोयं यदपि तपसो योग्यमशनं

फलं वा मूलं वा तदपि न पराधीनमिह वः।। 1 ।।

सरलार्थ-

यह वन आपकी इच्छानुरूप उपभोग करने योग्य है। यह मेरा शुभ दिन है, क्योंकि सज्जनों का सज्जनों के साथ संगम बड़े पुण्य से होता है। वृक्षों की छाया, जल और जो कुछ तपस्वियों के योग्य भक्ष्य पदार्थ- फल अथवा मूल है, वह भी यहाँ तुम्हारे लिए पराधीन नहीं है।

'सतां सद्भिः संगः कथमपि हि पुण्ययेन भवति' इस पंक्ति के सामान्य अर्थ से प्रथम पंक्ति में निर्दिष्ट विशेष अर्थ का समर्थन हो रहा है। अतः यहाँ सामान्य से विशेष का समर्थन रूप अर्थान्तरन्यास अलंकार है।

प्रियप्राया वृत्तिर्विनयमधुरो वाचि नियमः प्रकृत्या कल्याणी मतिरनवगीतः परिचयः।
पुरो वा पश्चाद्वातदिदमविपर्यासितरसं रहस्यं साधूनामनुपधि विशुद्धं विजयते।। 2 ।।

सरलार्थ-

अत्यन्त प्रीतिकर व्यवहार, विनम्रता के कारण मधुर वाणीसंयम, स्वभाव से कल्याणकारिणी बुद्धि, अनिन्दित परिचय, पहले अथवा बाद में परिवर्तित न होने वाला अनुराग, कपटरहित, विशुद्ध, ऐसा सज्जनों का चरित्र सबसे उत्कृष्ट होता है।

इस पद्य में अप्रस्तुत सत्पुरुषों के चरित्र सामान्य के वर्णन से प्रस्तुत वनदेवता के चरित्र विशेष के वर्णन की प्रतीति होती है, अतः यहाँ अप्रस्तुतप्रशंसा अलंकार है।

अस्मिन्नगस्त्यप्रमुखाः प्रदेशे भूयांस उद्गीथविदो वसन्ति।
तेभ्योऽधिगन्तुं निगमान्तविद्यां वाल्मीकिपार्श्वादिह पर्यटामि।। 3 ।।

सरलार्थ-

इस प्रदेश में अगस्त्य आदि बहुत से उद्गीथ को जानने वाले रहते हैं। उनसे वेदान्तविद्या को प्राप्त करने के लिए वाल्मीकि के पास से यहाँ आई आ रही हूँ।

वितरति गुरुः प्राज्ञे विद्यां यथैव तथा जडे
न तु खलु तयोर्ज्ञाने शक्तिं करोत्यपहन्ति वा।
भवति हि पुनर्भूयान् भेदः फलं प्रति तद्यथा
प्रभवति शुचिबिम्बग्राहे मणिर्न मृदां चयः।। 4 ।।

सरलार्थ-

गुरु जिस प्रकार बुद्धिमान् छात्र को विद्या प्रदान करता है, उसी प्रकार मन्दबुद्धि छात्र को भी विद्या प्रदान करता है और दोनों के ज्ञान के विषय में न तो शक्ति उत्पन्न

करता है और न ही नाश करता है। उन दोनों के फल के प्रति उसी प्रकार का भेद हो जाता है जिस प्रकार निर्मल मणि प्रतिबिम्ब को ग्रहण करने में समर्थ है, मिट्टी का ढेला नहीं। इस पद्य में कुश, लव तथा आत्रेयी रूप प्रस्तुतों का उल्लेख न करके अप्रस्तुत प्राज्ञ और जड़ शिष्यों का उल्लेख किया है, अतः अप्रस्तुतप्रशंसा अलंकार है। अन्तिम पंक्ति में यथा पद से मणि से प्राज्ञ तथा मृदादि से जड़ शिष्य की उपमा दी गई है। अतः यहाँ उपमा अलंकार भी है।

मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः।

यत्क्रौञ्चमिथुनादेकमवधीः काममोहितम्।। 5 ।।

सरलार्थ-

हे व्याध! तू अनन्त वर्षों तक प्रतिष्ठा को मत प्राप्त हो, क्योंकि तूने क्रौंञ्च के जोड़े में से काम से मोहित एक (नर) को मार दिया।

स एष ते वल्लभबन्धुवर्गः प्रासङ्गिकीनां विषयः कथानाम्।

त्वां नामशेषामपि दृश्यमानः प्रत्यक्षदृष्टामिव नः करोति।। 6 ।।

सरलार्थ-

प्रसङ्ग से आयी हुई कथाओं के विषय में और दिखाई देते हुए वे ही तुम्हारे प्रियबन्धु लोग नाम मात्र से अवशिष्ट भी तुमको हमें प्रत्यक्ष देखी जाती हुई की तरह कर रहे हैं। इस पद्य में इव शब्द का प्रयोग क्रिया के साथ हो रहा है इसलिए उत्प्रेक्षा अलंकार है।

वज्रादपि कठोराणि मृदूनि कुसुमादपि।

लोकोत्तराणां चेतांसि को नु विज्ञातुमर्हति।। 7 ।।

सरलार्थ-

वज्र से भी कठोर और फूल से भी कोमल अलौकिक महापुरुषों के चित्तों को कौन जान सकता है। इस पद्य में कठोर और कोमल इन परस्पर विरुद्ध गुणों का संघठन वर्णित है, अतः विषम अलंकार है। साथ ही प्रस्तुत राम का उल्लेख न करके अप्रस्तुत लोकोत्तर चरित व्यक्तियों का उल्लेख है, अतः अप्रस्तुतप्रशंसा भी है। इन दोनों का अंगागिभाव संकर है।

शम्बूको नाम वृषलः पृथिव्यां तप्यते तपः।

शीर्षच्छेद्यः स ते राम! तं् हत्वा जीवय द्विजम्।। 8 ।।

सरलार्थ-

शम्बूक नाम का शूद्र पृथ्वी पर तपस्या कर रहा है। हे राम! आपको उसका सिर काटना चाहिए, उसे मारकर ब्राह्मण को जीवित करो।

कण्डूलद्विपगण्डपिण्ड कषणोत्कम्पेन संपातिभि
र्घमस्रंसितबन्धनैः स्वकुसुमैरर्चन्ति गोदावरीम्।
छायापरिस्करमाणविष्किरमुखव्याकृष्टकीटत्वचः
कूजत्क्लान्तकपोतकुक्कुटकुलाः कूले कुलायद्रुमाः।। 9 ।।

सरलार्थ-

किनारे पर छाया में जीविका के लिए किरोदते हुए पक्षियों की चोंचों से खींचकर निकाले गये हैं कीट जिनसे ऐसी छालों वाले, कूजते हुए और खेदयुक्त कबूतरों तथा मुर्गों के समूह हैं जिन पर ऐसे, पक्षियों के घोंसलों से युक्त वृक्ष, हाथियों की कण्डूयुक्त कपोलभित्तियों के घर्षण के कारण हिलने से समूहरूप में नीचे गिरने वाले और घाम के कारण शिथिल वृन्तों वाले अपने पुष्पों से गोदावरी को पूजते हैं।

इस पद्य में स्वभावोक्ति अलंकार है।

रे हस्त दक्षिण मृतस्य शिशोर्द्विजस्य जीवातवे विसृज शूद्रमुनौ कृपाणम्।
रामस्य गात्रमसि निर्भरगर्भखिन्न सीता विषासनपटोः करुणा कुतस्ते।। 10 ।।

सरलार्थ-

हे दाहिने हाथ! ब्राह्मण के मरे हुए बालक के जीवन के लिए शूद्र मुनि पर तलवार छोड़, पूर्ण गर्भ के भार से अलसाई हुई सीता के निर्वासन में निपुण राम का तू अंग है, तूझे दया कैसे? इस पद्य में दया न आने कारण पूर्ण गर्भ के भार से सीता का परित्याग बताया गया है। इसलिए काव्यलिङ्ग अलंकार है।

दत्ताभये त्वयि यमादपि दण्डधारे संजीवितः शिशुरसौ मम चेयमृद्धिः।
शम्बूक एष शिरसो चरणौ नतस्ते सत्सङ्गजानि निधनान्यपि तारयन्ति।। 11 ।।

सरलार्थ-

यमराज से भी अभयदान देकर आपके दण्डधारी होने पर वह बालक जीवित हो गया है और समृद्धि हो गई। यह शम्बूक शिर से आपके चरणों को नमस्कार करता है। सत्सङ्गति से उत्पन्न मृत्यु भी (भवसागर)पार उतार देती है। इस पद्य में आरम्भिक सामान्य पंक्तियों के अर्थ का अन्तिम विशेष पंक्ति के अर्थ के साथ समर्थन होने से अर्थान्तरन्यास अलंकार है।

यत्रनन्दाश्च मोदाश्च यत्र पुण्याश्च संपदः।
वैराजा नाम ते लोकास्तैजसा सन्तु ते शिवाः।। 12 ।।

सरलार्थ-

जहाँ आनन्द (आत्मा के अनुभव से उत्पन्न हर्ष) और मोद (दिव्य विषयों के अनुभव से उत्पन्न हर्ष) और पवित्र सम्पदाएँ हैं, वह तेजोमय तथा मङ्गलकारी वैराज नामक लोक तुम्हारे हो।

अन्वेष्टव्यो यदसि भुवने लोकनाथः शरण्यो
मामनिवष्यन्निह वृषलकं योजनानां शतानि।
क्रान्त्वा प्राप्तः स इह तपसां संप्रसादोऽन्यथा चेत्
क्वायोध्यायाः पुनरुपगमो दण्डकायां वने वः।। 13 ।।

सरलार्थ-

लोक में ढूँढने योग्य, लोकपति और शरण देने वाले आप जो मुझ कुत्सित शूद्र को ढूँढते हुए सैकड़ों योजनों को लाँघकर यहाँ आए, वह तपस्या का ही फल है, नहीं तो आपका अयोध्या से दण्डकारण्य में फिर आना कहाँ सम्भव होता।

स्निग्धश्यामाः क्वचिदपरतो भीषणाभोगरूक्षाः
स्थाने स्थाने मुखरकुकुभो झाघ्कृतैर्निर्झराणाम्।
एते तीर्थाश्रमगिरिसरिद् गर्तकान्तारमिश्राः
संदृश्यन्ते परिचितभुवो दण्डकारण्यभागाः।। 14 ।।

सरलार्थ-

कहीं तो रमणीय तथा हरे भरे और दूसरी ओर भयंकर विस्तार के कारण रूखे, स्थान-स्थान पर झरनों के झंकारयुक्त शब्दों से प्रतिध्वनित दिशाओं वाले, तीर्थ, आश्रम, पर्वत, नदी, गड्ढे और दुर्गम मार्गों से युक्त, ये परिचित भूमियों वाले दण्डकारण्य के भाग दिखाई पड़ रहे हैं। इस पद्य में प्रकृति का यथावत् चित्रण होने स्वभावोक्ति अलंकार है।

चतुदर्श सहस्राणि रक्षसां भीमकर्मणम्।
त्रयश्च दूषणखरत्रिमूर्धानो रणे हताः।। 15 ।।

सरलार्थ-

भयानक या क्रूर कर्म करने वाले राक्षसों में से चौदह हजार तथा दूषण, खर और त्रिमूर्द्धा ये तीन भी युद्ध में मारे गये।

स्वयं आकलन कीजिए –

अभ्यास प्रश्न 1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए –

1. उत्तररामचरित के द्वितीय अङ्क का नाम क्या है?
2. द्वितीय अङ्क के प्रथम पद्य में कौन सा अलंकार निहित है?

3. शम्बूक का वध किसने किया था?
4. शंबूक वध का वर्णन किस अङ्क में किया गया है?
5. राम ने कितने राक्षसों का वध किया था?

5.4 उत्तररामचरित के द्वितीय अङ्क के 16-30 पद्यों का अर्थ

निष्कूजस्तिमिताःक्वचित्क्वचिदपप्रोच्चण्डसत्त्वस्वनाः
स्वेच्छासुप्तगभीरभोगभुजगश्वासप्रदीप्ताग्नयः।
सीमानः प्रदरोदरेषु विरलस्वल्पाम्भसे यास्वयं
तृष्यद्भिः प्रतिसूर्यकैरजगरस्वेदद्रवः पीयते।। 16 ।।

सरलार्थ-

कहीं पर चिड़ियों के चहकने से रहित और निश्चल, कहीं पर भयघङ्कर जीवों की भयानक शब्दों वाली, अपनी इच्छा से सोये हुए बड़े तथा भयानक सर्पों के श्वासों से प्रदीप्त अग्नियों वाली बिलों के मध्य-भागों में विद्यमान थोड़े जलों वाली प्रान्तभूमियाँ हैं, जिनमें प्यासे कृकलासों द्वारा यह अजगरों के पसीने का जल पिया जा रहा है। इस पद्य में प्रकृति के भयावने दृश्य का यथावत् वर्णन होने से स्वभावोक्ति अलंकार है।

पश्यामि च जनस्थानं भूतपूर्वखरालयम्।
प्रत्यक्षानिव वृत्तान्तान्पूर्वाननुभवामि च।। 17 ।।

सरलार्थ-

मैं खर राक्षस के पूर्वकालीन निवास जनस्थान को देख रहा हूँ और पहले वृत्तान्तों का प्रत्यक्ष की तरह अनुभव भी कर रहा हूँ।

त्वया सह निवत्स्यामि वनेषु मधुगन्धिषु।
इतीहारमतैवासौ स्नेहस्तस्याः स तादृशः।। 18 ।।

सरलार्थ-

तुम्हारे साथ मकरन्द के जैसे वनों में निवास करूँगी, इस प्रकार वह यहाँ आनन्दित ही होती थी। उसका वह स्नेह उस प्रकार था।

न किंचिदपि कुर्वाणः सौख्यैर्दुःखान्यपोहति।
तत्तस्य किमपि द्रव्यं यो हि यस्य प्रियो जनः।। 19 ।।

सरलार्थ-

जो जन जिसका प्रिय है, वह उसका अनिर्वचनीय पदार्थ है। वह कुछ भी न करता हुआ सुखों से दुःखों को दूर करता है।

इह समदशकुन्ताक्रान्तवानीरमुक्तप्रसवसुरभिशीतस्वच्छतोया वहन्ति।
फलभरपरिणामश्यामजम्बूकनिकुञ्जस्खलनमुखरभूरिड्डोतसो निर्झरिण्यः।। 20 ।।

सरलार्थ-

यहाँ पर मद वाले पक्षियों से आक्रान्त लताओं के पुष्पों से सुगन्धित, शीतल तथा निर्मल जल से युक्त तथा फलसमूह के पकने से श्याम वर्ण वाले घने जामुन वृक्षों के कु×जों में गिरने से शब्दायमान बहुतेरे प्रवाहों से युक्त नदियाँ बहती है। इस पद्य में प्रकृति के कोमल रूप का यथावत् चित्रण होने से स्वभावोक्ति अलंकार है।

दधति कुहरभाजामत्र भल्लूकयूनामनुरसितगुरूणि स्त्यनमम्बूकृतानि।
शिशिरकटुकषायः स्त्यायते सल्लकीनामिभदलितविकीर्णग्रन्थिनिष्यन्दगन्धः।। 21 ।।

सरलार्थ-

यहाँ बिलों में रहने वाले तरुण भालुओं की प्रतिध्वनियों से बढ़े या फैले हुए थूक से युक्त शब्द वृद्धि को धारण करते हैं। गजभक्ष्या नामक लताओं का ठण्डा, तीव्र और सुगन्धित, हाथियों द्वारा मर्दित तथा बिखरे हुए पर्वों (गाँठों) के रस का गन्ध बढ़ रहा है। इस पद्य में प्रकृति के कठोर रूप का यथावत् चित्रण होने से स्वभावोक्ति अलंकार है।

एतत्तदेवहि वनं पुनरद्य दृष्टं यस्मिन्नभूम चिरमेव पुरा वसन्तः।
आरण्यकाश्च गृहिणश्च रताः स्वधर्मे सांसारिकेषु च सुखेषु वयं रसज्ञाः।। 22 ।।

सरलार्थ-

यह वही वन आज पुनः देखा है जहाँ पहले दीर्घकाल तक रहते हुए हम, स्वधर्मों में तत्पर वानप्रस्थ तथा सांसारिक सुखों के स्वाद का अनुभव करने वाले गृहस्थ भी हुए थे।

एते त एव गिरयो विरुवन्मयूरास्तान्येव मत्तहरिणानि वनस्थलानि।
आमञ्जुवञ्जुलतानि च तान्यमूनि नीरन्ध्रनीलनिचुलानि सरित्तटानि।। 23 ।।

सरलार्थ-

यह वही कूजते हुए मयूरों वाले पर्वत हैं, वही मदयुक्त हरिणों वाली वनभूमियाँ हैं और वही परम मनोहर वेतस लताओं से युक्त तथा अवकाशरहित और श्याम हिज्जलवृक्ष वाले नदियों के तट हैं।

मेघमालेव यश्चायमारादपि विभाव्यते।
गिरिः प्रस्रवणः सोऽयं यत्र गोदावरी नदी।। 24 ।।

सरलार्थ-

यह जो समीप से से भी मेघों की श्रेणी के समान प्रतीत हो रहा है, वही यह प्रस्रवण पर्वत है, जिसके समीप गोदावरी नदी है।

अस्यैवासीन्महति शिखरे गृधराजस्य
वासस्तस्याधस्ताद्वयमपि रतास्तेषु पर्णोटजेषु।
गोदावर्याः पयसि विततानोकहश्यामलश्रीरन्तः
कूजन्मुखरशकुनो यत्र रम्यो वनान्तः।। 25 ।।

सरलार्थ-

इस (प्रस्रवण पर्वत) के बड़े शिखर पर गृधराज का निवास था। उसके नीचे हम लोग भी उन पर्णशालाओं में रहते थे, जिन (पर्णशालाओं) के समीप गोदावरी के जल में फैली हुई हरे वृक्षों की कान्ति है जहाँ पर ऐसा, बीच में कूजते हुए हैं गाने वाले वक्षी जहाँ पर ऐसा रमणीय वनप्रदेश है। इस पद्य में इवादि पद के अभाव से प्रतीयमान उत्प्रेक्षा अलंकार है।

चिराद्वेगारम्भी प्रसूत इव तीव्रो विषरसः
कुतश्चित्संवेगात्प्रचल इव शल्यस्य शकलः।
व्रणो रूढग्रन्थिः स्फुटित इव हृन्मर्मणि पुनः
पुराभूतः शोको विकलयति मां नूतन इव।। 26 ।।

सरलार्थ-

बहुत समय के पश्चात् वेग के साथ आरम्भ होने वाले और फैलते हुए अत्युग्र विषरस के समान, किसी भी हेतु से जोर से हिले हुए वाणाग्र के खण्ड के समान तथा उगे हुए ग्रन्थि वाले फिर फूटे हुए हृदय के मर्म के फोड़े के समान गाढ शोक मुझे विह्नल बना रहा है और चेतनाशून्य कर रहा है। इस पद्य में उत्प्रेक्षा अलंकार है।

पुरा यत्र स्रोतः पुलिनमधुना तत्र सरितां
विपर्यासं यातो घनविरलभावः क्षितिरुहाम्।
बहोर्दृष्टं कालादपरमिव मन्ये वनमिदं
निवेशः शैलानां तदिदमिति बुद्धिं द्रढयति।। 27 ।।

सरलार्थ-

पहले जहाँ नदियों का प्रवाह था, अब वहाँ तट है। वृक्षों की सघनता तथा विरलता वैपरीत्य को प्राप्त हो गई है। बहुत समय के पश्चात् देखा हुआ यह वन मुझे अन्य जैसा लग रहा है, पर्वतों की स्थिति 'यह वही वन है' इस प्रकार से बुद्धि को दृढ़ कर रही है। इस पद्य में अनुमान अलंकार है।

यस्यां ते दिवसास्तया सह मया नीता यथा

स्वे गृहे तत्सम्बन्धकथाभिरेव सततं दीर्घाभिरास्थीयत।
एकः सम्प्रति नाशितप्रियतमस्तामेव रामः
कथंपापः पंचवटीं विलोकयतु वा गच्छत्वसम्भाव्य वा।। 28 ।।

सरलार्थ-

जिस पंचवटी में मैंने उस (सीता) के साथ अपने घर की तरह उन दिनों को बिताया। जिस पंचवटी विषयक लम्बी-लम्बी कथाओं से ही हम अयोध्या में ही रहते थे। इस समय प्रियतमा को नष्ट करने वाला अकेला पापी राम उस पंचवटी को कैसे देखे अथवा बिना सत्कार किए कैसे जाय? इस पद्य में यथा शब्द का प्रयोग होने से उपमा अलंकार है।

कूजत्कुंजकुटीरकौशिकघटाघूत्कारवत्कीचक
स्तम्बाडम्बरमूकमौकुलिकुलः क्रौञ्चाभिधोऽयं गिरिः।
एतस्मिन्प्रचलाकिनां प्रचलतामुद्वेजिताः कूजितैरुद्वेल्लन्ति
पुराणरोहिण तरुस्कन्धेषु कुम्भीनसाः।। 29 ।।

सरलार्थ-

यह कुंजरूपकुटीरो में कूजते हुए उल्लू पक्षियों के समूहों के घूत्कार शब्दों से युक्त, कीचकों के गुच्छों की तुमुलध्वनि से निःशब्द कौवों के समूहों वाला क्रौञ्चावत नामक पर्वत है। इस (पर्वत) पर चलते हुए मयूरों की कूजनध्वनि से डराये हुए अजगर पुराने चन्दन वृक्षों के तनों पर इधर-उधर चल रहे हैं। इस पद्य में कुजरूपी कुटीरों में रूपक अलंकार है।

एते ते कुहरेषु गद्गदनदद्गोदावरीवारयो
मेघालम्बितमौलिनीलशिखराः क्षोणीभृतो दाक्षिणाः।
न्योन्यप्रतिघातसङ्कुलचलत्कल्लोलकोलाहलैरुत्तालास्त
इमे गभीरपयसः पुण्याः सरित्सङ्गमाः।। 30 ।।

सरलार्थ-

गुफ़ाओं में कल कल शब्द कर चलने वाले गोदावरी के जल से युक्त और मेघों से अवलम्बित शिखर के अग्रभाग वाले, नीलवर्ण की चोटियों से युक्त ये दक्षिण दिशावर्ती पर्वत है। परस्पर आघात से अत्यधिक चञ्चल महातरङ्गो के कोलाहलों से वेगवाले ये गहरे जल से युक्त पवित्र नदियों के सङ्गम हैं।

स्वयं आकलन कीजिये-

अभ्यास प्रश्न 2

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर शुद्ध अथवा अशुद्ध में दीजिये-

1. उत्तररामचरित के द्वितीय अङ्क का नाम दण्डकप्रवेश है।
2. वेदान्तविद्या का प्राप्त करने के लिए वाल्मीकि के आश्रम से दण्डकवन में आत्रेयी

विचरण करती है।

3. गृधराज जटायु का निवास हिमगिरि के शिखर पर था।
4. बारह वर्षों के बाद श्रीराम सीता को ढूँढने के लिए फिर दण्डकवन में जाते हैं।
5. श्रीराम लक्ष्मण के बिना पुनः पंचवटी में प्रवेश करने से संकोच करते हैं।

5.5 सारांश

इस इकाई में पञ्चवटीप्रवेश नामक अङ्क के पद्यों का अर्थ उसमें प्रयुक्त अलंकारों के साथ स्पष्ट किया है। द्वितीय अङ्क के आरम्भ में विष्कम्भक में आत्रेयी और वासन्ती के सम्वाद द्वारा कवि ने बारह वर्षों की घटनाओं की सूचना दी है। इस अङ्क में शम्बूक की घटना के द्वारा दण्डकारण्य का मनोरम चित्र प्रस्तुत किया गया है। प्राकृतिक दृश्यों के मोहक वर्णन की दृष्टि से यह अङ्क अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है, पर इसका नाटकीय व्यापार अवरुद्ध हो गया है।

5.6 कठिन शब्दावली

अधवगवेशा = पथिक वेश वाली

अनवगीत: = अनिन्दित

उदगीथविद: = वेद के ज्ञाता

विसृष्ट: = छोड़ा गया है

सोरस्ताड्म् = छाती पीटते हुए

शिवा: = मंगलकारी

तरूछाया = वृक्षों की छाया

भूयांस: = बहुत से

शुचि: = स्वच्छ,निर्मल

मेध्य: = यज्ञीय

द्विप = हाथी

अन्वेष्टव्य: = ढूँढे जाने योग्य

5.7 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1	1. पंचवटी प्रवेश	2. अर्थान्तरन्यास	3. राम ने
	4. द्वितीय अङ्क	5. हजारों	
अभ्यास प्रश्न 2	1. अशुद्ध	2. शुद्ध	3. अशुद्ध
	4. अशुद्ध	5. अशुद्ध	

5.8 सहायक ग्रन्थ

1. उत्तररामचरितम्, महाकवि भवभूति, चौखम्बा संस्कृत सीरीज वाराणसी।
2. उत्तररामचरितम्, महाकवि भवभूति, व्याख्याकार आनन्दस्वरूप, सम्पादक : जनार्दनशास्त्री पाण्डेय, मोतीलाल बनारसीदास दिल्ली, वाराणसी।

5.9 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. उत्तररामचरित के द्वितीय अङ्क की घटना पर प्रकाश डालिये।

2. निम्नलिखित पद्यों का सप्रसंग अर्थ लिखिये-

द्वितीय अङ्क - 1, 2, 4, 7, 8, 14, 16, 23, 26, 29 ।

3. निम्नलिखित सूक्तियों की व्याख्या कीजिये।

सतां सद्भिः संगः कथमपि हि पुण्येन भवति। 2/1

वितरति गुरुः प्राज्ञे विद्यां यथैव तथा जडे। 2/4

प्रभवति शुचिबिम्बग्राहे मणिर्न मृदां चयः। 2/4

वज्रादपि कठोराणि मृदूनि कुसुमादपि। 2/7

सत्सङ्गजानि निधनान्यपि तारयन्ति। 2/11

षष्ठम अध्याय
इकाई-6
उत्तररामचरित : तृतीय अङ्क

संरचना

6.1 प्रस्तावना
6.3 उद्देश्य
6.3 उत्तररामचरित के तृतीय अङ्क के 1-16 पद्यों का अर्थ
- स्वयं आकलन अभ्यास प्रश्न-1

6.4 उत्तररामचरित के तृतीय अङ्क के 17-32 पद्यों का अर्थ
- स्वयं आकलन अभ्यास प्रश्न-2

6.5 उत्तररामचरित के तृतीय अङ्क के 33-48 पद्यों का अर्थ
- स्वयं आकलन अभ्यास प्रश्न-3

6.6 सारांश
6.7 कठिन शब्दावली
6.8 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर
6.9 सहायक ग्रन्थ
6.10 अभ्यास के लिए प्रश्न

6.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों, इस इकाई में उत्तररामचरित के तृतीय अङ्क के पद्यों को समझाने का प्रयास किया गया है। तृतीय अङ्क का आरम्भ विष्कम्भक में प्रयुक्त तमसा और मुरला दो नदियों के संवाद से लक्ष्मण के द्वारा सीता को अरक्षित छोड़कर चले जाने, अपमानवश सीता का गंगा में कूदकर अपने जीवन को समाप्त करने का प्रयास तथा वहाँ पर लव-कुश के उत्पन्न होने व उनकी बारहवीं वर्षगाँठ के अवसर पर गंगा के आदेश पर सीता को सूर्य की अर्चना करने के वार्त्तालाप में प्रयुक्त पद्यों का सरलार्थ किया जायेगा। उसके पश्चात् श्रीराम के दण्डकवन में आगमन के पश्चात् पूर्व की बातों को स्मरण करके सीता के वियोग में बार-बार अचेतन होने की घटना में प्रयुक्त पद्यों को वर्णित किया जायेगा।

6.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जानने में सक्षम होंगे-
- तृतीय अङ्क की विषयवस्तु में प्रयुक्त पद्यों का अर्थ।

- इस अङ्क में प्रयुक्त पद्यों के अलंकार।

6.3 उत्तररामचरित के तृतीय अङ्क के 1-16 पद्यों का अर्थ

अनिर्भिनो गभीरत्वादन्तर्गूढघनव्यथः।
पुटपाकप्रतीकाशो रामस्य करुणो रसः।। 1 ।।

सरलार्थ-

गम्भीरता के कारण बाहर अप्रकाशित, भीतर ही भीतर छिपी हुई गाढ वेदना वाला राम का करुण रस पुटपाक के सदृश है। इस पद्य में उपमा अलंकार है।

वीचीवातैः शीकरक्षोदशीतैराकर्षद्भिः पद्मकिञ्जल्कगन्धान्।
मोहे मोहे रामभद्रस्य जीवं स्वैरं स्वैरं प्रेरितैस्तर्पयेति।। 2 ।।

सरलार्थ-

जलकणों के चूर्ण से शीतल, कमलों के केसरों को हरण करने वाले, मन्द-मन्द प्रेषित किये हुए तरङ्ग वायुओं से श्रेष्ठ राम की चेतना प्रत्येक मूर्च्छा में प्रीणित करना।

ईदृशानां विपाकोऽपि जायते परमाद्भुतः।
यत्रोपकरणीभावमायात्येवंविधो जनः।। 3 ।।

सरलार्थ-

ऐसे लोगो का दशाविपर्यास भी अत्यन्त विस्मयजनक होता है, जिसमें इस प्रकार के (गंगा और पृथ्वी के सरीखे) लोग उपकारक बनते हैं।

परिपाण्डुदुर्बलकपोलसुन्दरं दधती विलोलकबरीकमाननम्।
करुणस्य मूर्तिरथवा शरीरिणी विरहव्यथेव वनमेति जानकी।। 4 ।।

सरलार्थ-

गोदावरी के अगाध जलवाले जलाशय से निकलकर यह अति पाण्डुवर्णवाले और कृश कपोलों से सुन्दर तथा चञ्चल केशविन्यास से युक्त मुख को धरण करती हुई, करुणरस की मूर्ति अथवा देहधारिणी वियोगवेदना के समान सीता वन में प्रवेश करती है। इस पद्य मे उत्प्रेक्षा अलंकार है।

किसलयमिव मुग्धं बन्धनाद्विप्रलूनं हृदयकमनशोषी दारुणो दीर्घशोकः।
ग्लपयति परिपाण्डु क्षाममस्याः शरीरं शरदिज इव घर्मः केतकीगर्भपत्रम्।। 5 ।।

सरलार्थ-

हृदयरूपी पुष्प को सुखाने वाला, कठोर, दीर्घकालव्यापी शोक वृन्त से टूटे हुए मनोहर नवपल्लव के समान, अतिशय पाण्डुवर्ण वाले तथा कृश, इस सीता के शरीर को उसी प्रकार म्लान बना रहा है, जैसे शरद् ऋतु में उत्पन्न धूप केतकी पुष्प के भीतर स्थित

पत्र को मलिन कर देती है। इस पद्य में सीता के शरीर की उपमा केतकी पुष्प से की है, इसलिए उपमा अलंकार है।

अपरिस्फुटनिस्वाने कुतस्त्येऽपि त्वमीदृशी।
स्तनयित्नोर्मयूरीव चकितोत्कण्ठितं स्थिता।। 7 ।।

सरलार्थ-

मेघ के अस्पष्ट शब्द से मयूरी की तरह तुम, कहीं से हुए अस्पष्ट शब्द से इस तरह चकित और उत्कण्ठित हो रही हो। इस पद्य में उपमा अलंकार है।

यत्र द्रुमा अपि मृगा अपि बन्धवो मे यानि प्रियासहचरश्चिरमध्यवात्सम्।
एतानि तानि बहुनिर्झरकन्दराणि गोदावरीपरिसरस्य गिरेस्तटानि।। 8 ।।

सरलार्थ-

जहाँ वृक्ष और पशु भी मेरे बान्धव थे, जिन स्थानों पर प्रिया अर्थात् सीता के साथ मैं बहुत कालतक निवास किया, ऐसे वे ही ये गोदावरी के समीपवर्ती पर्वत के बहुत से झरनों तथा कन्दराओं वाले प्रस्थभाग है।

अन्तर्लीनस्य दुःखाग्नेरद्योद्दामं ज्वलिष्यतः।
उत्पीड एव धूमस्य मोहः प्रागावृणोति माम् ।। 9 ।।

सरलार्थ-

अन्तकरण में छिपी हुई और आज पीछे अत्यन्त जलने वाली दुःखाग्नि की धुएँ की राशि की तरह मूर्च्छा मुझको पहले ही आच्छादित कर रही है। इस पद्य में दुःख पर अग्नि के आरोप होने से रूपक अलंकार है। मोह या मूर्च्छा की उपमा धुएँ से दी गई है।

त्वमेव ननु कल्याणि! सजीञवय जगत्पतिम्।
प्रियस्पर्शो हि पाणिस्ते तत्रैष निरतो जनः।। 10 ।।

सरलार्थ-

हे कल्याणि! तुम ही जगत् के स्वामी श्रीराम को होश में लाओ, क्योंकि तुम्हारा हाथ प्रीतिकर स्पर्श वाला है, उसी में यह जन अनुरक्त है। इस पद्य में काव्यलिङ्ग अलंकार है क्योंकि सीता के स्पर्श को राम की चेतना का कारण कहा है।

आश्च्योतनं नु हरिचन्दनपल्लवानां निष्पीडितेन्दुकरकन्दलजो नु सेकः।
आतप्तजीवितमनःपरितर्पणोऽयं संजीवनौषधिरसौ हृदि नु प्रसक्तः।। 11 ।।

सरलार्थ-

क्या हृदय पर हरिचन्दन के पल्लवों का रस टपक रहा है? क्या निचोड़े हुए चन्द्रकिरणरूपी नवाङ्कुरों से किया हुआ सेचन है? क्या यह संतप्त जीवन को पुनः

आप्यायित करने वाला, संजीवनी औषधि का रस हृदय पर छिड़का गया है? इस पद्य में सन्देह अलंकार है।

स्पर्शः पुरा परिचितो नियतं स एव संजीवनश्च मनसः परितोषणश्च।

सन्तापजां सपदि यः परिहृत्य मूर्च्छामानन्दनेन जडतां पुनरातनोति।। 12 ।।

सरलार्थ-

निश्चित रूप से समाश्वासन देने वाला और मन को सन्तुष्ट करने वाला यह वही पूर्व परिचित स्पर्श है, जो वियोग दुःख से उत्पन्न मूर्च्छा को हटाकर आनन्द विधान द्वारा पुनः जड़ता को फैला रहा है।

तटस्थं नैराश्यादपि च कलुषं विप्रियवशाद्
वियोगे दीर्घेऽस्मिझटिति घटनात्स्तम्भितमिव।
प्रसन्नं सौजन्याद्दयितकरुणैर्गाढकरुणं
द्रवीभूतं प्रेम्णा तव हृदयमस्मिन् क्षण इव।। 13 ।।

सरलार्थ-

तुम्हारा हृदय इस क्षण में आशा के अभाव से उदासीन और अहित के कारण अप्रसन्न, इस लम्बे वियोग में आकस्मिक समागम से जडीभूत सा, सुजनता से प्रीतियुक्त, प्रिय के शोकों से घने शोक वाला, प्रेम से पिघला हुआ सा है। इस पद्य में उत्प्रेक्षा अलंकार है।

प्रसाद इव मूर्तस्ते स्पर्शः स्नेहार्द्रशीतलः।
अद्याप्यानन्दयति मां त्वं पुनः क्वासि नन्दिनि।। 14 ।।

सरलार्थ-

तुम्हारा स्नेह से आर्द्र और शीतल स्पर्श मूर्तिमान अनुग्रह के समान अभी मुझे आनन्दित कर रहा है। परन्तु हे आनन्द देने वाली, तुम कहाँ हो? इस पद्य में उत्प्रेक्षा अलंकार है।

येनोद्गच्छद्बिसकिसलयस्निग्धदन्ताङ्कुरेण
व्याकृष्टस्ते सुतनु लवलीपल्लवः कर्णमूलात्।
सोऽयं पुत्रस्तव मदमुचां वारणानां
विजेता यत्कल्याणं वयसि तरुणे भाजनं तस्य जातः।। 15 ।।

सरलार्थ-

हे सुन्दर शरीर वाली, उगते हुए मृणाल के अङ्कुर के समान कोमल नवीन दाँत वाले (करिशावक) के द्वारा तुम्हारे कर्णमूल से लवली लता का कोमल पत्ता खींचा गया

था, मद चुआने वाले हाथियों को जीतने वाला वही यह तुम्हारा पुत्र, यौवन में जो मङ्गल है उसका पात्र हो गया है। इस पद्य में उपमा अलंकार है।

लीलोत्खातमृणालकाण्डकवलच्छेदेषु संपादिताः
पुष्यत्पुष्करवासितस्य पयसो गण्डूषसंक्रान्तयः।
सेकः शीकरिणा करेण विहितः
कामं विरामे पुनर्यत्स्नेहादनरालनालनलिनीपत्रतपत्रं धृतम्।। 16 ।।

सरलार्थ-

इसने अनायास ही उखाड़े हुए मृणालदण्ड के ग्रासों के अन्त में खिले हुए कमलों से सुरभित जल के कुले घुमाये जा रहे हैं। जलकणों से युक्त सूण्ड से यथेष्ट सेचन किया गया है। फिर अन्त में प्रेम से सीधी नाल वाले कमलिनी पत्र रूपी छत्र को धूप हटाने के लिए धारण किया गया है। इस पद्य में हाथी की क्रीड़ा का उल्लेख होने से स्वभावोक्ति तथा कमलिनी के पत्ते में आतप पत्र का आरोप होने से रूपक अलंकार है।

स्वयं आकलन कीजिए-

अभ्यास प्रश्न -1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए-

1. करुण रस की मूर्ति किसे कहा गया है?
2. सीता के शरीर की उपमा किससे की गई है?
3. जगत् के स्वामी कहकर किसे सम्बोधित किया गया है?
4. प्रिय के शोक से घनीभूत शोक किसे कहा है ?
5. कमलिनी के पते में आतपपत्र का आरोप होने से कौन सा अलंकार बनता है?

6.4 उत्तररामचरित के तृतीय अङ्क के 17-32 पद्यों का अर्थ

अन्तःकरणतत्त्वस्य दम्पत्योः स्नेहसंश्रयात्।
आनन्दग्रन्थिरेकोऽयमपत्यमिति बध्यते।। 17 ।।

सरलार्थ-

पति-पत्नी के अन्तःकरण रूप तत्त्व के स्नेह के आश्रय से 'अपत्य' इस प्रकार का यह अद्वितीय आनन्दनिर्मित ग्रन्थि के द्वारा बान्धा जाता है।

अनुदिवसमवर्धयत्प्रिया ते यमचिरनिर्गतमुग्धलोलबर्हम्।
मणिमुकुट इवोच्छ्रिखः कदम्बे नदति स एष वधूसखः शिखण्डी।। 18 ।।

सरलार्थ-

नई निकली हुई मनोहर और चञ्चल पूँछ वाले जिसको आपकी प्रिया सीता ने प्रतिदिन पाला-पोसा, वही यह उन्नत चूडावाला, मणिजटित मुकुट के समान मयूर वधू का साथी कदम्ब पर बोल रहा है। इस पद्य में उपमा अलंकार है।

भ्रमिषु कृतपुटान्तर्मण्डलावृत्तिचक्षुः प्रचलितचटुलभ्रूताण्डवैर्मण्डयन्त्या।
करकिसलयतालैर्मुग्धया नर्त्यमानं सुतमिव मनसा त्वां वत्सलेन स्मरामि।। 19 ।।

सरलार्थ-

भ्रमणों में नेत्रऽऽवरणों के भीतर मण्डलाकार से भ्रमण करने वाले नेत्र को अत्यन्त चञ्चल और सुन्दर भौंहों के नृत्यों से अलंकृत करती हुई सुन्दरी सीता के द्वारा पल्लवसदृश हाथों के तालों से नचाये जाते हुए तुमको पुत्र की तरह स्निग्ध मन से स्मरण करता हूँ। इस पद्य में उपमा अलंकार है।

एतादेव कदलीवनमध्यवर्ति क्रान्तासखस्य शयनीयशिलातलं ते।
अत्र स्थिता तृणमदाद्बहुशो यदेभ्यः सीता ततो हरिणकैर्न विमुच्यते स्म।। 21 ।।

सरलार्थ-

प्रिया के साथ रहने वाले आपका यह वही कदलीवन के बीच में स्थित शयनार्थ शिलातल है। यहाँ पर बैठी हुई सीता इन (हरिणों) को बहुधा घास दिया करती थी, इसलिए बेचारे हरिणों से नहीं त्यागा जाता है।

नवकुवलयस्निग्धैरघर्ददन्नयनोत्सवं
सततमपि नः स्वेच्छादृश्यो नवो नव एव यः।
विकलकरणः पाण्डुच्छायः शुचा परिदुर्बलः
कथमपि स इत्युन्नेतव्यस्थापि दृशोः प्रियः।। 22 ।।

सरलार्थ-

नवीन कमल के समान मनोहर अङ्गों से नेत्रों के आनन्द को देते हुए निरन्तर ही हमारे लिये स्वेच्छा से देखने योग्य जो नये-नये ही प्रतीत होते थे, किन्तु (अब वही राम)शोक से विह्वल इन्द्रियों वाले, धूसरकान्ति वाले तथा अत्यन्त कृश होकर भी नेत्रों को आनन्द देते हुए बड़ी कठिनता से पहचानने योग्य है। इस पद्य में उपमा अलंकार है।

विलुलितमतिपूरर्वाष्पमानन्दशोकप्रभवमवसृजन्ती पक्ष्मलोत्तानदीर्घा।
स्नपयति हृदयेशं स्नेहनिष्यन्दिनी ते धवलमधुरमुग्धा दुग्धकुल्येव दृष्टिः।। 23 ।।

सरलार्थ-

अधिक प्रवाहों में बहाये हुए, आनन्द तथा शोक से उत्पन्न आँसुओं को गिराती हुई, दर्शनोत्कण्ठा से विस्फारित तथा दीर्घ, अतिशुभ्र तथा मनोहारिणी और दूध की नहर की

तरह तुम्हारी दृष्टि प्रीति को बरसाती हुई हृदयेश्वर (राम) को स्नान करा रही है। इस पद्य में धवल मधुर और मुग्ध दृष्टि की उपमा दूध की नहर से की है।

ददतु तरवः पुष्पैरर्घ्यं फलैश्च मधुश्चुतेः स्फुटितकमलामोदप्रायाः प्रवान्तु वनानिलाः।
कलमविरलं रज्यत्कण्ठाः क्वणन्तु शकुन्तयः पुनरिदमयं देयो रामः स्वयं वनमागतः।। 24 ।।

सरलार्थ-

मकरन्द बरसाने वाले वृक्ष पुष्पों और फलों से अर्घ्य प्रदान करें, विकसित कमलों के सौरभ के बाहुल्य से युक्त वनवायु खूब बहे, रागयुक्त कण्ठ वाले पक्षी निरन्तर अव्यक्त मधुर कूजें क्योंकि पुनः इस वन में राम आये हुए है। इस पद्य में प्रथम तीन पक्तियों में अर्घ्य प्रदान करने, वनवायु के बहने और पक्षियों के निरन्तर कूजने का कारण चतुर्थी पंक्ति में राम का आगमन कहा गया है इसलिए इसमें काव्यलिगम् अलंकार है।

करकमलवितीर्णैरम्बुनीवारशाष्पैस्तरुशकुनिकुरघान्मैथिली यानपुष्यत्
भवति मम विकारस्तेषु दृष्टेषु कोऽपिद्रव इव हृदयस्य प्रड्ढवोद्भेदयोग्यः।। 25 ।।

सरलार्थ-

मिथिलेश नन्दिनी ने जिन वृक्षों, पक्षियों तथा हरिणों को कमलरूपी हाथों से दिये गये जल, नीवार तथा कोमल तृणों से पाला पोसा, उनके देखे जाने पर, पाषाण को भी विदारण करने में समर्थ, हृदय की आर्द्रता जैसा मेरा कोई विकार उत्पन्न हो रहा है। इस पद्य में यथासंख्या अलंकार से अम्बु का तरुओं से नीवार का शकुनियों से तथा पुष्पों का कुरंगी से सम्बन्ध है।

त्वं जीवितं त्वमसि मे हृदयं द्वितीयं त्वं कौमुदी नयनयोरमृतं त्वमघे।
इत्यादिभिः प्रियशतैरनुरुघ्य मुग्धां तामेव शान्तमथवा किमिहो परेण।। 26 ।।

सरलार्थ-

तुम मेरा जीवन हो, तुम मेरा दूसरा हृदय हो, तुम मेरी आँखों में चान्दनी हो, तुम शरीर पर अमृत हो, इत्यादि सैकड़ों प्रिय वचनों से भोली सीता को वश में करके, उन्हीं को अथवा बस, इसके आगे कहने से क्या लाभ?

इस पद्य में सीता पर जीवन, हृदय, कौमुदी, अमृत आदि का आरोप है अतः रूपक अलंकार है। दूसरा हृदय न होेने पर भी सीता का दूसरा हृदय कहने से असम्बन्ध में सम्बन्धरूपा अतिशयोक्ति है तथा विशेष कहने की इच्छा से कथन का निषेध है अतः आक्षेप भी है। इन तीनों का अंगागीभाव संकर है।

अयि कठोर यशः किल ते प्रियं किमयशो ननु घोरमतः परम्।
किमभवद्विपिने हरिणीदृशः कथय नाथ कथं बत मन्यसे।। 27 ।।

सरलार्थ-

हे निष्ठुर! तुम्हें यश प्यारा है, परन्तु इससे अधिक भयघङ्कर अपयश क्या होगा? मृगी के समान नेत्रवाली का वन में क्या हुआ होगा? हे नाथ! कहिए, आप क्या मानते हैं? प्रस्तुत पद्य में यश की इच्छा से किए गए कार्य से अयश की प्राप्ति के उल्लेख में विषम अलंकार है। हरिणीदृश में उपमा अलंकार है।

त्रस्तैकहायनकुरङ्ग विलोलदृष्टेस्तस्याः परिस्फुरितगर्भभरालसायाः।

ज्योत्स्नामयीव मृदुबालमृणालकल्पा क्रव्याद्भिरङ्गलतिका नियतं विलुप्ता।। 28 ।।

सरलार्थ-

डरे हुए एक वर्ष की अवस्था वाले मृग के जैसे चञ्चल नेत्रें वाली, कम्पित गर्भ के बोझ से अलसाई हुई गति वाली उस सीता का कोमल छोटे मृणाल के समान, ज्योत्स्ना से बने हुए की तरह और लतातुल्य कृश शरीर हिंसक जन्तुओं से निश्चय ही नष्ट हुआ होगा। इस पद्य में उपमा अलंकार है।

पूरोत्पीडे तटाकस्य परीवाहः प्रतिक्रिया।

शोकक्षोभे च हृदयं प्रलापैरेव धार्यते।। 29 ।।

सरलार्थ-

तालाब में जलप्रवाह का आधिक्य होने से नाली द्वारा जलनिःसारण ही प्रतीकार है। शोक के कारण क्षोभ होने पर हृदय विलापों द्वारा ही धारण किया जाता है। इस पद्य में बाढ़ आने पर तालाब से पानी का बहना ही एकमात्र उपाय है और शोक-क्षुभित हृदय रुदन से ही स्थिर रह सकता है, ऐसा उदाहरण देने से दृष्टान्त अलंकार है।

इदं विश्वं पाल्यं विधिवदभियुक्तेन मनसा
प्रियाशोको जीवं कुसुमिव घर्मो ग्लपयति।
स्वयं कृत्वा त्यागं विलपनविनोदोऽप्य
सुलभस्तदद्याप्युछ्वासो भवति ननु लाभो हि रुदितम्।। 30।।

सरलार्थ-

सावधान चित्त से यह जगत् विधि के अनुसार पालना पड़ता है, जैसे धूप पुष्प को मुरझा देता है उसी प्रकार प्रिया का शोक जीवन को ग्लानियुक्त कर देता है। स्वेच्छा से त्याग करके विलाप कर विनोद भी दुर्लभ है, तथापि अब भी प्राणधारण होता है इसलिए निश्चय ही रोदन लाभकारी है। इस पद्य में उपमा अलंकार है।

स्वयं आकलन कीजिये-

अभ्यास प्रश्न 1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिये-

1. तृतीय अङ्क का विष्कम्भक किन नदियों के संवाद से होता है?
2. इस अङ्क में सीता को किस रूप में चित्रित किया है?
3. इस अङ्क में सीता किस पुत्र के बलशाली होने की बात कहती है?
4. अत्यन्त कृश, कठिनता से पहचानने योग्य, पिफ़र भी नेत्रें को आनन्द देने वाला कौन है?
5. सीता के शोक से श्रीराम का शरीर किसको धारण करता हुआ चेतना को नहीं छोड़ता है?

6.5 उत्तररामचरित के तृतीय अङ्क के 33-48 पद्यों का अर्थ

दलति हृदयं शोकोद्वेगाद् द्विधा तु न भिद्यते
वहति विकलः कायो मोहं न मुंचति चेतनाम्।
ज्वलयति तनूमन्तर्दाहः करोति न भस्मसात्
प्रहरति विधिर्मर्मच्छेदी न कृन्तति जीवितम्।। 31 ।।

सरलार्थ-

हृदय शोक के उद्वेग से विदीर्ण होता है, लेकिन दो टुकड़ों में विभक्त नहीं होता, शोक से विह्नल शरीर मूर्च्छा को धारण करता है, लेकिन चेतना को नहीं छोड़ता। अन्तःकरण का सन्ताप शरीर को जलाता है, लेकिन भस्म नहीं करता, इसी तरह मर्मस्थल को बींधने वाला दैव प्रहार करता है, लेकिन जीवन को नष्ट नहीं करता है। इस पद्य में कारण के होने पर भी कार्य का न होना विशेषोक्ति अलंकार को दर्शाता है।

नकिलं भवतां देव्याः स्थानं गृहेऽभिमतं
ततस्तृणमिव वन्ये शून्ये त्यक्ता न चाप्यनुशोचिता।
चिरपरिचितास्ते ते भावास्तथा द्रवयन्ति
मामिदमशरणैरद्यास्माभिः प्रसीदत रुद्यते।। 32 ।।

सरलार्थ-

देवी सीता का घर पर रहना आप लोगों को अभीष्ट नहीं है, इसलिए उसको तृण के समान निर्जन वन में छोड़ दिया और शोक भी नहीं किया। चिरकाल से परिचित वे पदार्थ मुझे व्याकुल (द्रवीभूत) कर रहे हैं, इसलिए अशरण होकर मैं रो रहा हूँ, आप लोग प्रसन्न

हों। इस पद्य में परित्याग रूपी कारण के होने पर शोक रूपी कार्य का अभाव होने से विशेषोक्ति अलंकार है। तृणमिव में उपमा अलंकार भी है।

देव्याः शून्यस्य जगतो द्वादशः परिवत्सरः।

प्रणष्टमिव नामापि न च रामो न जीवति।। 33 ।।

सरलार्थ-

देवी से विरहित जगत् का यह बारहवाँ वर्ष है। उसका नाम भी मानों लुप्त हो गया है और राम नहीं जी रहा है, ऐसी बात नहीं है। प्रणष्टमिव में उत्प्रेक्षा अलंकार है।

नैता प्रियतमा वाचः स्नेहार्द्राः शोकदारुणाः।

एतास्ता मधुनो धाराः श्चयोतन्ति सविषास्त्वयि।। 34 ।।

सरलार्थ-

प्रेम से शीतल और शोक से निष्ठुर ये वचन बहुत ही प्रीतिजनक नहीं हैं। ये वे विष से युक्त मधु की धाराएँ तुम्हारे ऊपर चू रही है।

यथा तिरश्चीनमलातशल्यं प्रत्युप्तमन्तः सविषश्च दन्तः।

तथैव तीव्रो हृदि शोकशङ्कुर्मर्माणि कृनतन्नपि किं न सोढः।। 35 ।।

सरलार्थ-

जिस प्रकार हृदय के भीतर घुसा हुआ तिरछा अङ्गारमयी लोहकील तथा विषैला दंश दुःखदायी होता है उसी प्रकार तीव्र हृदय में घुसा हुआ शोकरूपी कील मर्मस्थलों को छेदन करता हुआ भी क्या नहीं सहा गया? इस पद्य में उपमा और रूपक अलंकार है।

वेलोल्लोलक्षुभितकरुणोज्जम्भणस्तम्भनार्थं

यो यो यत्नः कथमपि समाधीयते तु तमन्तः।

हित्वा भित्त्वा प्रसरति बलात्कोऽपि चेतोविकार

स्तोयस्येवाप्रतितिरयः सैकतं सेतुमोघः।। 36 ।।

सरलार्थ-

चञ्चल तरघों के समान क्षोभ का प्राप्त शोक के उद्रेक को रोकने के लिए मुझसे किसी प्रकार जो-जो यत्न किया जाता है, उस-उस को बीच में ही बलपूर्वक भेदन करके अनिर्वचनीय हृदयावेग इस प्रकार फैलता है जैसे कि अनिवारित वेग वाला जल का प्रवाह बालुकामय सेतु को तोड़कर फैलता है। इस पद्य में राम के यत्न की बालू के पुल से उपमा दी है इसलिए उपमा अलंकार है।

अस्मिन्नेव लतागृहे त्वमभवस्तन्मार्गदत्तेक्षणः

सा हसैः कृतकौतुका चिरमभूद्गोदावरीसैकते।

आयान्त्या परिदुर्मनायितमिव त्वां वीक्ष्य

बद्धस्तया कातर्यादरविन्दकुडमलनिभो मुग्धः प्रणामांजलिः।। 37।।

सरलार्थ-

इसी लतागृह में आप सीता के आगमन मार्ग में दृष्टि लगाये हुए थे और सीता हंसों से कौतुक कर गोदावरी के तट में बहुत काल तक रुकी रही। आती हुई सीता ने आपको अप्रसन्नचित्त देखकर व्याकुलता के कारण से कमल के मुकुर की तरह सुन्दर प्रमाणाजलि को बाँध लिया। इस पद्य में उपमा अलंकार है।

हा हा देवि स्फुटति हृदयं ध्वंसते देहबन्धः
शून्यं मन्ये जगदविरलज्वालमन्तर्ज्वलामि।
सीदन्नन्धे तमसि विधुरो मज्जतीवान्तरात्मा
विष्वघ्मोहःस्थगयति कथं मन्दभाग्यः करोमि।। 38 ।।

सरलार्थ-

हाय हाय देवि, हृदय फट रहा है, देह का बन्धन शिथिल हो रहा है। जगत् को शून्य प्रतीत कर रहा हूँ, शरीर के भीतर अवच्छिन्नता से जल रहा हूँ। अवसादयुक्त हुआ वकल अन्तःकरण गाढ अन्धकार में मानों डूब रहा है, मूर्च्छा चारों ओर से घेर रही है, मैं मन्दभाग्य क्या करूँ? इस पद्य में सम्भावाना व्यक्त होने से उत्प्रेक्षा अलंकार है।

आलिम्पन्नमृतमयैरिव प्रलेपैरन्तर्वा बहिरपि वा शरीरधातून्।
संस्पर्शः पुनरपि जीवयन्नकस्मादानन्दादपरमिवादधाति मोहम् ।। 39 ।।

सरलार्थ-

भीतर के तथा बाहर के शरीरधातुओं को अमृतमय प्रलेपों से लिप्त करता हुआ सा स्पर्श पुनः जीवन देता हुआ अकस्मात् आनन्दवश अन्य प्रकार की मूर्च्छा को फैला रहा है। इस पद्य में उत्प्रेक्षा अलंकार है।

करपल्लवः स तस्या सहसैव जडो जडात्परिभ्रष्टः।
परिकम्पिनः प्रकम्पी करान्मम स्विद्यतः स्विद्यन्।। 41 ।।

सरलार्थ-

उस सीता का स्तब्ध, काँपता हुआ तथा स्वेदयुक्त होता हुआ हाथ मेरे स्तब्ध, काँपते हुए तथा स्वेदयुक्त होते हुए हाथ से छूट गया है। इस पद्य में हाथ छूटने के जड़ता आदि कारण होने से काव्यलिङ्ग अलंकार है।

सस्वेदरोमाचिचतकम्पिताी जाता प्रियस्पर्शसुखेनवत्सा।
मरुन्नवाम्भःपरिधूतसिक्ता कदम्बयष्टिः स्फुटकोरकेव।। 42 ।।

सरलार्थ-

पुत्री! प्रिय के स्पर्शजनित सुख से वायु से कम्पित तथा नूतन जल से सींची गई विकसित कलियों से युक्त कदम्ब की डाल की तरह स्वेद, रोमांच और कम्प से युक्त अन्नों से सम्पन्न हो गई है। इस पद्य में उपमा अलंकार है।

पौलस्त्यस्य जटायुषा विघटितः कार्ष्णायसोऽयं
रथस्ते चैते पुरतः पिशाचवदनाः कघङ्कालशेषाः खराः।
खड्गच्छिन्नजटायुपक्षतिरितः सीतां चलन्तीं
वहन्नन्तर्व्यापृतविद्युदम्बुद इव द्यामभ्युदस्थादरिः।। 43 ।।

सरलार्थ-

जटायु से तोड़ा गया लोहे का बना हुआ रावण का रथ है और सामने ये वे पिशाचों के जैसे मुख वाले तथा अस्थिपन्जर से अवशिष्ट खच्चर हैं। यहाँ से तलवार से जटायु के पक्षमूलों को काटकर शत्रु रावण च×चल होती हुई सीता को लेकर भीतर चमकने वाली बिजली से युक्त मेघों की तरह आकाश में उड़ गया। इस पद्य में उपमा अलंकार है।

उपायानां भावादविरलविनोदव्यतिकरै
र्विमर्दैर्वीराणां जनितजगदत्युद्भुतरसः।
वियोगो मुग्धाक्ष्याःस खलु रिपुघातावधिरभूत्
कटुस्तूष्णीं सह्यो निरवधिरयं तु प्रविलयः।। 44 ।।

सरलार्थ-

उपायों के होने से निरन्तर विनोदों के सम्बन्धों से युक्त वीरों के युद्धों से जगत् में अतिशय अद्भुत रस को उत्पन्न करने वाला सीता का वह पहले का विरह शत्रु की हत्याकाल तक रहने वाला था, परन्तु कठोर और प्रतीकार न होने से चुपचाप सहने योग्य इस समय का सीता का विरह तो अवधिशून्य है।

इस पद्य में राम के पूर्व तथा वर्तमान वियोगों की तुलना की गई है। पूर्व वियोग की अपेक्षा यह दूसरा वियोग अधिक दुःखदायी है क्योंकि वह निरवधि है तथा इसका कोई उपाय भी नहीं है। इस हेतु के कारण यहाँ काव्यलिगं अलंकार है।

व्यर्थं यत्र कपीन्द्रसख्यमपि मे वीर्यं हरीणां वृथा
प्रज्ञा जाम्बवतो न यत्र न गतिः पुत्रस्य वायोरपि।
मार्गं यत्र न विश्वकर्मतनयः कर्तुं नलोऽपि
क्षमः सौमित्रेरपि पत्रिणामविषये तत्र प्रिये! क्वासि मे।। 45 ।।

सरलार्थ-

हे प्रिय! जहाँ सुग्रीव के साथ मेरी मित्रता भी व्यर्थ है, जहाँ वानरों का पराक्रम भी व्यर्थ है, जहाँ जाम्बवान् की बुद्धि भी व्यर्थ है, जहाँ वायु के पुत्र हनुमान् का प्रवेश भीनहीं है, जहाँ विश्वकर्मा का पुत्र नल भी मार्ग बनाने में समर्थ नहीं है, सौमित्रि (लक्ष्मण)के बाणों के भी अगोचर उस प्रकार के किस स्थान में हे प्रिय तुम विद्यमान हो?

प्रत्युप्तस्येव दयिते तृष्णादीर्घस्य चक्षुषः।
मर्मच्छेदोपमैर्यत्नैः सन्निकर्षो निरुध्यते।। 46 ।।

सरलार्थ-

प्रिय (राम)में गढ़े हुए तथा तृष्णा से दीर्घ बने हुए नेत्रें का जो सम्बन्ध है, वह मर्मस्थलों में छेदन करने के सदृश गमन आदि प्रयत्नों से रोका जाता है। इस पद्य के मर्मच्छेदोपमैर्यत्नैः में उत्प्रेक्षा अलंकार है।

एको रसः करुण एव निमित्तभेदाद्भिन्नः पृथक्पृथगिव श्रयते विवर्तान्।
आवर्तबुद्बुदतरङ्गमयान्विकारानम्भो यथा सलिलमेव हि तत्समस्तम्।। 47 ।।

सरलार्थ-

एक करुण रस ही निमित्त भेद से से भिन्न होता हुआ पृथक् पृथक् श्रृंगार आदि परिणामों को आश्रय करता है, ऐसा मालूम पड़ता है, जैसे एक जल ही भँवर, बुद्बुद और तरग रूप विकारों का आश्रय करता है, वह वास्तविक में जल ही है। इस पद्य में उपमा अलंकार है।

अवनिरमरसिन्धुः सार्धमस्मद्विधाभिः स च कुलपतिराद्यश्छन्दसां यः प्रयोक्ता।
स च मुनिरनुयातारुन्धतीको वसिष्ठस्तव वितरतु भद्रभूयसे मङ्गलाय।। 48 ।।

सरलार्थ-

पृथ्वी और गंगा, हमारी जैसे (मुरला, गोदावरी आदि के अथवा वनदेवियों) के साथ प्रसिद्ध वंशपति सूर्य, जो छन्दों के प्रथम प्रयोग करने वाले हैं, वे मुनि वाल्मीकि और अरुन्धती से अनुगत वसिष्ठ ऋषि भी आपके प्रचुर कल्याण के लिये मंगल का वितरण करें।

स्वयं आकलन कीजिए-
अभ्यास प्रश्न 3
बहुविकल्पीय प्रश्न

1.एको रसः करुण एव निमित्तभेदात् ---यह किस नाटक सम्बद्ध है?

(क) शाकुन्तलम् (ख) मृच्छकटिकम् (ग) चारुदत्तम् (घ) उत्तररामचरितम्

2. पुटपाकप्रतीकाशो रामस्य करुणो रसः-- यह कथन किसका है?

(क) सीता (ख) मुरला (ग) राम (घ) लक्ष्मण

3. सीता के नेत्र किसके चक्राकार भ्रमण का अनुसरण करते थे?

(क) हरिण (ख) करिशावक (ग) मयूर (घ) लव-कुश

4. दुग्धकुल्येव दृष्टिः में कौन सा अलंकार है?

(क) निदर्शना (ख) उत्प्रेक्षा (ग) रूपक (घ) उपमा

5. तृतीय अङ्क के 27वें पद्य में किसके नेत्रों की समानता मृगी के नेत्रों से की है?

(क) सीता (ख) मुरला (ग) आत्रेयी (घ) तमसा

6.6 सारांश

इस इकाई में छाया नामक तृतीय अङ्क में सीता की उपस्थिति कवि ने छाया के माध्यम से की है। यह नाटक की महत्त्वपूर्ण कल्पना है। इसमें कवि ने राम के विरह का वर्णन कर अपने हृदय की विगलित करुण-धारा को प्रवाहित किया है। राम की करुण दशा को देखकर सीता का अनुताप मिट जाता है और राम के प्रति उनका प्रेम और भी दृढ़ हो जाता है। यही इस इकाई का सार भी है।

6.7 कठिन शब्दावली

शीकर = जलकण।	विलोलकवरीकम् = चञ्चल केशविन्यास।
घर्मः = घाम।	स्तनयित्नु = मेघ।
निरतः = अनुरक्त।	प्रसक्ति = छिड़का हुआ।
द्रवीभूत = आर्द्र (गीला)	गण्डूष = मुख में भरा हुआ द्रव पदार्थ।
अनराल = सीधा।	धवलबहला = अतिशयशुभ्र।
परीवाह = जलनिःसारण, निकासी।	व्यतिकर = सम्पर्क।
मनाक् = कुछ-कुछ, थोड़ा।	विपाकः = शोचनीय।
पुरन्ध्री = पतिपुत्रवती स्त्री।	निषक्ता = संलग्न।
धूनोति = हिलाता है।	वलयित = लपेटी हुई।

6.8 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न- 1	1. सीता	2. केतकीपुष्प	3. श्रीराम
	4. श्रीराम	5. रूपक	
अभ्यास प्रश्न- 2	1. तमसा और मुरला	2. प्रतिकृति (छाया)	
	3. करिशावक रूपी	4. श्रीराम	5. मूर्च्छा
अभ्यास प्रश्न -3	1. घ	2. ख	3. ग

4. ख 5. क

6.9 सहायक ग्रन्थ

1. उत्तररामचरितम्, महाकवि भवभूति, चौखम्बा संस्कृत सीरीज वाराणसी।
2. उत्तररामचरितम्, महाकवि भवभूति, व्याख्याकार आनन्दस्वरूप, सम्पादक: जनार्दनशास्त्री पाण्डेय,मोतीलाल बनारसीदास दिल्ली, वाराणसी।

6.10 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. उत्तररामचरित के तृतीय अङ्क के महत्त्व पर प्रकाश डालिये।
2. निम्नलिखित पद्यों की सप्रसंग सरलार्थ कीजिये-

   तृतीय अङ्क - 4, 11, 16, 26, 31, 36, 38, 44, 47
3. निम्नलिखित सूक्तियों की व्याख्या कीजिये-

   पुटपाकप्रतिकाशो रामस्य करुणो रसः। 3/1

   शरदिज इव घर्मः केतकीगर्भपत्रम्। 3/5

   आनन्दग्रन्थिरेकोऽयमपत्यमिति पठ्यते। 3/17

   पूरोत्पीडे तटाकस्य परीवाहः प्रतिक्रिया। शोकक्षोभे च हृदयं प्रलापैरेवधार्यते।। 3/29

   प्रहरति विधिर्मर्मच्छेदी न कृन्तति जीवितम्। 3/31

   एको रसः करुण एव निमित्तभेदाद्भिन्नः। 3/47

सप्तम अध्याय
इकाई-7
उत्तररामचरित : चतुर्थ अङ्क

संरचना

7.1 प्रस्तावना
7.2 उद्देश्य
7.3 उत्तररामचरित के चतुर्थ अङ्क के 1-15 पद्यों का अर्थ
- स्वयं आकलन अभ्यास प्रश्न- 1

7.4 उत्तररामचरित के चतुर्थ अङ्क के 16 -30 पद्यों का अर्थ
- स्वयं आकलन अभ्यास प्रश्न- 2

7.5 सारांश
7.6 कठिन शब्दावली
7.7 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर
7.8 सहायक ग्रन्थ
7.9 अभ्यास के लिए प्रश्न

7.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों, षष्ठम इकाई में आपने उत्तररामचरित के तृतीय अङ्क में प्रयुक्त पद्यों के अर्थ का अध्ययन किया। इस इकाई में भी उत्तररामचरित के चतुर्थ अङ्क के पद्यों को समझाने का प्रयास किया गया है। इस अङ्क में राजा जनक एवं कौशल्या का विषादमय चित्र तथा लव-कुश की वीरता के चित्रण में प्रयुक्त पद्यों को भी वर्णित किया जायेगा।

7.2 उद्देश्य

इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जानने में सक्षम होंगे-

- चतुर्थ अङ्क की विषयवस्तु में प्रयुक्त पद्यों का अर्थ।
- इस अङ्क में प्रयुक्त पद्यों के अलंकार।

7.3 उत्तररामचरित के चतुर्थ अङ्क के 1-15 पद्यों का अर्थ

नीवारौदनमण्डमुष्णमधुरं सद्यः प्रसूताप्रिया
पीतादभ्यधिकं तपोवनमृगः पर्याप्तमाचामति।
गन्धेनस्फुरतामनागनुसृतोभक्तस्यसर्पिष्मतः

कर्कन्धूफलमिश्रशाकपचनामोदः परिस्तीर्यते।। 1 ।।

सरलार्थ-

तपोवन का मृग तत्क्षण प्रसूता प्रिया (मृगी) द्वारा पीने से बचे हुए गरम और स्वादिष्ट नीवार के भात के माँड को पी रहा है। घृतमिश्रित भात के फैैलते हुए गन्ध से कुछ कुछ युक्त, बदरीफलों से मिश्रित शाक के पकाने का सौरभ चारों ओर फैल रहा है। इस पद्य में तपोवन का यथावत् चित्रण प्रस्तुत होने से स्वभावोक्ति अलंकार है।

हृदि नित्यानुषक्तेन सीताशोकेन तप्यते।
अन्तःप्रसृप्तदहनो जरन्निव वनस्पतिः।। 2 ।।

सरलार्थ-

हृदय में निरन्तर विद्यमान सीता के शोक से -जिसके भीतर आग फैली हुई है, ऐसे जीर्ण वृक्ष की तरह सन्ताप का अनुभव कर रहे हैं। इस पद्य में सीता क शोक से संतृप्त जनक की भीतर ही भीतर जलने वाले जीर्णवृक्ष से उपमा दी गई है।

अपत्ये यत्तादृग्दुरितमभवत्तेन महता विषक्तस्तीव्रेण व्रणितहृदयेन व्यथयता।
पटुर्धारावाही नव इव चिरेणापि हि न मे निकृन्तन्मर्माणि क्रकच इव मन्युर्विरमति।। 3 ।।

सरलार्थ-

संतान अर्थात् सीता पर जो उस प्रकार का अनर्थपात हुआ, बड़े भारी, दारुण, पीड़ाजनक तथा घायल करने वाले उस दुःख से विशेषतया सम्बद्ध तथा प्रबल, निरन्तर संचार करने वाला और बहुत काल बीतने के पश्चात् नया जैसा मर्मस्थलों को आरे के समान विदारण करता हुआ मेरा शोक शान्त नहीं होता है। इस पद्य में उपमा अलंकार है।

अनियतरुदितस्मितं विराजत्कतिपयकोमलदन्तकुड्मलाग्रम्।
वदनकमलकं शिशोः स्मरामि स्खलदसमञ्जसमञ्जुजल्पितं ते।। 4 ।।

सरलार्थ-

अहेतुक रोदन और हँसने वाले, कलियों के अग्रभागों के समान कुछ दांतों से शोभित, अधूरे अक्षरों वाले, असम्बद्ध और सुन्दर वचनों से युक्त शैशवावस्था के तुम्हारे कमल के समान मुख को याद करता हूँ। इस पद्य में भी उपमा अलंकार है।

त्वं वह्निर्मुनयो वसिष्ठगृहिणी गंङ्गा च यस्या
विदुर्माहात्म्यं यदि वा रघोः कुलगुरुर्देवः स्वयं भास्करः।
विद्यां वागिव यामसूत भवतीं शुद्धि गतायाः
पुनस्तस्यास्त्वद्दुहितुस्तथा विशसनं किं दारुणे मृष्यथाः।। 5 ।।

सरलार्थ-

हे भगवती पृथ्वी! जिसकी महिमा को तुम, अग्निदेव, मुनि लोग, वसिष्ठ की पत्नी अरुन्धती, गंगारघुवंश गुरु वसिष्ठ और सूर्यदेव स्वयं जानते हैं। जैसे सरस्वती विद्या को उत्पन्न करती है वैसे ही तुमने उत्पन्न किया। अग्निशुद्धि सम्पन्न उस पुत्री का उस प्रकार परित्यागरूप हिंसा को हे कठोर, तुमने कैसे सह लिया?

इस पद्य के तृतीय चरण में उपमा अलंकार है। प्रथमार्ध में अनेक प्रस्तुतों का जानना रूप एक धर्म से सम्बन्ध होने के कारण तुल्योगिता अलंकार है।

आसीदियं दशरथस्य गृहे यथा श्रीः श्रीरेव वा किमुपमानपदेन सैषा।

कष्टं बतान्यदिव दैववशेन जाता दुःखात्मकं किमपि भूतमहो विकारः।। 6 ।।

सरलार्थ-

यह दशरथ के घर में लक्ष्मी के जैसी थी, अथवा लक्ष्मी ही थी, उपमाबोधक शब्दों से क्या प्रयोजन है? कष्ट है, हाय! यह वही दुर्भाग्यवश मानों दूसरे कोई प्राणी के सदृश हो गई है। आश्चर्य है! यह विकार है। इस पद्य में कौशल्या की लक्ष्मी से दी गई है इसलिए उपमा अलंकार है।

य एव मे जनः पूर्वमासीन्मूर्ता महोत्सवः।

क्षते क्षारमिवासह्य जातं तस्यैव दर्शनम्।। 7 ।।

सरलार्थ-

जो ही व्यक्ति (कौशल्या)पहले मेरे लिए मूर्तिमान महोत्सव था, उसी का दर्शन कटे हुए पर नमक की तरह असह्य हो गया है। इस पद्य में भी उपमा अलंकार है।

संतानवाहीन्यपि मानुषाणां दुःखानि सद्बन्धुवियोगजानि।

दृष्टे जने प्रेयसि दुःसहानि स्रोतःसहस्रैरिव संपल्वन्ते।। 8 ।।

सरलार्थ-

मनुष्यों के प्रियबन्धु-वियोगजन्य दुःख अविच्छिन्नभाव से बहने वाले होने पर भी, प्रिय जन के देखे जाने पर कठिनता से सहने योग्य होते हुए मानों सहस्रों प्रवाहों से बह निकलते हैं। इस पद्य के अन्तिम चरण में उत्प्रेक्षा अलंकार है।

एष वः श्लाघ्यसंबन्धी जनकानां कुलोद्वहः।

याज्ञवल्क्यो मुनिर्यस्मै ब्रह्मपारायणं जगौ।। 9 ।।

सरलार्थ-

यह तुम्हारे प्रशंसनीय समधी जनकवंश में श्रेष्ठ हैं, जिनको याज्ञवल्क्य मुनि ने वेदान्त का उपदेश दिया था।

यया पूतंमन्यो निधिरपि पवित्रस्य महसः

पतिस्ते पूर्वेषामपि खलु गुरूणां गुरुतमः।
त्रिलोकीमङ्गल्यामवनितललीनेनशिरसा
जगद्वन्द्यांदेवीमुषसमिव वन्दे भगवतीम्।। 10 ।।

सरलार्थ-

पवित्र तेज के आधार भी, प्राचीन गुरुओं में श्रेष्ठ होते हुए भी तुम्हारे पति (वसिष्ठ)जिस से अपने आपको पवित्र मानते हैं, लोकत्रय के मंगल के कारणस्वरूप तथा लोक से पूजनीय, प्रातःकाल की अधिष्ठात्री देवी की तरह मैं आपकी पृथ्वी में रखे हुए शिर से प्रणाम करता हूँ। इस पद्य के अन्तिम चरण में अरुन्धती की उपमा उषा देवी से की है।

शिशुर्वा शिष्या वा यदसि मम तत्तिष्ठतु
तथा विशुद्धेरुत्कर्षस्त्वयि तु मम भक्तिं द्रढयति।
शिशुत्वं वा स्त्रैणं वा भवतु ननु वन्द्यासि जगतां
गुणाः पूजास्थानं गुणिषु न च लिङ्ग न च वयः।। 11 ।।

सरलार्थ-

बालिका अथवा शिष्या जो भी तुम मेरी हो, वह सम्बन्ध वैसा ही रहे। किन्तु पवित्रता का अतिरेक तुझ में मेरी भक्ति को दृढ़ कर रहा है। शैशव हो अथवा स्त्रीत्व हो, निश्चय से तुम भुवनों की वन्दनीया हो। गुणियों में गुण पूजा के स्थान होते हैं, न तो लिङ्ग और न अवस्था। इस पद्य में सामान्य से विशेष का समर्थन होने से अर्थान्तरन्यास अलंकार है।

स राजा तत्सौख्यं स च शिशुजनस्ते च
दिवसाः स्मृतावाविर्भूतं त्वयि सुहृदि दृष्टे तदखिलम्।
विपाके घोरेऽस्मिन्न खलु न विमूढा तव
सखी पुरन्ध्रीणां चित्तं कुसुमसुकुमारं हि भवति।। 12 ।।

सरलार्थ-

तुझ प्रियबन्धु के देखे जाने पर वह राजा, वह सुख और वह बालसमुदाय तथा वे दिन, वह सभी स्मृति में प्रकट हो गया है। अनन्तर इस भंयकर दशाविपर्यास में तेरी सखी मूर्च्छित हो गई है। कुलवधुओं का चित्त पुष्प के समान कोमल होता है। इस पद्य के अन्तिम चरण में उपमा अलंकार है।

स संबन्धी श्लाघ्यः प्रियसुहृदसौ तच्च हृदयं
स चानन्दः साक्षादपि च निखिलं जीवितफलम्।
शरीरं जीवो वा यदधिकमतोन्यऽत्प्रियतरं

महाराजः श्रीमान् किमपि मम नासीद्शरथः।। 13 ।।

सरलार्थ-

वह प्रशंसनीय संबन्धी था, वह प्रियमित्र था और वह मेरा हृदय था, वह प्रत्यक्ष आनन्द था और जीवन का समग्र फल था, शरीर अथवा जीवात्मा था इससे भी अधिक प्यारा जो कुछ और है, राज्यलक्ष्मी का आश्रयभूत महाराजा दशरथ मेरा क्या नहीं था?

यदस्याः पत्युर्वा रहसि परमं दूषितमभूदभूवं दम्पत्योः पृथगहमुपालम्भविषयः।
प्रसादे कोपे वा तदनुमदधीनोविधिरभूदलं वा तत्स्मृत्वा दहतियदवस्कन्द्य हृदयम्।। 14 ।।

सरलार्थ-

इसका अथवा इसके पति का एकान्त में जो भारी प्रणयापराध होता था, पति तथा पत्नी के अलग-अलग उलाहने का आधार मैं ही होता था। उसके अनन्तर प्रसन्न करने में अथवा कुपित करने में मेरे अधीन व्यवस्था थी, अथवा उसको स्मरण करना बेकार है जो हृदय को अभिभूत करके जलाता है।

सुहृदिव प्रकटय्य सुखप्रदां प्रथममेकरसामनुकूलताम्।
पुनरकाण्डविवर्तनदारुणः परिशिनष्टि विधिर्मनसो रुजम्।। 15 ।।

सरलार्थ-

विधाता मित्र के समान पहले एक सी अनुकूलता को प्रकट करके सुखदायक, फिर अनवसर में परिवर्तन के कारण भीषण मन की पीड़ा को विशेष रूप से बढ़ा रहा है। इस पद्य में उपमा अलंकार है।

स्वयं आकलन कीजिए –

अभ्यास प्रश्न 1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए –

1. चतुर्थ अङ्क का नाम क्या है?
2. दशरथ के घर की लक्ष्मी किसे कहा गया है?
3. महर्षि वशिष्ठ की पत्नी कौन थी?
4. राजा दशरथ के कितने पुत्र थे?
5. राजा दशरथ की कितनी रानियाँ थी?

7.4 उत्तररामचरित के चतुर्थ अङ्क के 16-30 पद्यों का अर्थ

पंचप्रसूतेरपि तस्य राज्ञः प्रियो विशेषेण सुबाहुशत्रुः।
वधूचतुष्केऽपि तथैव नान्या प्रिया तनूजाऽस्य यथैव सीता।। 16 ।।

सरलार्थ-

राजा दशरथ के पाँच सन्तानों के रहने पर भी सुबाहु के शत्रु श्रीराम विशेष रूप से प्यारे थे। उसी तरह चारों बहुओं में सीता ही पुत्री की तरह प्यारी थी और कोई वैसी प्यारी नहीं थी। इस पद्य में उपमा अलंकार है।

कन्यायाः किल पूजयन्ति पितरो जामातुराप्तं जनं,
संबन्धे विपरीतमेव तदभूदाराधनं ते मयि।
त्वं कालेन तथाविधोऽप्यपहृतः संबन्धबीजं च तद्,
घोरेऽस्मिन्मम जीवलोकनरके पापस्य धिग् जीवितम्।। 17 ।।

सरलार्थ-

कन्या के पितृवर्ग जामाता के आत्मीयजन को पूजते हैं परन्तु सम्बन्ध होने पर भी मुझमें आपकी वह पूजा उलटी ही रही। ऐसे भोलेभाले आपको तथा उस सम्बन्ध की बीजभूत सीता को भी काल ने अपहृत कर लिया है। इस भीषण संसाररूप नरक में मुझ पापी के जीवन को धिक्कार है। इस पद्य के अन्तिम चरण मे उपमा अलंकार है।

आविर्भूतज्योतिषां ब्राह्मणानां ये व्याहारास्तेषु मा संशयो भूत।
भद्रा ह्येषां वाचि लक्ष्मीनिषक्ता नैते वाचं विप्लुतार्थां वदन्ति।। 18 ।।

सरलार्थ-

ब्रह्मसाक्षात्कार करने वाले ब्राह्मणों की जो उक्तियाँ हैं, उनमें आपको संशय न हो क्योंकि इनकी वाणी में मंगलकारिणी सिद्धि नित्य सम्बद्ध रहती है। ये अयथार्थ वाणी नहीं बोलते हैं।

कुवलयदलस्निग्धश्यामः शिखण्डकमण्डनो बटुपरिषदं पुण्यश्रीकः श्रियैव सभाजयन्।
पुनरपि शिशुभूतो वत्सः स मे रघुनन्दन झटिति कुरुते दृष्टः कोऽयं दृशोरमृतांजनम्।। 19 ।।

सरलार्थ-

नीलकमल के पत्ते के समान मनोहर तथा श्यामवर्ण वाला, काकपक्ष से शोभित, पवित्र शोभा से सम्पन्न, शोभा से सम्पन्न, शरीर की कान्ति से ब्रह्मचारियों के समूह को अलंकृत करता हुआ फिर बाल्यावस्था में विद्यमान वात्सल्य भाजन मेरे रामभद्र के समान देखा गया यह कौन बालक झटपट दृष्टि में अमृतमय अंजन का लेप कर रहा है। इस पद्य के अन्तिम चरण में उत्प्रेक्षा तथा 'कुवलयदलस्निग्धशमः' में उपमा अलंकार है।

चूडाचुम्बितकङ्कपत्रमभितस्तूणीद्वयं पृष्ठतो
भस्मस्तोकपवित्रलाञ्छनमुरो धत्ते त्वचं रौरवीम्।
मौर्व्या मेखलया नियन्त्रितमधो वासश्च माजिजष्ठकं
पाणौ कार्मुकमक्षसूत्रवलयं दण्डोऽपरः पैप्पलः।। 20 ।।

सरलार्थ-

इसकी पीठ के दोनों ओर शिखाओं से चूमे हुए बाणपक्षों वाले दो तूणीर हैं, थोड़ी सी भस्म के पवित्र चिन्ह से युक्त वक्षःस्थल रुरुमृग के चर्म को धारण कर रहा है। नीचे मूर्वा के बने हुए कटिसूत्र से बँधा हुआ मंजीठ से रंगा वस्त्र है, हाथ में धनुष, वलयाकार जपमाला और पीपल का दण्ड भी है।

महिम्नामेतस्मिन्विनयशिशिरोमौग्ध्यमसृणो विदग्धैर्निर्ग्राह्यो न पुनरविदग्धैरतिशयः।
मनो मे संमोहस्थिरमपि हरत्येष बलवानयोधातुं यद्वत्परिलघुरयस्कान्तशकलः।। 21 ।।

सरलार्थ-

इस बालक में महिमा का उत्कर्ष है जो इसकी नम्रता, शिशुता तथा सरलता के कारण पारुष्यरहित है और जो निपुण व्यक्तियों द्वारा ज्ञेय है किन्तु अनिपुण व्यक्तियों द्वारा नहीं। यह बलवान् हर्षादि के आवेश में भी अविचलित मेरे मन को उसी प्रकार खींच रहा है जिस प्रकार छोटा सा चुम्बक का टुकड़ा लोह धातु को खींचता है। इस पद्य के अन्तिम चरण में जनक के हृदय की लोह-खण्ड तथा लव की चुम्बक के टुकड़े से उपमा दी गई है, इसलिए उपमा अलंकार है।

वत्सायाश्च रघूद्वहस्य च शिशावस्मिन्नभिव्यज्यते
संवृत्तिः प्रतिबिम्बतेव निखिला सैवाकृतिः सा द्युतिः।
सा वाणी विनयः स एव सहजः पुण्यानुभावोऽप्यसौ
हा हा देवि किमुत्पथैर्मम मनः पारिप्लवं धावति।। 22 ।।

सरलार्थ-

इस बालक में बेटी की और रघुवंशियों में श्रेष्ठ राम की वही समग्र आकृति, वही कान्ति अविकलरूप से प्रतिबिम्बित हुई सी स्पष्ट लक्षित हो रही है। वही वाणी है, वही स्वाभाविक नम्रता है, पवित्र प्रभाव भी वही है। हाय हाय! देवि! मेरा चञ्चल मन क्यों विपरीत मार्गों से दौड़ रहा है।

नूनं त्वया परिभवं च वनं च घोरं तां च व्यथां प्रसवकालकृतामवाप्य।
क्रव्याद्गणेषु परितः परिवारयत्सु संत्रस्तया शरणमित्यसकृत्स्मृतोहऽम्।। 23 ।।

सरलार्थ-

चारों ओर व्याघ्र आदि हिंसक पशुओं के व्याप्त होने पर डरी हुई तुमने पतिकृत परित्यागरूप तिरस्कार, भयंकर वन और प्रसव के समय में होने वाली उस वेदना को भी पाकर मुझको रक्षक समझकर निश्चय ही बार-बार याद किया होगा।

शान्तं वा रघुनन्दने तदुभयं तत्पुत्रभाण्डं हि मे।
भूयिष्ठद्विजबालवृद्धविकलस्त्रैणश्च पौरा जनः।। 25 ।।

सरलार्थ-

अथवा जो राम मेरे पुत्ररूपमूलधन हैं और नागरिक लोग, बहुत अधिक द्विज, बालक, वृद्ध हीनाङ्ग तथा स्त्रीवर्ग से युक्त हैं, इस कारण उन राम में वे दोनों (धनु और शाप के प्रयोग) निवृत्त हों। इस पद्य में धनु और शाप के प्रयोग का कारण पुत्रमूलधन राम को कहा है इसलिए काव्यलिङ्ग अलंकार है।

पश्चात्पुच्छं वहति विपुलं तच्च धूनोत्यजस्रं
दीर्घग्रीवः स भवति खुरास्तस्य चत्वार एव।
शष्पाण्यत्ति प्रकिरति शकृत्पिण्डकानाम्रमात्रान्
किं व्याख्यानैर्व्रजति स पुनर्दूरमेह्येहि यामः।। 26 ।।

सरलार्थ-

यह शरीर के पीछे बड़ी पूँछ धारण करता है और उसे निरन्तर हिलाता रहता है। उसकी लम्बी गर्दन होती है और उसके चार ही खुर हैं। वह घास खाता है और आम के फलों के बराबर पुरीषपिण्ड को गिराता है। बहुत कहने से क्या? वह फिर दूर जा रहा है, आओ-आओ, हम चलते हैं। इस पद्य में घोड़े की यथावत् स्थिति का वर्णन होने से स्वभावोक्ति अलंकार है।

योऽयमश्वः पताकेयमथवा वीरघोषणा।
सप्तलोकैकवीरस्य दशकण्ठकुलद्विषः।। 27 ।।

सरलार्थ-

यह जो घोड़ा है, यह सातों लोकों में अद्वितीय वीर, रावणवंश के शत्रु श्रीराम की विजय-पताका अथवा वीर-घोषण है।

यदि ते सन्ति सन्त्येव केयमद्य विभीषिका।
किमुक्तैरेभिरधुना तां पताकां हरामि वः ।। 28 ।।

सरलार्थ-

यदि वे राम हैं तो हैं ही, आज यह भयप्रदर्शन कैसा? तुम्हारे इन वचनों से अब क्या? तुम्हारी उस विजयपताका को मैं छीन लेता हूँ।

ज्याजिह्वया वलयितोत्कटकोटिदंष्ट्रमुद्भूरिघोरघनघर्घरघोषमेतत्।
ग्रासप्रसक्तहसदन्तकवक्त्रयन्त्रजृम्भाविडम्बि विकटोदरमस्तु चापम्।। 29 ।।

सरलार्थ-

मौर्वीरूप जिह्वा से वेष्टित, उन्नतकोटिरूप दो दंष्ट्राओं से युक्त और असंख्य भयंकर तथा घने घर्घर शब्दों वाला यह धनुष, निगलने में तत्पर हँसता हुआ यमराज के यन्त्ररूप

मुख की जमुहाई की नकल करने वाला, अतःएव भयंकर उदर वाला हो जाय। इस पद्य में चाप की उपमा यमराज से होने के कारण उपमा अलंकार है।

स्वयं आंकलन कीजिये-

अभ्यास प्रश्न 2

रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिये-

1. चतुर्थ अङ्क में --- विष्कम्भक प्रयुक्त है।
2. क्षते क्षारमिवासह्यं जातं --- दर्शनम्।
3. गुणाः पूजास्थानं गुणिषु न च --- न च वयः।
4. वधूचतुष्केपि यथैव --- प्रियातनूजास्य तथैव सीता।
5. सा वाणी --- स एव सहजः पुण्यानुभावोऽप्यसौ।

7.5 सांराश

चतुर्थ अङ्क में सीता-निर्वासन की सूचना से श्रीराम की माताएँ सीता-विहीन अयोध्या में न जाकर वाल्मीकि ऋषि के आश्रम में प्रवेश करती है। इससे उनकी राम के द्वारा किये गये निर्णय के प्रति असहमति प्रकट होती है। कवि का उद्देश्य वाल्मीकि के आश्रम में उनको अपने सम्पूर्ण परिवार से मिलाना रहा है। जिसके कारण उन्हें आश्रम की ओर परिवर्तित किया जाता है। यही इस इकाई का सार भी है।

7.6 कठिन शब्दावली

भूयिष्ठं = बहुत अधिक	तपोवनमृग:= आश्रममृग
अनुसृत:= युक्त	ब्रह्मवादी= ब्रह्म विद्या का उपदेश करने वाला
तप्यते= संताप का अनुभव	पटु:= कुशल
विशसनं= हत्या	धर्मदारा= धर्मपत्नी
दैववशेन= भाग्यवश	विपर्यास:= विपरीत अवस्था का समागम
वध्वा:= स्नुषा की	निधि:= आधार

7.7 स्वयं आंकलन प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न-1	1. कौशल्याजनक योग	2. सीता	3. अरुन्धती
	4. चार	5. तीन	
अभ्यास प्रश्न-2	1. मिश्र	2. तस्यैव	3. लिंग
	4. शान्ता	5. विनय:	

7.8 सहायक ग्रन्थ

1. उत्तररामचरितम्, महाकवि भवभूति, चौखम्बा संस्कृत सीरीज वाराणसी।

2. उत्तररामचरितम्, महाकवि भवभूति, व्याख्याकार आनन्दस्वरूप, सम्पादक: जनार्दनशास्त्री पाण्डेय, मोतीलाल बनारसीदास दिल्ली, वाराणसी।

7.9 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. उत्तररामचरित के चतुर्थ अङ्क के महत्त्व पर प्रकाश डालिये।
2. निम्नलिखित पद्यों की सप्रंसग सरलार्थ कीजिये-
   चतुर्थ अङ्क - 1, 3, 11, 20, 21, 26, 29
3. निम्नलिखित सूक्तियों की व्याख्या कीजिये-
   क्षते क्षारमिवासह्यं जातं तस्यैव दर्शनम्। 4/7
   दृष्टे जने प्रेयसि दुःसहानि स्रोतःसहस्रैरिव संप्लवन्ते। 4/8
   गुणाः पूजास्थानं गुणिषु न च लिंग न च वयः। 4/11
   पुरन्ध्रीणां चित्तं कुसुमसुकुमारं हि भवति। 4/12
   विधिरहो विशिनष्टि मनोरुजम्। 4/15
   नैते वाचं विलुप्तार्थां वदन्ति। 4/18

अध्याय-8
इकाई-8
उत्तररामचरित : पञ्चम अङ्क

संरचना

8.1 प्रस्तावना

8.2 उद्देश्य

8.3 उत्तररामचरित के पञ्चम अङ्क के 1-18 पद्यों का अर्थ

- स्वयं आकलन अभ्यास प्रश्न- 1

8.4 उत्तररामचरित के पञ्चम अङ्क के 19-35 पद्यों का अर्थ

- स्वयं आकलन अभ्यास प्रश्न- 2

8.5 सारांश

8.6 कठिन शब्दावली

8.7 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

8.8 सहायक ग्रन्थ

8.9 अभ्यास के लिए प्रश्न

8.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों, इस इकाई में पञ्चम अङ्क की विषयवस्तु में प्रयुक्त पद्यों का अध्ययन किया जाएगा। पञ्चम अङ्क का नाम कुमारविक्रम है। जिसमें लक्ष्मण पुत्र चन्द्रकेतु तथा लव में दर्प-पूर्ण विवाद के साथ लव के द्वारा चन्द्रकेतु की सेना को परास्त कर, लव का चन्द्रकेतु के साथ युद्ध की घटना में प्रयुक्त पद्यों को वर्णित किया जायेगा।

8.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जानने में सक्षम होंगे-

- पञ्चम अङ्क की विषयवस्तु में प्रयुक्त पद्यों का अर्थ।
- इस अङ्क में प्रयुक्त पद्यों के अलंकार।

8.3 उत्तररामचरितके पञ्चम अङ्क के 1-18 पद्यों का अर्थ

नन्वेष त्वरितसुमन्त्रनुद्यमानप्रोद्वलगत्प्रजवितवाजिना रथेन।
उत्खातप्रचलितकोविदारकेतुः श्रुत्वा वः प्रधनमुपैति चन्द्रकेतुः।। 1 ।।

सरलार्थ-

निःसन्देह शीघ्रतायुक्त सुमन्त्र से हाँके जाते हुए रथ में चढ़कर ऊँची-नीची जमीन में चलने से कचनार के काष्ठ में आश्रित जिनकी रथध्वजा हिल रही है, ऐसे यह कुमार चन्द्रकेतु हमारे युद्ध को सुनकर सामने आ रहे हैं। इस पद्य में केतु पद की आवृत्ति होने से यमक अलंकार है।

किरति कलितकिंचित्कोपरज्यन्मुखश्रीरविरतगुणगुजत्कोटिना कार्मुकेण।

समरशिरसि चंचत्पचचूडश्चमूनामुपरि शरतुषारं कोऽप्ययं वीरपोतः।। 2 ।।

सरलार्थ-

कुछ क्रोध करने में जिसकी मुखश्री लाल हो गई है और जिसकी पाँचों शिखायें हिल रही हैं, ऐसा कोई यह वीर बालक युद्धभूमि में मौर्वी में लगातार गूँजने वाली कोटियों से युक्त धनुष से सेनाओं के ऊपर तुषार की वर्षा के समान बाणों की वर्षा कर रहा है। इस पद्य के अन्तिम चरण में उपमा अलंकार है।

मुनिजनशिशुरेकः सर्वतः संप्रकोपान्नव इव रघुवंशस्याप्रसिद्धिप्ररोहः।

दलितकरिकपोलग्रन्थिटङ्कारघोरज्वलितशरसहस्त्र: कौतुकं मे करोति।। 3 ।।

सरलार्थ-

रघुकुल का नये अप्रसिद्ध अंकुर के समान मुनि बालक अकेला ही अत्यन्त क्रोध से चारों तरफ विमर्दित हाथियों के कपोलग्रन्थियों के टंकार से भयंकर प्रज्वलित हजारों बाणों से मेरे कौतुक को उत्पन्न कर रहा है। इस पद्य में लव की उपमा अंकुर से होने के कारण उपमा अलंकार है।

अतिशयितसुरासुरप्रभावं शिशुमवलोक्य तथैव तुल्यरूपम्।

कुशिकसुतमखद्विषां प्रमाथे धृतधनुषं रघुनन्दनं स्मरामि।। 4 ।।

सरलार्थ-

उसी तरह (राम के सदृश)से समान रूप वाले और देवता और दैत्यों के पराक्रम को अतिक्रान्त करने वाले इस बालक को देखकर विश्वामित्र के यज्ञ में विघ्न करने वाले सुबाहु आदि को नष्ट करने के लिए धनुष को उठाए हुए श्रीराम को याद कर रहा हूँ। इस पद्य में सुमन्त्र द्वारा लव के सौन्दर्य और पराक्रम के साम्य को देखकर श्रीराम को स्मरण किया जा रहा है, इसलिए स्मरण अलंकार है।

अयं हि शिशुरेकको मदभरेण भूरिस्फुरत्करालकरकन्दलीजटिलशस्त्रजालैर्बलैः।

क्वणत्कनककिङ्किणी झणझणायितस्यन्दनैरमन्दमददुर्दिनद्विरदडामरैरावृतः।। 5 ।।

सरलार्थ-

यह अकेला बालक तुमुलसंग्राम में अत्यन्त चमकते हुए, भीषण तथा कन्दलीसदृश (विशाल) हाथों में धारण किए हुए शस्त्रसमूहों से युक्त, शब्द करती हुई स्वर्णघंटिकाओं से

झणझण ध्वनि करते हुए रथों से युक्त बहुत अधिक मदजल को बरसाने वाले मेघसदृश हाथियों से युक्त सेनाओं से घिरा हुआ है। इस पद्य में उपमा अलंकार है।

आगर्जद्गिरिकुंजकुच्जरघटानिस्तीर्णकर्णज्वर
ज्यानिर्घोषममन्ददुन्दुभिरवैराध्मातमुज्जृम्भयन्।
वेल्लद्भैरवरुण्डखण्डनिकरैर्वीरोविधत्तेभुवं
तृष्यत्कालकरालवक्त्रविघसव्याकीर्यमाणामिव।। 6 ।।

सरलार्थ-

यह वीर बालक अधिक भेरी के शब्दों से बढ़े हुए, पर्वतीय लताकुञ्ज के बहुत गर्जन वाले हाथियों की पंक्ति के कानों को पीड़ित करने वाले मौर्वीशब्द को उत्पन्न करता हुआ छटपटाते हुए कबन्ध और उनके शिरों के समूहों से पृथ्वी को, प्यासे मृत्यु के भंयकर मुख के भुक्तावशिष्ट पदार्थों से आच्छादित सी कर रहा है।

भो भो लव महाबाहो किमेभिस्तव सैनिकैः।
एषोऽहमेहि मामेव तेजस्तेजसि शाम्यतु।। 7 ।।

सरलार्थ-

हे बड़ी भुजाओं वाले लव, इन सैनिकों से तुम्हारा क्या प्रयोजन है? तुम्हारे लिए यह मैं हूँ, मेरे पास आओ, तेज तेज में शान्त हो जाय।

विनिवतित एष वीरपोतः पृतनानिर्मथनात्त्वयोपहूतः।
स्तनयित्नुरवादिभावलीनामवमर्दादिव दृप्तसिंहशावः।। 8 ।।

सरलार्थ-

यह वीर बालक, मेघ की ध्वनि को सुननेसे हाथियों के विनाश से गर्वित सिंहशिशु के समान तुम्हारे द्वारा चुनौती दिया हुआ सेनाओं के हनन से हट गया है। इस पद्य में लव की सिंह शिशु से समानता होने पर उपमा अलंकार है।

अयं शैलाघातक्षुभितवडवावक्त्रहुतभुक्प्रचण्डक्रोधाचिनिचयकवलत्वं व्रजतु मे।
समन्तादुत्सर्पद्धनतुमुलहेलाकलकलः पयोराशेरोघः प्रलयपवनास्फालित इव।। 9 ।।

सरलार्थ-

प्रलयकाल के वायु से आलोडित समुद्र के प्रवाह के समान सब ओर फैलता हुआ यह सेना का गम्भीर तथा संकुल कोलाहल, पर्वतों के साथ टकराने से उद्दीपित बड़वानल के समान जो मेरा क्रोध है वह ज्वालाओं के समूह का ग्रास बने। इसमे कोलाहल की उपमा समुद्र के ज्वार से तथा क्रोध की उपमा वडवाग्नि से दी गई है।

अत्यद्भुतादपि गुणातिशयात्प्रियो मे तस्मातसखा त्वमसि यन्मम तत्तवैव।
तत्किं निजे परिजने कदनं करोषि नन्वेष दर्पनिकषस्तव चन्द्रकेतु।। 10 ।।

सरलार्थ-

अत्यन्त अद्‌भुत गुणों के उत्कर्ष के कारण तुम मेरे प्यारे मित्र हो, इसलिए जो पदार्थ मेरा है, वह तुम्हारा ही है। तब क्यों अपने ही सैन्यवर्ग का हनन कर रहे हो। निःसन्देह यह चन्द्रकेतु तुम्हारे गर्व की कसौटी है।

दर्पेण कौतुकवता मयि बद्धलक्ष्यः पश्चाद्बलैरनुसृतोऽयमुदीर्णधन्वा।

द्वेधा समुद्धतमरुत्तरलस्य धत्ते मेघस्य माघवतचापधरस्य लक्ष्मीम्।। 11 ।।

सरलार्थ-

कौतुकयुक्त गर्व से मुझे लक्ष्य करने वाले और पीछे से सेनाओं से अनुगत धनुर्धारी ये लव दोनों ओर से चलने वाले वायु से चञ्चल इन्द्रधनुष से युक्त मेघ की शोभा को धारण कर रहे हैं। इस पद्य में द और ध वर्ण की आवृत्ति होने से अनुप्रास अलंकार है।

संख्यातीतैर्द्विरदतुरगस्यन्दनस्थैः पदाता

वत्रैकस्मिन् कवचनिचितैर्नद्धचर्मात्तरीये।

कालज्येष्ठैरपरवयसि ख्यातिकामैर्भवद्भि

र्योऽयं बद्धो युधि समभरस्तेन धिग्वो धिगस्मान्।। 12 ।।

सरलार्थ-

अगणित हाथी, घोड़े और रथ पर चढ़े हुए, कवचधारण किये हुए, अवस्था में बड़े आप लोगों द्वारा पैदल, अकेले, पवित्र चर्म के उत्तरीय वाले तथा नवीन अवस्था से कमनीय शरीर वाले इस (लव) के विषय में जो यह युद्ध में कमर कसी गई है, उससे तुम्हें धिक्कार है और हमें धिक्कार है।

इस पद्य में एक के साथ अनेकों का, पदाति के साथ हाथी, घोड़ों और रथों पर बैठे हुओं का कवचहीन के साथ कवचधारियों का तथा किशोर के साथ प्रौढ़ों का युद्ध अनुचित है। यहाँ विरुद्ध संघटना के कारण विषम अलंकार है।

व्यतिकर इव भीमस्तामसो वैद्युतञ्च प्रणिहितमपि चक्षुर्ग्रस्तमुक्तं हिनस्ति।

अथ लिखितमिवैतत्सैन्यमस्पन्दमास्ते नियतमजितवीर्यं जृम्भते जृम्भकास्त्रम्।। 13

सरलार्थ-

अन्धकार और बिजली के भयंकर सम्पर्क की तरह प्रयत्न से निक्षेप करने पर भी पहले अन्धकार से ग्रस्त पीछे प्रकाश में छूटे हुए नेत्र को विषय के ज्ञान में असमर्थ कर देता है। अब यह हमारी सेना लिखी हुई की सदृश निश्चेष्ट हो गई। निश्चय ही जिसका पराक्रम नहीं जीता गया है ऐसा जृम्भक अस्त्र आविर्भूत हो रहा है। इस पद्य में लिखितमिव में उपमा अलंकार है। सेना की निस्पन्दता रूप लिंग (साधन)से जृम्भकास्त्र के जृम्भण रूप लिंगी (साध्य)का ज्ञापन हो रहा है। अतः अनुमान अलंकार है।

पातालोदरकुञ्जपुजततमःश्याममैर्नभो
जृम्भकैरुत्तप्तस्फुरदारकूटकपिलज्योतिर्ज्वलद्दीप्तिभिः।
कल्पाक्षेपकठोरभैरवमरुद्व्यस्तैरभिस्तीर्यते
लीनाम्भोदतडित्कडारकुहरैर्विन्ध्याद्रिकूटैरिव।। 14 ।।

सरलार्थ-

पाताल के भीतर लतागृहों में इकट्ठे हुए अन्धकारों के सदृश श्यामवर्ण वाले, चमकते हुए पीतल के तेज के तुल्य प्रकाशित कान्ति से सम्पन्न जृम्भक अस्त्र, प्रलयकाल में कठोर और भयंकर वायु से उखाड़े हुए, छिपे मेघवाले और बिजली से पीले गुफाओं से युक्त विन्ध्यपर्वत के शिखरों की तरह आकाश को व्याप्त कर रहे हैं। इस पद्य में जृम्भकास्त्रें की उपमा अन्धकार और तपे हुए पीतल से दी गई है।

कृशाश्वतनया ह्येते कृशाश्वात्कौशिकं गताः।
अथ तत्संप्रदायेन रामभद्रे स्थिता इति।। 15 ।।

सरलार्थ-

ये जृम्भकास्त्र कृशाश्व के पुत्र हैं। कृशाश्व से कौशिक (विश्वामित्र)को प्राप्त हुए। अनन्तर उसके शिष्य परम्परा से रामभद्र को प्राप्त हुए।

यदृच्छासंवादः किमु गुणगणानामतिशयः
पुराणो या जन्मान्तरनिबिडबद्धः परिचयः।
निजो वा संबन्धः किमु विधिवशात्कोऽप्यविदितो
ममैतस्मिन्दृष्टे हृदयमवधानं रचयति।। 16 ।।

सरलार्थ-

क्या आकस्मिक समागम है, क्या शौर्यादिगुणों का प्रकर्ष है, अथवा अन्य जन्मों में दृढ़ता से बँधा हुआ परिचय है अथवा भाग्यवश क्या कोई अज्ञात आत्मीय संबन्ध है, इसे देखने पर मेरे हृदय को एकाग्रता को प्राप्त करा रहा है। इस पद्य के आरम्भिक तीन पद्यों में संदेह अलंकार है।

अहेतुः पक्षपातो यस्तस्य नास्ति प्रतिक्रिया।
स हि स्नेहात्मकस्तन्तुरन्तर्भूतानि सीव्यति।। 17 ।।

सरलार्थ-

जो हेतुरहित अनुराग होता है, उसका प्रतीकार नहीं है। वह प्रेममय सूत्र प्राणियों को हृदय में सी देता है।

एतस्मिन् मसृणितराजपट्टकान्ते मोक्तव्याः कथमिव सायकाः शरीरे।
यत्प्राप्तौ मम परिरम्भणाभिलाषादुन्मीलत्पुलककदम्बमङ्गमास्ते।। 18 ।।

सरलार्थ-

चिकने किए हुए राजपट्ट के समान मनोहर इस शरीर पर बाण कैसे छोड़े जायेंगे? जिसकी प्राप्ति होने पर आलिङ्गन की चाह से मेरा अङ्ग उठते हुए रोमाञ्चों से युक्त हो रहा है। इस पद्य में उपमा अलंकार है।

स्वयं आकलन कीजिए –

अभ्यास प्रश्न 1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए –

1. कुमार चंद्रकेतु के पिता कौन थे?
2. सुबाहु का वध किसने किया था?
3. लव ने सर्वप्रथम किससे युद्ध किया था?
4. जृम्भकास्त्र का प्रयोग किसने किस पर किया था?
5. लव-कुश ने राम की सेना से युद्ध क्यों किया था?

9.4 उत्तररामचरित के पञ्चम अङ्क के 19-35 पद्यों का अर्थ

किं चाक्रान्तकठोरतेजसि गतिः का नाम शस्त्रं
विना शस्त्रेणापि हि तेन किं न विषयो जायते यस्येदृशः।
किं वक्ष्यत्ययमेव युद्धविमुखं मामुद्यतेऽप्यायुधे
वीराणां समयो हि दारुणरसः स्नेहक्रमं बाधते।। 19 ।।

सरलार्थ-

कठोर तेज को प्राप्त किये हुए पुरुष में शस्त्र के बिना क्या उपाय है? जिस शस्त्र को छोड़ने के लिए ऐसा पात्र नहीं होगा तो उस शस्त्र से भी क्या काम? शस्त्र उठाने पर भी युद्ध से पराङ्मुख होने वाले मुझको ये क्या कहेंगे? क्योंकि वीररस से सम्पन्न वीरपुरुषों का आचार प्रेम के क्रम को रोक देता है। इस पद्य के अन्तिम पाद में वर्णित सामान्य का विशेष से समर्थन होने से अर्थान्तरन्यास अलंकार है।

मनोरथस्य यद्बीजं तद्दैवेनादितो हृतम्।
लतायां पूर्वलूनायां प्रसवस्योद्भवः कुतः।। 20 ।।

सरलार्थ-

मनोरथ का जो कारण था, वह तो भाग्य ने पहले ही छीन लिया है। पहले से ही काटी गई लता पर पुष्प की उत्पत्ति कैसे होगी? इस पद्य के दूसरे पाद में लता का उदाहरण देकर दृष्टान्त अलंकार को दर्शाया गया है।

कथं हीदमनुष्ठानं मादृशः प्रतिषेधतु।

कथं वाऽभ्यनुजानातु साहसैकरसां क्रियाम्।। 21 ।।

सरलार्थ-

मुझ जैसा पुरुष इस अनुष्ठान का कैसे निषेध करे और एकमात्र साहस में अनुराग करने वाले ऐसे काम की भी कैसे अनुमति दे?

एष सांग्रामिको न्याय एष धर्मः सनातनः।

इयं हि रघुसिंहानां वीरचारित्रपद्धतिः।। 22 ।।

सरलार्थ-

संग्राम के अवसर में उत्पन्न यह वीरसत्कार न्याययुक्त है, यह सनातन धर्म है, क्योकि यह रघुवंश के वीरों की आचार पद्धति है।

इतिहासं पुराणं च धर्मप्रवचनानि च।

भवन्त एव जानन्ति रघूणां च कुलस्थितिम्।। 23 ।।

सरलार्थ-

इतिहास, पुराण और धर्म का उपदेश देने वाले धर्मशास्त्रें को तथा रघुवंशियों की कुलमर्यादा को आप ही जानते हैं। इस पद्य में ज्ञान रूपी क्रिया का इतिहास आदि पदार्थों के साथ सम्बन्ध होने से तुल्ययोगिता अलंकार है।

जातस्य ते पितुरपीन्द्रजितो निहन्तुर्वत्सस्य वत्स! कति नाम दिनान्यमूनि।

तस्याप्यपत्यमनुतिष्ठति वीरधर्मं दिष्टयागतं दशरथस्य कुलं प्रतिष्ठाम्।। 24 ।।

सरलार्थ-

हे वत्स! इन्द्रजित को माारने वाले वात्सल्यभाजन आपके पिता लक्ष्मण को भी कितने दिन हुए हैं? उनके पुत्र भी वीरधर्म का अनुष्ठान कर रहे हैं। भाग्य से दशरथ का वंश प्रतिष्ठा को प्राप्त कर रहा है। इस पद्य में दशरथ के वंश की प्रतिष्ठा का कारण वीरधर्म का पालन बताया गया है इसलिए इसमें काव्यलिङ्ग अलंकार है।

अप्रतिष्ठे कुलज्येष्ठे का प्रतिष्ठा कुलस्य नः।

इति दुःखेन तप्यन्ते त्रयो नः पितरोऽपरे।। 25 ।।

सरलार्थ-

कुल में ज्येष्ठ रामचन्द्र के सन्तानहीन होने पर हमारे कुल की क्या प्रतिष्ठा है? इस दुःख से हमारे और तीन पिता (भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न)संताप का अनुभव करते हैं।

यथेन्दावानन्दं व्रजति समुपोढे कुमुदिनी तथैवास्मिन्दृष्टिर्मम कलहकामः पुनरयम्।

रणत्कारक्रूरक्वणितगुणगुजद्गुरुधनुर्धृतप्रेमा बाहुविकचविकरालव्रणमुखः।। 26 ।।

सरलार्थ-

चन्द्रमा के उदित होने पर कुमुदिनी जिस प्रकार आनन्द को प्राप्त होती है उसी प्रकार इसमें (चन्द्रकेतु)मेरी दृष्टि भी आनन्द को प्राप्त होती है। रणत् ऐसे शब्द से भयंकर शब्द करने वाली मौर्वी से गूंजते हुए बड़े धनुष में प्रेम करने वाला औश्र अग्रभाग में विस्तृत तथा अतिशय विशाल घाव के चिन्हों से युक्त यह मेरा बाहु फिर युद्ध करने की इच्छा रखता है। इस पद्य में उपमा अलंकार है तथा दो परस्पर भावों की विरूपता की संघटना से विषम अलंकार भी है।

देवस्त्वां सविता धिनोतु समरे गोत्रस्य
यस्ते पतिस्त्वां मैत्रवरुणोऽभिनन्दतु गुरुर्यस्ते गुरुणामपि।
ऐन्द्रावैष्णवमाग्निमारुतमथो सौपर्णमोजोऽस्तु
ते देयादेव च रामलक्ष्मणधनुर्ज्याघोषमन्त्रे जयम्।। 27 ।।

सरलार्थ-

जो आपके वंश का प्रवर्तक है, वह सूर्यदेव युद्ध में आपको प्रसन्न रखे। जो आपके (पिता आदि)गुरुजनों का भी गुरु है, वह मित्र तथा वरुण का पुत्र वसिष्ठ आपका अभिनन्दन करे। इन्द्र तथा विष्णु का, अग्नि तथा वायु का और सुपर्ण का बल आपका हो। राम तथा लक्ष्मण के धनुषों का मौर्वी टंकार रूप मन्त्र आपको विजय दे।

इस पद्य में निदर्शना अलंकार है क्योंकि चन्द्रकेतु को इन्द्र, विष्णु, अग्नि, वायु तथा गरुड़ का तेज नहीं मिल सकता, उनके तेज जैसा तेज ही मिल सकता है। धनुष की डोरी के शब्द पर मन्त्र का आरोप है अतः रूपक है।

वयमपि न खल्वेवंप्रायाः क्रतुप्रतिघातिनः
क इह न गुणैस्तं राजानं जनो बहु मन्यते।
तदपिखलुमे स व्याहारस्तुरङ्गमरक्षिणां
विकृतिमखिलक्षत्रक्षेपप्रचण्डतयाऽकरोत्।। 28 ।।

सरलार्थ-

वस्तुतः हम भी प्रायः इस प्रकार के यज्ञविघातक नहीं हैं। फिर इस संसार में कौन उस राजा का गुणों के कारण सम्मान नहीं करता है। तथापि अघŏरक्षकों के उस वचन ने सम्पूर्ण क्षत्रियों के तिरस्कार से अत्यन्त उग्र होने के कारण मेरे विकार को उत्पन्न कर ही दिया।

ऋषियो राक्षसीमाहुर्वाचमुन्मत्तदृप्तयोः।
सा योनिः सर्ववैराणां सा हि लोकस्य निष्कृतिः।। 29 ।।

सरलार्थ-

ऋषि लोग उन्मत्त और अहंकारी पुरुष की वाणी को राक्षसी कहते हैं। वह विरोधों का कारण है और वही लोक के तिरस्कार का कारण है।

कामं दुग्धे विप्रकर्षत्यलक्ष्मीं कीर्तिं सूते दुर्हृदो निष्प्रलाति।

शुद्धां शान्तां मातरं मङ्गलानां धेनुं धीराः सूनृतां वाचमाहुः।। 30 ।।

सरलार्थ-

जो मनोरथों को पूर्ण करती है, अलक्ष्मी को हटाती है, यश को उत्पन्न करती है, पाप को नष्ट करती है, उस प्रकार की इस कल्याणों की जननी प्रियसत्य वाणी को तो पण्डित लोग कामधेनु कहते हैं।

सैनिकानां प्रमाथेन सत्यमोजायितं त्वया।

जामदग्न्यस्य दमने न हि निर्बन्धमर्हसि।। 31 ।।

सरलार्थ-

सैनिकों के विमर्दन से तुम्हारे द्वारा ओजस्वी के जैसा आचरण किया गया। जमदग्नि के पुत्र (परशुराम) के दमन करने वाले में तुम्हें आग्रह उचित नहीं है।

सिद्धं ह्येतद्वाचि वीर्यं द्विजानां बाह्नोवीर्यं यत्तु तत्क्षत्रियाणाम्।

शस्त्रग्राही ब्राह्मणो जामदग्न्यस्तस्मिन्दान्ते का स्तुतिस्तस्य राज्ञः।। 32 ।।

सरलार्थ-

यह बात प्रसिद्ध है कि ब्राह्मणों का पराक्रम वाणी में होता है, परन्तु भुजाओं में जो बल होता है वह तो क्षत्रियों का होता है। जमदग्नि का पुत्र परशुराम शस्त्रधारी ब्राह्मण है, तब उनके पराजित होने पर उन राजा (रामचन्द्र) की कौन सी प्रशंसा है।

कोऽप्येष संप्रति नवः पुरुषावतारो वीरो न यस्य भगवान्भृगुनन्दनोऽपि।

पर्याप्तसप्तभुवनाभयदक्षिणानि पुण्यानि तात चरितान्यपि यो न वेद।। 33 ।।

सरलार्थ-

इस समय ये कोई अपूर्व पुरुषावतार आविर्भूत हो गये हैं, जिनके मत में परशुराम भी वीर नहीं हैं। जो सात लोकों को पूर्ण अभयदान करने वाले पिताजी (रामचन्द्र) के पवित्र चरित्रें को भी नहीं जानते हैं। इस पद्य में अनुप्रास अलंकार है।

वृद्धास्ते न विचारणीयचरितास्तिष्ठन्तु हुंवर्तते
सुन्दरस्त्रीमथनेऽप्यकुण्ठयशसो लोके महान्तो हि ते।
यानि त्रीणि कुतोमुखान्यपि पदान्यासन्खरायोधने
यद्वा कौशलमिन्द्रसूनुनिधने तत्रप्यभिज्ञो जनः।। 34 ।।

सरलार्थ-

वह (श्रीराम) वयोवृद्ध हैं, अतः आलोचना करने योग्य चरित वाले नहीं हैं। वैसे रहें, उनके विषय में क्या कहा जाय। सुन्द की भार्या का हनन करने पर भी अप्रतिहत यश वाले वह लोक में श्रेष्ठ ही हैं। खर के साथ युद्ध में तीन पग पीछे हटे थे अथवा इन्द्र के पुत्र बाली के मारने में जो निपुणता की थी उससे भी लोग परिचित हैं। इस पद्य में लव राम के चरित्र की आलोचना कर रहा है। यहाँ तिष्ठन्तु पद से वक्ष्यमान का निषेध किया गया है, अतः आक्षेप अलंकार है।

क्रोधेनोद्धतधूतकुन्तलभरः सर्वाङ्गजो वेपथुः
किञ्चित्कोकनदच्छदस्य सदृशे नेत्रे स्वयं रज्यतः।
धत्ते कान्तिमिदं च वक्त्रमनयोर्भङ्ग
न भिन्न भ्रुवोश्चन्द्रस्योद्भटलाच्छनस्य कमलस्योद्भ्रान्तभृङ्गस्य च।। 35 ।।

सरलार्थ-

क्रोध से केशों को अतिशय हिलाने वाला समस्त शरीर में उत्पन्न कम्प प्रकट हो रहा है। स्वभाव से ही रक्तकमल के पत्र के कुछ सादृश्य वाले दोनों नेत्र लाल हो रहे हैं। भ्रूभघõ से भयंकर इन दोनों के मुख भी कलंकयुक्त चन्द्र की ओर ऊपर मँडराते हुए भ्रमरों से युक्त कमल को भी कान्ति को धारण कर रहे हैं। इस पद्य में कम्पन और लाल नेत्रें आदि के रूप से क्रोधादि रूप के ज्ञान का अनुमान होने से अनुमान अलंकार है।

स्वयं आकलन कीजिये-

अभ्यास प्रश्न 2

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिये-

1. उत्तररामचरित के पंचम अङ्क का क्या नाम है?
2. चन्द्रकेतु के सारथि का नाम क्या है?
3. लव किस अस्त्र से चन्द्रकेतु की सेना को चित्रलिखित सी निश्चेष्ट कर देता है?
4. भवभूति ने बल आदि मद से युक्त गर्वित की वाणी को कौन सी संज्ञा दी है?
5. खर के साथ युद्ध करते हुए श्रीराम ने लक्ष्यसंधान के लिए कितने कदम पीछे किये?

8.5 सारांश

इस इकाई में उत्तररामचरित के पञ्चम अङ्क के चन्द्रकेतु तथा लव के बीच भीषण संग्राम को वर्णित किया है। वीररस के प्रकर्ष के लिए इस अङ्क को सबसे उत्कृष्ट कहा है। इस अङ्क में विष्कम्भक तथा प्राकृत भाषा का अभाव है। इसमें लव युद्ध करके सैनिकों

को भाने में सक्षम होता है। इसमें लव और कुश का चन्द्रकेतु के साथ युद्ध का वर्णन किया गया है।

8.6 कठिन शब्दावली

अवलम्बन= आश्रय,सहारा	ननु= निसन्देह
वाजिन्= अश्व	कोविदार=कचनार
संभ्रम=शीघ्रता	चूड़ा=शिखा,काकपक्ष
प्रमाथ=विनाश	भूरि=अत्यन्त
अमन्द=गम्भीर	पृतना= सेना
तुमुल= संकुल	निकष=कसौटी

8.7 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न-1 1. लक्ष्मण 2. राम 3. चंद्रकेतु 4. लव ने चंद्रकेतु पर 5. अश्व के लिए

अभ्यास प्रश्न-2 1. चंद्रकेतु 2. सुमन्त 3. जृम्भकास्त्र 4. राक्षसी 5. तीन

8.8 सहायक ग्रन्थ

1. उत्तररामचरितम्, महाकवि भवभूति, चौखम्बा संस्कृत सीरीज वाराणसी।
2. उत्तररामचरितम्, महाकवि भवभूति,व्याख्याकार आनन्दस्वरूप, सम्पादक: जनार्दनशास्त्री पाण्डेय, मोतीलाल बनारसीदास दिल्ली, वाराणसी।

8.9 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. 'उत्तररामचरिते भवभूतिर्विशिष्यते' इस कथन की समीक्षा कीजिये।
2. निम्नलिखित पद्यों का सप्रसंग सरलार्थ कीजिये-
   पंचम अङ्क - 6, 9, 12, 13, 26, 35
3. निम्नलिखित सूक्तियों की व्याख्या कीजिये-
   तेजस्तेजसि शाम्यतु। 5/7, 5/17
   वीराणां समयो हि दारुणरसः स्नेहक्रमं बाधते। 5/19
   लतायां पूर्वलूनायां प्रसवस्योद्भवः कुतः। 5/20
   सिद्धं ह्येतद्वाचि वीर्यं द्विजानां बाह्वोर्वीर्यं यत्तु तत्क्षत्रियाणाम्। 5/32

अध्याय-9

इकाई-9

उत्तररामचरित : षष्ठम अङ्क

संरचना

9.1 प्रस्तावना

9.2 उद्देश्य

9.3 उत्तररामचरित के षष्ठम अङ्क के 1-21 पद्यों का अर्थ

- स्वयं आकलन अभ्यास प्रश्न-1

9.4 उत्तररामचरित के षष्ठम अङ्क के 22-42 पद्यों का अर्थ

- स्वयं आकलन अभ्यास प्रश्न-2

9.5 सारांश

9.6 कठिन शब्दावली

9.7 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

9.8 सहायक ग्रन्थ

9.9 अभ्यास के लिए प्रश्न

9.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों, इस इकाई में आप उत्तररामचरित के षष्ठम अङ्क की विषयवस्तु में प्रयुक्त पद्यों का अध्ययन करेंगे। षष्ठम अङ्क का नाम कुमारप्रत्यभिज्ञान है, जिसमें विष्कम्भक में विद्याधर एवं विद्याधरी के माध्यम से लव-चन्द्रकेतु के भयंकर युद्ध की घटना में वर्णित पद्यों का वर्णन किया जायेगा। उसके पश्चात् श्रीराम के वहाँ पहुँचकर अपने पुत्रों से परिचय की घटना में प्रयुक्त पद्यों का वर्णन किया जायेगा।

9.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जानने में सक्षम होंगे ।

- षष्ठ अङ्क की विषयवस्तु में प्रयुक्त पद्यों का अर्थ।
- इस अङ्क में प्रयुक्त पद्यों के अलंकार।

9.3 उत्तररामचरित के षष्ठ अङ्क के 1-21 पद्यों का अर्थ

झणज्झणितकङ्कणक्वणितकिङ्किणीकं
धनुर्ध्वनद्गुरुगुणाटनीकृतकरालकोलाहलम्।
वितत्य किरतोः शरानविरतं पुनः
शूरयोविचित्रमभिवर्तते भुवनभीममायोधनम्।। 1 ।।

सरलार्थ-

झन झन शब्द करने वाले कङ्कण की तरह शब्द करने वाली किङ्किणियों से युक्त, भारी मौर्वी को शब्दायमान करने वाले और अग्र भाग से भयंकर कोलाहल करने वाले धनुष को फैलाकर बाणों को लगातार छोड़ने वाले इन दोनों वीर कुमारों को फिर विचित्र और लोक के लिए भयंकर संग्राम हो रहा है। इस पद्य में उपमा और अनुप्रास अलंकार है।

जृम्भितं च विचित्राय मङ्गलाय द्वयोरपि।

स्तनयित्नोरिवामन्ददुन्दुभेर्दुन्दुभायितम्।। 2 ।।

सरलार्थ-

इन दोनो वीरों के विचित्र कल्याण के लिए गर्जन वाले मेघ की तरह भारी भेरी का दुमदुम शब्द उत्पन्न हो रहा है। इस पद्य में दुमदुम की उपमा मेघ से होने के कारण उपमा अलंकार है।

त्वाष्ट्रयन्त्रभ्रमिभ्रान्तमार्तण्डज्योतिरुज्ज्वलः।

पुटभेदो ललाटस्थनीललोहितचक्षुष।। 3 ।।

सरलार्थ-

ललाटस्थित महादेव के नेत्र का विश्वकर्मा (त्वष्ट्र) के शाणयन्त्र के भ्रमण में घूमने वाले सूर्य के प्रकाश के तुल्य उन्मीलन हुआ है। इस पद्य के मार्तण्डज्योतिरुज्ज्वलः में उपमा अलंकार है।

अवदग्धबर्बरितकेतुचामरैरपयातमेव हि विमानमण्डलैः।

दहति ध्वजांशुकपटावलीमिमां नवकिंशुकद्युतिसविभ्रमः शिखी।। 4 ।।

सरलार्थ-

कुछ जले हुए तथा बर्बर शब्द वाले ध्वजाओं तथा चामरों से युक्त विमानों के समूह भाग गये हैं, नये पलाश पुष्पों की कान्ति के सादृश्य से युक्त अग्नि ध्वजों के सूक्ष्म वस्त्रें की पंक्ति को जला रहा है। इस पद्य में अभवन वस्तु सम्बन्ध के होने से निदर्शना अलंकार है।

न किञ्चिदपि कुर्वाणः सौख्यैर्दुःखान्यपोहति।

तत्तस्य किमपि द्रव्यं यो हि यस्य प्रियो जनः।। 5 ।।

सरलार्थ-

जो जिसका प्रियजन होता है, वह उसका अनिवर्चनीय द्रव्य होता है, वह कुछ भी न करता हुआ सुखों से दुःखों को दूर करता है।

विद्याकल्पेन मरुता मेघानां भूयसामपि।

ब्रह्मणीव विवर्तानां क्वापि प्रविलयः कृतः।। 6 ।।

सरलार्थ-

विद्यासदृश वायु से बहुसंख्यक भी मेघों का, ब्रह्म में विवर्तों के समान कहीं लय कर दिया है। इस पद्य में वायु की विद्या से तथा मेघों की विवर्तों से उपमा दी गई है।

शान्तं महापुरुषसंगदितं निशम्य तद्गौरवात्समुपसंहृतसंप्रहारः।

शान्तो लवः प्रणत एव च चन्द्रकेतुः कल्याणमस्तु सुतसंगमनेन राज्ञः।। 7 ।।

सरलार्थ-

महापुरुष के शान्त वचन को सुनकर उनके गौरव से युद्ध को छोड़कर लव शान्त हो गया है और चन्द्रकेतु ने भी रामचन्द्र को प्रणाम किया है। दोनों पुत्रें के समागम से महाराज का कल्याण हो।

दिनकरकुलचन्द्र चन्द्रकेतो सरभसमेहि दृढं परिष्वजस्व।

तुहिनशकलशीतलैस्तवाघैः शममुपयातु ममापि चित्तदाहः।। 8 ।।

सरलार्थ-

हे सूर्यवंश के चन्द्र चन्द्रकेतो! जल्दी आओ और गाढ़ आलिंगन करो। तेरे हिमखण्ड के समान शीतल अङ्गों से मेरा चित्तसंताप भी शान्ति को प्राप्त करे। इस पद्य में चन्द्रकेतु के अङ्गों की तुलना हिमखण्ड से की है इसलिए उपमा अलंकार है और चन्द्र-चन्द्रकेतु में यमक अलंकार है।

त्रातुं लोकानिव परिणतः कायवानस्वेदः

क्षात्रो धर्मः श्रित इव तनुं ब्रह्मकोशस्य गुप्त्यै।

सामर्थ्यानामिव समुदयः सञ्चयो वा गुणाना

माविर्भूय स्थित इव जगत्पुण्यनिर्माणराशिः।। 9 ।।

सरलार्थ-

लोकों की रक्षा करने के लिए धनुर्वेद मानों शरीरधारी हो गया है। पेदरूप निधि की रक्षा के लिए क्षात्रधर्म ने मानों शरीर धारण किया है। शक्तियों का मानों एक आधार में मिलकर आविर्भाव हुआ है। गुणों का मानों समूह है। जगत् के निर्मित पुण्यों का पुञ्ज मानों शरीरधारी के रूप में स्थित है। इस पद्य में उत्प्रेक्षा अलंकार है।

आश्वास इव भक्तीनामेकमायतनं महद्।

प्रकृष्टस्येव धर्मस्य प्रसादो मूर्तिसुन्दरः।। 10 ।।

सरलार्थ-

विश्वसनीयता, स्नेह तथा भक्ति का एकमात्र बड़ा आलम्बन है, उत्कृष्ट धर्म का मानों शरीर से संचरणशील अनुग्रह है। इस पद्य में भी उत्प्रेक्षा अलंकार है।

विरोधो विश्रान्तः प्रसरति रसो निर्वृतिघनस्तदौद्धत्यं

क्वापि व्रजति विनयः प्रह्नयति माम्।

झटित्यस्मिन्दृष्टे किमिति परवानस्मि यदि वा

महार्घस्तीर्थानामिव हि महतां कोऽप्यतिशयः।। 11 ।।

सरलार्थ-

वैर शान्त हो गया, आनन्द से गाढ़ा रस फैल रहा है, वह दर्पजनित चापल्य कहाँ चला गया है, विनय मुझको नम्र बना रहा है। इनके (महापुरुष) देखने पर किसी कारण से मैं परवश हो गया हूँ अथवा पुण्य क्षेत्रें के समान महापुरुषों का कोई बहुमूल्य उत्कर्ष होता है।

व्यतिषजति पदार्थानान्तरः कोऽपि हेतुर्न खलु बहिरुपाधीन्प्रीतयः संश्रयन्ते।

विकसति हि पतङ्गस्योदये पुण्डरीकं द्रवति च हिमरश्मावुद्गते चन्द्रकान्तः।। 12 ।।

सरलार्थ-

हुआ और भीतर रहा कारण पदार्थों को मिलाता है, प्रेम बाहर के कारणों का आश्रय नहीं करता। क्योंकि सूर्य के उदय होने पर कमल खिलता है और चन्द्रमा के उदित होने पर चन्द्रकान्त मणि पिघलता है। इस पद्य में पूर्वार्द्ध में वर्णित विशेष का उत्तरार्द्ध में वर्णित सामान्य के साथ समर्थन होने से अर्थान्तरन्यास अलंकार है।

परिणतकठोरपुष्करगर्भच्छदपीनमसृणसुकुमारः।

नन्दयति चन्द्रचन्दननिष्यन्दजडस्तव स्पर्शः।। 13 ।।

सरलार्थ-

सुविकसित तथा पूर्णता को प्राप्त कमल के भीतरी दल (पंखुड़ी) के समान स्थूल, चिकना और कोमल तथा चन्द्रमा और चन्दन के रस के समान शीतल तेरा स्पर्श मुझे आनन्दित करता है। इस पद्य में उपमा अलंकार है।

न तेजस्तेजस्वी प्रसृतमपरेषां विषहते

स तस्य स्वो भावः प्रकृतिनियतत्वादकृतकः।

मयूखैरश्रान्तं तपति यदि देवो दिनकरः

किमाग्नेयो ग्रावा निकृत इव तेजांसि वमति।। 14 ।।

सरलार्थ-

तेजस्वी दूसरों के प्रकट हुए तेज को नहीं सहन करता है। वह (परकीय तेज का असहन)स्वभाव द्वारा नियन्त्रित होने से उसका अकृत्रिम स्वकीय भाव स्वभाव है। यदि भगवान् सूर्य किरणों द्वारा अविराम रूप से तपते हैं तो क्यों सूर्यकान्त मणि अपमानित हुआ सा अग्नियों का उगलता है। इस पद्य में पूर्वार्द्ध में वर्णित सामान्य का उत्तरार्द्ध में वर्णित विशेष के साथ समर्थन होने से अर्थान्तरन्यास अलंकार है। सूर्यकान्त मणि के द्वारा अग्नियों को उगलने की सम्भावना से उत्प्रेक्षा अलंकार है।

ब्रह्मादयो ब्रह्महिताय तस्वा परःसहस्रं शरदस्तपांसि।

एतान्यदर्शन्गुरवः पुराणाः स्वान्येव तेजांसि तपोमयानि।। 15 ।।

सरलार्थ-

ब्रह्मा आदि प्राचीन गुरुओं ने वेद के हित धारण करने के लिए सहस्त्रों वर्षों से भी अधिक समय तक तपों को तपकर अपने ही तपःस्वरूप तेजों के रूप इन जृम्भकास्त्रें को देखा।

आयुष्मतः किल लवस्य नरेन्द्रसैन्यैरायोधनं ननु किमात्थ सखे तथेति।

अद्यास्तमेतु भुवनेषु च राजशब्दः क्षत्रस्य शस्त्रशिखिनः शममद्य यान्तु।। 16 ।।

सरलार्थ-

मित्र, आयुष्मान! लव का राजा की सेनाओं से युद्ध हो रहा है क्या? अच्छा, क्या मित्र, यही बात है। ऐसा कहते हो? तो आज भुवनों में राजा शब्द नाश को प्राप्त हो और क्षत्रिय की शस्त्ररूप अग्नि बुझ जाय। इस पद्य के शस्त्रशिखिनः में शस्त्र में शिखी (अग्नि)का आरोप होने के कारण रूपक अलंकार है।

अथ कोऽयमिन्द्रमणिमेचकच्छविर्ध्वनिनैव बद्धपुलकं करोति माम्।

नवनीलनीरधरधीरगर्जितक्षणबद्धकुड्मलकदम्बडम्बरम्।। 17 ।।

सरलार्थ-

इन्द्रनीलमणि के समान श्याम कान्ति वाला यह कौन शब्दमात्र से मुझको नये और श्याम वर्णवाले मेघ के गम्भीर गर्जन के अवसर में विकसित मुकुल वाले कदम्ब के सदृश रोमा×चयुक्त कर रहा है। इस पद्य में राम की उपमा मुकुलित कदम्ब से दी गई है।

दत्तेन्द्राभयदक्षिणैर्भगवतो वैवस्वतादा मनोर्दृप्तानां

दमनाय दीपितनिजक्षत्रप्रतापाग्निभिः।

आदित्यैर्यदि विग्रहो नृपतिभिर्धन्यं ममैतत्ततो

दीप्तास्त्रस्फुरदुग्रदीधितिशिखानीराजितज्यं धनुः।। 18 ।।

सरलार्थ-

भगवान् वैवस्वत मनु से आरम्भ कर इन्द्र तक को अभय दक्षिणा देने वाले, दर्पयुक्त पुरुषों के दमन के लिए अपने क्षत्रिय प्रतापरूप अग्नि को प्रज्वलित अस्त्रें की प्रकाशमान और भयंकर किरणों की शिखा से आरती की गई मौर्वी से युक्त धनुष धन्य होगा। इस पद्य में अभय पर दक्षिणा का तथा प्रताप पर अग्नि के आरोप के कारण रूपक अलंकार है।

दृष्टिस्तृणीकृतजगत्त्रयसत्त्वसारा धीरोद्धता नमयतीव गतिर्धरित्रीम्।

कौमारके{पि गिरिवद् गुरुतां दधानो वीरो रसः किमयमेत्युत दर्प एव।। 19 ।।

सरलार्थ-

इसकी दृष्टि तीनों लोकों के बल के उत्कर्ष को तृण की तरह उपेक्षित करने वाली है, इसकी अविचलित तथा गर्वित चाल पृथ्वी को मानों झुका देती है। बाल्यावस्था में भी पर्वत की तरह गौरव को धारण करता हुआ यह क्या वीररस अथवा अभिमान ही आ रहा है। इस पद्य में नमयतीव में उत्प्रेक्षा अलंकार है।

अहो प्रासादिकं रूपमनुभावश्च पावनः।
स्थाने रामायणकविर्देवीं वाचमवीवृधत्।। 20 ।।

सरलार्थ-

अहो! इनका प्रसादपूर्ण रूप तथा पवित्र प्रभाव है। इनके वर्णन के लिए रामायण के कवि ने वाग्देवी को परिवर्धित किया है।

अमृताध्मातजीमूतस्निग्धसंहननस्य ते।
परिष्वङ्ग य वात्सल्यादयमुत्कण्ठते जनः।। 21 ।।

सरलार्थ-

यह जन (रामचन्द्र) स्नेह के कारण जल से पूरित मेघ के समान कोमल शरीर वाले तुम्हारे आलिङ्गन के लिए उत्कण्ठित हो रहा है। इस पद्य में श्रीराम की उपमा मेघ से की है इसलिए उपमा अलंकार है।

स्वयं आकलन कीजिए –

अभ्यास प्रश्न 1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए –

1. इस अङ्क में दुमदुम शब्द की उपमा किससे की गई है?
2. किनके शान्त वचनों को सुनकर लव शान्त हो गया था?
3. इस अङ्क में चंद्रकेतु की तुलना किससे की गई है?
4. इस अङ्क का आरंभ किसकी वार्ता से हुआ?
5. राम से लव का परिचय कौन करवाता है?

9.4 उत्तररामचरित के षष्ठ अङ्क के 22-42 पद्यों का अर्थ

अङ्गादङ्गात्सृतइव निजः स्नेहजो देहसारः
प्रादुर्भूय स्थित इव बहिश्चेतनाधातुरेकः।
सान्द्रानन्दक्षुभितहृदयप्रस्रवेणावसिक्तो
गाढाऽऽश्लेषः स हि मम हिमच्योतमाशंसतीव।। 22 ।।

सरलार्थ-

यह बालक मानों अंग-अंग से चुआ हुआ, स्नेह से उत्पन्न मेरे शरीर का उत्कृष्ट अंश है, मानों चैतन्यरूप देहधारक पदार्थ ही प्रकट होकर बाहर स्थित हुआ है। मानों गाढ़

आनन्द से आलोडित हुए मेरे हृदय के निष्यन्द (द्रव) से निर्मित हुआ है क्योंकि यह दृढ़ आलिंगन के समय मेरे शरीर को मानों बरफ से सींच रहा है। इस पद्य में सम्भावना व्यक्त होने से उत्प्रेक्षा अलंकार है।

अहो प्रश्रययोगेऽपि गतिस्थित्यासनादयः।

साम्राज्यशंसिनो भावाः कुशस्य च लवस्य च।। 23 ।।

सरलार्थ-

अहो, विनययुक्त होने पर भी कुश तथा लव की चलने, ठहरने तथा बैठने आदि की क्रियाएँ साम्राज्य की सूचना करने वाली है।

वपुवियुतसिद्धा एव लक्ष्मीविलासाः प्रतिकलकमनीयां कान्तिमुद्भेदयन्ति।

अमलिनमिव चन्द्रं रश्मयः स्वे यथा वा विकसितमरविन्दं बिन्दवो माकरन्दाः।। 24 ।।

सरलार्थ-

जिस प्रकार अपनी किरणें निष्कलङ्क चन्द्र को प्रकाशित करती हैं, एवं जैसे पुष्परस के बिन्दुसमूह विकसित कमल को उत्पन्न करते हैं, उसी प्रकार स्वभाव से ही सिद्ध सौन्दर्य के अतिशय शरीर को उद्भासित करते हैं और प्रतिक्षण रमणीय कान्ति को भी पैदा करते हैं। इस पद्य में उपमा अलंकार है।

कठोरपारावतकण्ठमेचकं वपुर्वृषस्कन्धसुबन्धुरांसयोः।

प्रसन्नसिंहस्तिमितं च वीक्षितं ध्वनिश्च माघल्यमृदघमांसलः।। 25 ।।

सरलार्थ-

युवा कपोत के कण्ठ के समान श्यामल तथा वृषभ के कन्धे के समान सुन्दर कन्धे वाला (इन दोनों लव कुश का) शरीर है। प्रसन्न तथा सिंह के जैसी निश्चल दृष्टि है और मंगलसूचक मृदंग के जैसा गम्भीर स्वर है। इस पद्य में उपमा अलंकार है।

अपि जनकसुतायास्तच्च तच्चानुरूपं स्फुटमिह शिशुयुग्मे नैपुणोन्नेयमस्ति।

ननु पुनरिव तन्मे गोचरीभूतमक्ष्णोरभिनवशतपत्त्रश्रीमदास्यं प्रियायाः।। 26 ।।

सरलार्थ-

वैदेही का निपुणता से अनुमान किए जाने योग्य विविध आनुरूप्य भी इस शिशुयुगल में व्यक्त हो रहा है। प्रिया का वह नूतन कमल की शोभावाला मुख मानों फिर नेत्रें का विषय हुआ। इस पद्य में लव-कुश के मुख में सीता के मुख की सम्भावना होने से उत्प्रेक्षा अलंकार है।

शुक्लाच्छदन्तच्छविसुन्दरीयं सैवोष्ठमुद्रा स च कर्णपाशः।

नेत्रे पुनर्यद्यपि रक्तनीले तथापि सौभाग्यगुणः स एव।। 27 ।।

सरलार्थ-

सफेद और निर्मल दाँतों की कान्ति से सुन्दर यह ओष्ठमुद्रा वही अर्थात् सीता की ही है, कर्णपाश भी वही है, यद्यपि नेत्र लाल और काले हैं तथापि सौन्दर्यगुण वही है।

परां कोटिं स्नेहे परिचयविकासादधिगते रहो विस्रब्धाया अपि सहजलज्जाजडदृशः।
मयैवादौ ज्ञातः करतलपरामर्शकलया द्विधा गर्भग्रन्थिस्तदनु दिवसैः कैरपि तया।। 28 ।।

सरलार्थ-

परिचय के आधिक्य के कारण प्रेम के अतिशय उत्कर्ष को प्राप्त होने पर एकान्त में विश्वासयुक्त होकर भी स्वाभाविक लज्जा से मुंदी हुई आँखों वाली सीता के उदर में कर-स्पर्श की चातुरी से पहले मैंने ही दो सन्तानों वाली गर्भग्रन्थि को जान लिया, पीछे कई दिनों के बाद उन्होंने (सीता ने) भी जान लिया।

वाष्पवर्षेण नीतं वो जगन्मङ्गलमाननम्।
अवश्यायावसिक्तस्य पुण्डरीकस्य चारुताम्।। 29 ।।

सरलार्थ-

जगत् का मंगलरूप आपका मुख आँसुओं की वर्षा से, तुषार से सींचे हुए श्वेतकमल की शोभा को प्राप्त करा दिया गया है।

विना सीतादेव्या किमिव हि न दुःखं रघुपतेः
प्रियानाशे कृत्स्नं किलं जगदरण्यं हि भवति।
स च स्नेहस्तावानयमपि वियोगो निरवधिः
किमेवं त्वं पृच्छस्यनधिगतरामायण इव।। 30 ।।

सरलार्थ-

महारानी सीता के बिना रामचन्द्र को कौन सा पदार्थ दुःखजनक नहीं है। प्रिया के नाश होने पर सारा जगत् ही जंगल बन जाता है। इतना अधिक वह प्रेम और अवधिरहित यह वियोग। अविदित रामायण वाले पुरुष के समान तुम इस प्रकार क्यों पूछते हो? इस पद्य में पूर्वार्द्ध में वर्णित विशेषाक्ति का उत्तरार्द्ध में वर्णित सामान्य के साथ समर्थन होने से अर्थान्तरन्यास अलंकार है।

प्रकृत्यैव प्रिया सीता रामस्यासीन्महात्मनः।
प्रियभावः स तु तया स्वगुर्णरेव वर्धितः।। 31 ।।

सरलार्थ-

स्वभाव से ही सीता महात्मा राम की प्यारी थी। वह प्रेम उस (सीता) से अपने गुणों द्वारा ही बढ़ाया गया।

तथैव रामः सीतायाः प्राणेभ्योऽपि प्रियोऽभवत्।
हृदयं त्वेव जानाति प्रीतियोगं परस्परम्।। 32 ।।

सरलार्थ-

उसी प्रकार राम सीता को प्राणों से भी अधिक प्यारे थे। हृदय ही परस्पर के प्रेम संबन्ध को जानता है।

क्व तावानानन्दो निरतिशयविड्डम्भबहुलः
क्व वाऽन्योन्यप्रेम क्व च नु गहनाः कौतुकरसाः।
सुखे वा दुःखे वा क्व नु खलु तदैक्यं हृदययोस्त्थाप्येष
प्राणः स्फुरति न तु पापो विरमति।। 33 ।।

सरलार्थ-

अत्यधिक विश्वास से बढ़ा हुआ उतना आनन्द कहाँ? अथवा परस्पर का वह प्रेम कहाँ? अगाध क्रीडा का अनुराग कहाँ? सुख में अथवा दुःख में दोनों हृदयों की वह एकता कहाँ? तब भी यह पापी प्राण चल रहा है परन्तु रुकता नहीं है।

प्रियागुणसहड्डाणां क्रमोन्मीलनतत्परः।
य एव दुःसहः कालस्तमेष स्मारिता वयम्।। 34 ।।

सरलार्थ-

प्रिया के हजारों गुणों के क्रम से प्रकाशन में तत्पर जो समय ही दुःसह है, हमको उसी की याद आ रही है।

तदाकिंचितिंकचित्कृतपदमहोभिः कतिपयै
स्तदेतद्विस्तारि स्तनमुकुलमासीन्मृगदृशः।
वयःस्नेहाकूतव्यतिकरघनो यत्र मदनः
प्रगल्भव्यापारः स्फुरति हृदि मुग्धश्च वपुषि।। 35 ।।

सरलार्थ-

उस समय धीरे-धीरे स्थान लेने वाला मृगलोचना सीता के कलियों जैसे स्तन कुछ ही दिनों में थोड़े से विस्तार वाले हो गए थे, जिस समय यौवन, अनुराग तथा अभिलाष के एकत्र समावेश से गाढ़ मन्मथ मन में प्रौढ़ चेष्टाओं वाला होकर और शरीर में मृदु होकर प्रकट होता है।

त्वदर्थमिव विन्यस्तः शिलापट्टोऽयमायतः।
यस्यायमभितः पुष्पैः प्रवृष्ट इव केसरः।। 36 ।।

सरलार्थ-

यह सामने चौकोर शिलाखण्ड मानों तुम्हारे लिए ही स्थापित है, जिसके चारों ओर बकुल वृक्ष ने पुष्पों की मानों वर्षा की है। इस पद्य में सम्भावना व्यक्त होने से उत्प्रेक्षा अलंकार है।

श्रमाम्बुशिशिरीभवत् प्रसृतमन्दमन्दाकिनी
मरुत्तरलितालकाकुलललाटचन्द्रद्युति।
अकुङ्कुमकनङ्गितोज्ज्वलकपोलमुत्प्रेक्ष्यते
निराभरणसुन्दरश्रवणपाशमुग्धं मुखम्।। 37 ।।

सरलार्थ-

थकावट से उत्पन्न पसीने से शीतल होता हुआ, मन्दाकिनी के चलते हुए मृदु पवन से चंचल बने हुए अलकों से आच्छादित है चन्द्रसदृश भाल की कान्ति जिसकी ऐसा, कुंकुम से रिंन्जत न होने पर भी दीप्तिमान हैं कपोल जिसके ऐसा आभूषणरहित होने पर भी सुन्दर कर्णपाशों से मनोहर मुख प्रत्यक्ष दीखता हुआ सा प्रतीत हो रहा है। इस पद्य में उत्प्रेक्षा अलंकार है।

चिरंध्यात्वा ध्यात्वा निहित इव निर्माय पुरतः
प्रवासे चाश्वासं न खलु न करोति प्रियजनः।
जगज्जीर्णारण्यं भवति च विकल्पव्युपरमे
कुकूलानां राशौ तदनु हृदयं पच्यत इव।। 38 ।।

सरलार्थ-

प्रियजन के प्रवास में बहुत समय तक बारम्बार चिन्ता करके कल्पना से रचना कर सामने स्थापित किए गए की तरह होकर प्रिय जन सान्त्वना नहीं करता है यह बात नहीं है अर्थात् सान्त्वना करता ही है। परन्तु पत्नी के लोकान्तरित होने पर लोक वृक्षादिरहित पुराने वन के सदृश हो जाता है, उसके अनन्तर हृदय तुषानल की राशि में जैसे स्वयं दग्ध हो जाता है।

वसिष्ठो वाल्मीकिर्दशरथमहिष्योऽथ जनकः सहैवारुन्धत्या शिशुकलहमाकर्ण्य सभयाः।
जराग्रस्तैर्गात्रैरथ खलु सुदूराश्रमतया चिरेणागच्छन्ति त्वरितमनसो विश्लथजटाः।। 39 ।।

सरलार्थ-

अरुन्धती के साथ वसिष्ठ, वाल्मीकि, दशरथ की महारानियाँ और जनक भी बालकों के युद्ध को सुनकर भय से युक्त होते हुए और तब शीघ्रतायुक्त मनवाले होने पर भी आश्रम के दूर होने के कारण थकावट से मन्द बने हुए , बुढ़ापे से व्याप्त अंगों से देर में आ रहे हैं। इस पद्य में देरी से आने का कारण उनकी वृद्धावस्था है इसलिए काव्यलिङ्ग अलंकार है।

सम्बन्धस्पृहणीयताप्रमुदितैर्ज्येष्ठैर्वसिष्ठादिभिर्दृष्ट्
पत्यविवाहमङ्गलविधौतत्तातयोः सङ्गमम्।
पश्यन्नीदृशमीदृशःपितृसखं वृत्ते महावैशसे दीर्ये किं

न सहड्डधाऽहमथवा रामेण किं दुष्करम्।। 40 ।।

सरलार्थ-

सम्बन्ध की श्लाघ्यता से प्रसन्न हुए वसिष्ठादियों से सेवित जो सन्तानों के विवाह का मङ्गलोत्सव था, उसमें दोनों पिताओं का वह सम्मेलन देखकर, मैं क्यों नहीं सहड्डों प्रकार से विदीर्ण हो जाता अथवा राम से क्या दुःसाध्य है।

अनुभावमात्रसमवस्थितश्रियं सहसैव वीक्ष्य रघुनाथमीदृशम्।

प्रथमप्रबुद्धजनकप्रबोधिता विधुराः प्रमोहमुपयान्ति मातरः।। 41 ।।

सरलार्थ-

केवल अनुभाव में ही विद्यमान है कान्ति जिनकी ऐसे इस प्रकार के रघुपति को अकस्मात् ही देखकर, प्रथम मूर्च्छित हुए जनक को समाश्वस्त करके विकल माताएँ मूर्च्छा को प्राप्त हो रही हैं।

जनकानां रघूणां च यत्कृत्स्नं गोत्रमङ्गलम्।

तत्रप्यकरुणे पापे वृथा वः करुणा मयि।। 42 ।।

सरलार्थ-

जो सीता जनकवंशियों तथा रघुवंशियों के कुलों का समग्र मंगल थी, उसमें भी निर्दय तथा पापी मुझ पर आप लोगों की दया बेकार है।

स्वयं आकलन कीजिये-

अभ्यास प्रश्न 2

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये-

1. षष्ठ अङ्क का नाम ---- है।
2. षष्ठ अङ्क का विष्कम्भक ---- के संवाद से होता है।
3. ब्रह्मादयो ब्रह्महिताय तप्त्वा ----- शरदस्तपांसिः।
4. प्रियनाशे कृत्स्नं किल ---- हि भवति।
5. भवभूति ने सुख और दुःख में हृदय की एकता को ---- की विशेषता कहा है।

9.6 सारांश

इस इकाई में षष्ठम अङ्क श्रीराम, लव और कुश में सीता की आकृति की समता पाकर हर्ष तथा विषाद का अनुभव करते हैं। इस अङ्क में लव तथा चन्द्रकेतु के बीच दिव्यास्त्रों से युद्ध की सूचना मिलने पर श्रीराम युद्धक्षेत्र में प्रवेश करते हैं। जहाँ पर लव और कुश के साथ श्रीराम का परिचय होता है। जृम्भाकस्त्रों का प्रयोग होने पर श्रीराम

अचम्भित हो जाते हैं। और वह होनो कुमारों की आकृति से सीतापुत्र होने का अनुमान लगाते हैं। यही इस इकाई का सारांश है।

9.7 कठिन शब्दावली

विकर्तन= सूर्य कलह	प्रचण्ड=अत्यन्त क्रुद्ध
अटनी= धनुष का अग्रभाग	भुवनभीमम्=जगत के लिए भयानक
तडित= विद्युत	कड़ार= पिंगल
शिखी= अग्नि	लेलिहान= अत्यधिक ग्रसती हुई
कन्दर= गुहा	भूतजातं=प्राणिसमूह
शकल=खण्ड	प्रियदर्शन= सौम्यमूर्ति

9.8 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न -1 1. मेघ से 2. महापुरुष 3. हिमखण्ड 4. विद्याधर और विद्याधरी 5. चंद्रकेतु

अभ्यास प्रश्न -2 1. कुमारप्रत्यभिज्ञान 2. विद्याधर और विद्याधरी 3. पर:सहस्त्रा 4. जगदरण्यं 5. दामपत्य सुख

9.9 सहायक ग्रन्थ

1. उत्तररामचरितम्, महाकवि भवभूति, चौखम्बा संस्कृत सीरीज वाराणसी।
2. उत्तररामचरितम्, महाकवि भवभूति, व्याख्याकार आनन्दस्वरूप, सम्पादक: जनार्दनशास्त्री पाण्डेय, मोतीलाल बनारसीदास दिल्ली, वाराणसी।

9.10 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. 'उत्तररामचरित के षष्ठम् अङ्क की घटना पर प्रकाश डालिए।
2. निम्नलिखित पद्यों का सप्रसंग सरलार्थ कीजिये-

   षष्ठ अङ्क - 1, 12, 14, 18, 30, 33, 38
3. निम्नलिखित सूक्तियों की व्याख्या कीजिये-

   स्तनयित्नोरिवामन्ददुन्दुभेर्दुन्दुभायिताम। 6/2

   अहो प्रासादिकं रूपमनुभावश्च पावन:।6 /20

   प्रियागुणसहस्त्राणां क्रमोन्मीलनत्तपर:।6/34

अध्याय-दशम

इकाई-10

उत्तररामचरित : सप्तम अङ्क

संरचना

10.1 प्रस्तावना

10.2 उद्देश्य

10.3 उत्तररामचरित के सप्तम अङ्क के 1-10 पद्यों का अर्थ

- स्वयं आकलन अभ्यास प्रश्न - 1

10.4 उत्तररामचरित के सप्तम अङ्क के 11-20 पद्यों का अर्थ

- स्वयं आकलन अभ्यास प्रश्न - 2

10.5 सारांश

10.6 कठिन शब्दावली

10.7 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

10.8 सहायक ग्रन्थ

10.9 अभ्यास के लिए प्रश्न

10.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों, इस इकाई में उत्तररामचरित के अंतिम सप्तम अङ्क के प्रद्यों का अध्ययन करेंगे। सप्तम अङ्क का नाम गर्भांक है, जिसमें विष्कम्भक का अभाव है। इस अङ्क में राम, सीता, कुश और लव का सुखद समागम करवाया गया है। अन्त में भरतवाक्य से नाटक की समाप्ति कर इस अङ्क में प्रयुक्त पद्यों का वर्णन इस अध्याय में किया जायेगा।

10.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जानने में सक्षम होंगे ।

- सप्तम अङ्क की विषयवस्तु में प्रयुक्त पद्यों का अर्थ।
- इस अङ्क में प्रयुक्त पद्यों के अलंकार।

10.3 उत्तररामचरित के सप्तम अङ्क के 1-10 पद्यों का अर्थ

सप्तम अङ्क –

इस अङ्क में विष्कम्भकका अभाव है। परन्तु अङ्कके आरम्भमें ही लक्ष्मण वाल्मीकि की कृतिको उनके आश्रम के समीप गङ्गा तट पर निर्मित रङ्गस्थान में अप्सराओं द्वारा किये जाने वाले अभिनय की सूचना देते हैं। इस अभिनय को देखने के

लिये वाल्मीकि ने राम तथा उनकी सारी प्रजाको निमन्त्रित किया है, और अपने तपःप्रभाव से देवादि सहित सभी चराचरसमुदाय को भी वहाँ उपस्थित कराया है। इस गर्भनाटक के अभिनय का उद्देश्य मुख्य नाटक के अन्त में राम, सीता, कुश तथा लव का सुखद समागम कराना है। गर्भनाटक में सीतानिर्वासन से लेकर कुश तथा लव के जन्म समय तक की कथा का अभिनय कराया जाता है। गङ्गा स्तन्य त्याग के अनन्तर कुश तथा लव को स्वयं वाल्मीकि के पास ले जाकर उन्हें वाल्मीकि को अर्पित कर देने का वचन देती हैं और तब सीताद्वारा पृथ्वी से अपने विलय के प्रार्थना किये जाने पर पृथ्वी उसे उन शिशुओं की स्तन्यत्याग पर्यन्त देखभाल करने का आदेश देती हैं। अन्त में गङ्गा, पृथ्वी तथा सीता तीनों रङ्गशाला से चली जाती हैं। और गर्भनाटक का अन्त हो जाता है। राम शिशुओं के स्तन्यत्याग के अनन्तर सीता के विलय का अनुमानकर मूर्छित हो जाते हैं। तब मुख्य नाटक में गङ्गा तथा पृथ्वी सहित सीता जलसे निकलती हैं, और वह (सीता) अपने हाथ के शीतल स्पर्श से राम की मूर्छा को दूर करती है । अरुन्धती सीता के ग्रहणका प्रजा के सामने प्रस्ताव उपस्थित करती है और सीता, राम, कुश, तथा लवका समागम होता है। अन्त में भरत वाक्य से ही नाटक की समाप्ति होती है।

राज्याश्रमनिवासोऽपि प्राप्तकष्टमुनिव्रतः।
वाल्मीकिगौरवादार्य इत एवाभिवर्तते।। 1 ।।

सरलार्थ-

राज्यरूप आश्रम में निवास करते हुए भी दुःखरूप मुनिव्रत को प्राप्त किये हुए आर्य (रामचन्द्र) वाल्मीकि ऋषि के गौरव से इसी ओर आ रहे हैं।

विश्वंभरात्मजा देवी राज्ञा त्यक्ता महावने।
प्राप्तप्रसवमात्मानं गङ्गादेव्यां विमुञ्चति।। 2 ।।

सरलार्थ-

पृथ्वी की पुत्री महारानी सीता महाराज राम से महावन में परित्यक्त होती हुई प्रसववेदना के उपस्थित होने पर अपने शरीर को गंगा के प्रवाह में डाल देती हैं।

समाश्वसिहि कल्याणि दिष्ट्या वैदेहि वर्धसे।
अन्तर्जले प्रसूताऽसि रघुवंशधरौ सुतौ।। 3 ।।

सरलार्थ-

हे कल्याणि सीते! तुम धैर्य धारण करो, हर्ष की बात है कि तुम वृद्धि को प्राप्त हुई हो। तुमने जल के भीतर रघुकुल को धारण करने वाले दो पुत्रें को जन्म दिया है।

सोढशिचरं राक्षसमध्यवासस्त्यागो द्वितीयस्तु सुदु:सहोऽस्या:।
को नाम पाकाभिमुखस्य जन्तोर्द्वाराणि दैवस्य पिधातुमीष्टे ।। 4 ।।

सरलार्थ-

इसका राक्षसों के बीच में रहना बहुत समय तक सहन किया गया, परन्तु दूसरा त्याग तो अत्यन्त ही दु:सह है। प्राणी के फलोन्मुख भाग्य के प्रवेश मार्गों को ढकने में भला कौन समर्थ है।

न प्रमाणीकृतः पाणिर्बाल्ये बालेन पीडितः।

नाहं न जनको नाग्निर्न तु वृत्तिर्न संततिः।। 5 ।।

सरलार्थ-

बालक रामभद्र ने बाल्यावस्था में किये गये पाणिग्रहण की भी अपेक्षा नहीं की तथा न मेरी, न जनक की, न अग्नि की, न सीता के पातिव्रत्य की और न सन्तान की ही अपेक्षा की।

घोरं लोके विततमयशो या च वह्नौ विशुद्धि

र्लघङ्काद्वीपे कथमिव जनस्तामिह श्रद्दधातु।

इक्ष्वाकूणां कुलधनमिदं यत्समाराधनीयः

कृत्स्नो लोकस्तदिह विषमे किं स वत्सः करोतु।। 6।।

सरलार्थ-

लोक में घोर अपयश फैल गया और जो लघङ्का द्वीप में अग्नि शुद्धि हुई, उस पर यहाँ लोग कैसे विश्वास करें। इक्ष्वाकुवंशीयों का यह कुलक्रमागत धन है कि सम्पूर्ण प्रजाएँ परितोषणीय हैं। तब ऐसे संकट में वह वत्स क्या करता?

दह्यमानेन मनसा दैवाद्वत्सां विहाय सः।

लोकोत्तरेण सत्त्वेन प्रजापुण्यैश्च जीवति।। 7 ।।

सरलार्थ-

वह रामभद्र भाग्य के कारण सन्तापयुक्त चित्त से सीता का परित्याग करके अलौकिक धैर्य से और प्रजाओं के पुण्यों से भी जी रहे हैं।

जगन्मङ्गलमात्मानं कथं त्वमवमन्यसे।

आवयोरपि यत्सङ्गा त्पवित्रत्वं प्रकृष्यते।। 8 ।।

सरलार्थ-

जगत् के मङ्गलस्वरूप अपने आपको तुम क्यों तिरस्कृत करती हो, जिसके सम्पर्क से हमारा भी पावनत्व उत्कृष्टता को प्राप्त होता है।

कृशाश्वः कौशिको राम इति येषां गुरुक्रमः।

प्रादुर्भवन्ति तान्येव शस्त्रणि सह जृम्भकैः।। 9 ।।

सरलार्थ-

कृशाश्व, विश्वामित्र और राम, ऐसा जिन शस्त्रें का क्रम है, वे ही शस्त्र जृम्भक शस्त्रें के साथ प्रकट हो रहे हैं।अर्णव, छिन्द और नवसाहसांक से किन राजाओं और किस समुद्र का उल्लेख है, • मतभेद है।' इससे इतना अवश्य सिद्ध होता है कि श्रीहर्ष जयचन्द के दरबार में जाने से पूर्व कई राजाओं के आश्रित कवि रह चुके थे। संभवत वे अपनी दुरभिमानी प्रकृति के कारण किसी एक राजा के आश्रय में अधिक समय तक नहीं रह सके। कश्मीर, काशी, गौडोर्वीश और अर्णव के उल्लेख से स्पष्ट है कि उन्होंने कश्मीर से बंगाल की खाड़ी तक का सारा प्रदेश घूमा हुआ था।

देवि सीते नमस्तेगतिर्नः पुत्रकौ हि ते।
आलेख्यदर्शनादेव ययोर्दाता रघूद्वहः।। 10 ।।

सरलार्थ-

देवी सीते।तुम्हें नमस्कार हो, तुम्हारे दोनों पुत्र प्राप्य हैं, जैसा कि चित्रदर्शन में महाराज रघुनन्दन ने कहा था।

स्वयं आकलन कीजिए –

अभ्यास प्रश्न 1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए –

1. इस अङ्क के आरम्भ में पृथ्वी पुत्री किसे कहा गया है ?
2. सीता ने रघुकुल के पुत्रों को कहा जन्म दिया था?
3. रघुवंश के पुरोहित कौन थे?
4. सीता राज्य से निष्कासित होने के पश्चात किसके आश्रम में निवास करती है?
5. उत्तररामचरित का अन्त किस प्रकार का था?

10.4 उत्तररामचरित के सप्तम अङ्क के 11-20 पद्यों का अर्थ

नमो वः परमाश्रेभ्यो धन्याः स्मो वः परिग्रहात्।
काले ध्यातैरुपस्थेयं वत्सयोर्भद्रमस्तु वः।। 11 ।।

सरलार्थ-

श्रेष्ठ अस्त्र आप लोगों को नमस्कार है, आप लोगों के स्वीकार से हम लोग धन्य हो गए हैं। युद्ध आदि अवसर पर ध्यान किये जाने पर आप लोगों को हमारे दो वत्सों के पास आना चाहिए।

क्षुभिताः कामपि दशां कुर्वन्ति मम संप्रति।
विस्मयानन्दसंदर्भजर्जराः करुणोर्मयः।। 12 ।।

सरलार्थ-

इस समय क्षोभयुक्त आश्चर्य और हर्ष के संयोग से विशीर्ण शोक की तरघे मेरी अनिर्वचनीय अवस्था को उत्पन्न कर रही है।

एषा वसिष्ठगुप्तानां रघूणां वंशनन्दिनी।

कष्टं सीतापि सुप्तयोः संस्कर्तारं न विन्दति।। 13 ।।

सरलार्थ-

दुःख है, वसिष्ठ से रक्षित रघुवंशियों के कुल को आनन्द देने वाली सीता पुत्रें के संस्कार कराने वाले को नहीं पा रही है।

यथा वसिष्ठाङ्गिरसावृषिः प्राचेतसस्तथा।

रघूणां जनकानां च वंशयोरुभयोर्गुरुः।। 14 ।।

सरलार्थ-

रघु और जनक इन दोनों वंशों में जिस तरह वसिष्ठ और शतानन्द गुरु हैं, उसी तरह वाल्मीकि ऋषि भी गुरु हैं।

एतौ हि जन्मसिद्धास्त्रै प्राप्तप्राचेतसावुभौ।

आर्यतुल्याकृती वीरौ वयसा द्वादशाब्दकौ।। 15 ।।

सरलार्थ-

क्योंकि ये दोनों वीर हैं, इनको जृम्भकास्त्र जन्मसिद्ध है, दोनों ने वाल्मीकि ट्टषि से संस्कार लाभ किया है, ये दोनों आपके सदृश आकार वाले हैं और दोनों ही वय से बारह वर्ष के हैं।

मन्मथादिव क्षुभ्यति गाङ्गमम्भो व्याप्तं च देवर्षिभिरन्तरिक्षम्।

आश्चर्यमार्या सह देवताभ्यां गंङ्गा महीभ्यां सलिला दुदेति।। 16 ।।

सरलार्थ-

गंगा का जल मथन से जैसे आलोडित हो रहा है और आकाश देवों और ट्टषियों से भर गया है। आश्चर्य है, आर्या (सीता) गंगा तथा पृथ्वी देवताओं के साथ जल से निकल रही हैं।

अरुन्धति जगद्वन्द्ये गंगापृथ्व्यौ जुषस्व नौ।

अपितेयं तवावाभ्यां सीता पुण्यव्रता वधूः।। 17 ।।

सरलार्थ-

हे जगत् की वन्दनीया अरुन्धती, हम दोनों गंगा और पृथ्वी को प्रसन्न कीजिये। यह पवित्र आचरण करने वाली वधू सीता हमसे आपको अर्पित की जाती है।

त्वरस्व वत्से वैदेहि मुञ्चशालीनशीलताम्।

एहि जीवय मे वत्सं प्रियस्पर्शेन पाणिना।। 18 ।।

सरलार्थ-

बेटी जानकी, जल्दी करो, लज्जाशीलता को छोड़ो। आओ, मेरे बच्चे को सुखकारक स्पर्शवाले हाथ से जिलाओ।

नियोजय यथाधर्मं प्रियां त्वं धर्मचारिणीम्।

हिरण्मयाः प्रतिकृतेः पुण्यं प्रकृतिमध्वरे।। 19 ।।

सरलार्थ-

आप स्वर्णमयी प्रतिमा की पवित्र मूलभूत प्रिया को धर्म के अनुसार यज्ञ में सहधर्मिणी नियुक्त करें।

पाप्मभ्यश्च पुनाति वर्धयति च श्रेयांसि सेयं

कथा मघल्या च मनोहरा च जगतो मातेव गघेव च।

तामेतां परिभावयन्त्वभिनयैर्विन्यस्तरूपां बुधाः

शब्दब्रह्मविदः कवेः परिणतां प्राज्ञस्य वाणीमिमाम।। 20 ।।

सरलार्थ-

माता के समान तथा गंगा के समान जगत् की मंगलकारिणी तथा रमणीया यह प्रसिद्ध कथा पापों से शुद्ध करती है और कल्याणों का बढ़ाती है। पण्डित लोग विद्वान् शब्दब्रह्म के ज्ञाता कवि वाल्मीकि की इस प्रसिद्ध रामायण कथा का, अभिनयों से विशेषरूप से रचित स्वरूप वाली, शब्दब्रह्म के ज्ञाता विद्वान् कवि भवभूति की उत्तररामचरित नाटक के रूप में परिणत इस वाणी (प्रबन्ध) के रूप में पर्यालोचन करे। इस पद्य में उपमा अलंकार है।

स्वयं आकलन कीजिये-

अभ्यास प्रश्न 2

बहुविकल्पीय प्रश्न-

1. उत्तररामचरित के रचयिता का नाम है।

(क) भास (ख) भारवि (ग) भवभूति (घ) माघ

2. उत्तररामचरित का अन्त है।

(क) दुःखान्त (ख) सुखान्त (ग) विश्रान्त (घ) तद्धितान्त

3. नाटक में राष्ट्र की समृद्धि के लिए अन्त में प्रयुक्त होने वाले पद्य को कहते हैं-

(क) मंगलाचरण (ख) प्रस्तावना (ग) नेपथ्य (घ) भरतवाक्य

4. उत्तररामचरित में करुण रस का सबसे अधिक प्रयोग किस अङ्क में मिलता है?

(क) द्वितीय (ख) तृतीय (ग) प्रथम (घ) पञ्चम

10.5 सारांश

इस इकाई में सप्तम अङ्क अर्थात गर्भांक को वर्णित किया है। वीररस के प्रकर्ष के लिए इस अङ्क को सबसे उत्कृष्ट कहा है। इस अङ्क में गर्भाङ्क की कल्पना की गई है। यह योजना कवि की सर्वथा मौलिक देन है। इसके द्वारा ही रामायण की दुःखान्त कथा को सुखान्त बनाया गया है। इस नाटक की योजना का दूसरा उद्देश्य नाटकीय वातावरण के माध्यम से जनता के समक्ष सीता के चरित्र को पवित्र करना है। इस प्रकार कवि आरम्भ से ही कथानक को चामत्कारिक किन्तु स्वाभाविक मोड़ देता हुआ, उसकी गति में काव्य-जनित शैथिल्य और नाट्यजनित क्षिप्तता लाता हुआ आनन्द के वातावरण में समाप्त कर सुखान्त बना देता है तथा नाटक की शास्त्रीय मर्यादा की रक्षा करता है।

10.6 कठिन शब्दावली

भूतग्राम=प्राणियों का समूह	आत्मजा=पुत्री
अन्धतमसम्=गाढ़अंधकार	वाष्प=अश्रु
अव्याहत=अनिवारित	सत्त्व=धैर्य
लोक:=प्रजावर्ग	यत्सङगात=जिस के संपर्क से
आलेख्य=चित्र	अपनीयताम्=हटाया जाए

10.7 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न-1 1. सीता 2. गंगा में 3. वशिष्ठ
4. वाल्मीकि आश्रम 5. सुखांत

अभ्यास प्रश्न- 2 1. ग 2. ख 3. घ
4. ख

10.8 सहायक ग्रन्थ

1. उत्तररामचरितम्, महाकवि भवभूति, चौखम्बा संस्कृत सीरीज वाराणसी।
2. उत्तररामचरितम्, महाकवि भवभूति, व्याख्याकार आनन्दस्वरूप, सम्पादक: जनार्दनशास्त्री पाण्डेय, मोतीलाल बनारसीदास दिल्ली, वाराणसी।

10.9 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. 'एको रस: करुण एव' इस पंक्ति की सोदाहरण समीक्षा कीजिए।
2. निम्नलिखित पद्यों का सप्रसंग सरलार्थ कीजिये।
   सप्तम अङ्क - 5, 6, 17, 20
3. निम्नलिखित सूक्तियों की व्याख्या कीजिये-

न प्रमाणीकृत: पाणिबालर्ये बालेन पीड़ित:। 7/5

लोकोत्तरेण सत्वेन प्रजापुण्यैश्च जीवति। 7/7

रघूणां जनकानां च वंशयोरुभयोर्गुरु:। 7/14

एकादश अध्याय
इकाई-11
श्रीहर्ष का परिचय

संरचना

11.1 प्रस्तावना

11.2 उद्देश्य

11.3 श्रीहर्ष का परिचय

11.4 श्रीहर्ष: जीवन-वृत्त

- स्वयं आकलन अभ्यास प्रश्न - 1

11.5 श्रीहर्ष का व्यक्तित्व

11.6 कर्तृत्व

- स्वयं आकलन अभ्यास प्रश्न - 2

11.7 सारांश

11.8 कठिन शब्दावली

11.9 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

11.10 सहायक ग्रन्थ

11.11 अभ्यास के लिए प्रश्न

11.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों, जैसा कि आपको प्रथम इकाई में कहा गया था कि इस पत्र का नाम नाटक तथा काव्य है। नाटक के अन्तर्गत उत्तररामचरित को पाठ्यक्रम में रखा है तथा काव्य के अन्तर्गत श्रीहर्ष नैषधीयचरित को पाठ्यक्रम में निश्चित किया है। उत्तररामचरित का वर्णन तो इससे पूर्व की इकाईयों में किया जा चुका है। इस इकाई में श्रीहर्ष के विषय में अध्ययन किया जायेगा। इसमें श्रीहर्ष के जीवन परिचय, उनकी कृतियों को वर्णित किया जायेगा।

11.2 उद्देश्य

इस अध्याय के पचात् आप जानने में सक्षम होंगे-

- श्रीहर्ष का जीवन परिचय।
- श्रीहर्ष की कितनी कृतियाँ है।

11.3 श्रीहर्ष का परिचय

परीक्षा में नैषधीयचरित का प्रथम सर्ग निर्धारित है। बाईस सर्गो के बृहदाकार इस महाकाव्य के लेखक श्रीहर्ष हैं। माहकवि श्री हर्ष रचित नैषधीयचरित संस्कृत साहित्य के गौरवपूर्ण महाकाव्य पञ्चक में अन्यतम ही नही अपितु सर्वोतम है। कालिदास को, जो निर्विवाद रूप से श्रेष्ठता के अधिकारी है, छोड़कर श्री हर्ष की प्रतिष्ठा साधारणतया भारवि तथा माघ से कहीं अधिक उच्च स्तर पर मानी गई है। '**उदिते नैषधे काव्ये क्व माघ: क्व च भारवि:**'। श्री हर्ष विविध शास्त्र वेता विद्वान थे। वे कवि प्रतिभा के धनी है। इसीलिए जहाँ एक ओर नैषधीयचरित विद्वानों की परीक्षा का निकष माना गया है-**नैषध विद्वदौषधम्** वही दूसरी ओर अपनी कलात्मकता के लिए भी विख्यात है-**नैषधे पदलालित्यम्**।

ये उस वर्ग के कवि हैं जिन्होने वाल्मीकि, कालिदास आदि की स्वाभाविक शैली की अपेक्षा भारवि तथा माघ की अलंकृत अथवा कृत्रिम शैली के कवियों में अन्तिम मूर्धन्य कवि होने का गौरव श्रीहर्ष को ही प्राप्त हुआ है। इनके पश्चात् होने वाले कवियों में कोई उन तक नहीं पहुँच सका, उनसे आगे बढ़ने की तो बात ही क्या? संस्कृत की इस अर्वाचीन शैली का प्रारम्भ भारवि से होता है। उस युग में इस शैली को अत्यधिक आदर मिला था। इसका प्रमुख कारण उस युग की साहित्य या काव्य सम्बन्धी मान्यतायें ही थी। उस काव्य में कथय की अपेक्षा कथन-प्रकार पर अधिक बल मिलता है। काव्य के रसवाद पर अलंकारवाद तथा रीतिवाद का प्रभाव छाने लगा था। इसका परिणाम यह हुआ कि उस काल के तथा उसके परवर्ती युग के काव्यों में कथानक संकुचित होता चला गया तथा कथांश से सम्बद्ध एवं असम्बद्ध वर्णन विस्तृत होते चले गए। कालिदास के रघुवंश तथा भारवि के किरातार्जुनीय की तुलना करने पर यह बात सहज ही स्पष्ट हो जाती है।

रघुवंश का कथानक पर्याप्त विस्तृत है। उसमें रघुकुल की 21 पीढ़ियों का उल्लेख है जिनमें आठ पीढ़ियों के राजाओं का वर्णन पर्याप्त विस्तार से किया गया है। दूसरी ओर किरातार्जुनीय में अर्जुन द्वारा पाशुपत अस्त्र की प्राप्ति के लिए किए गए तप का तथा उस अवसर पर किरात वेशधारी शिव से हुए युद्ध का वर्ण मात्र है। इसी घटना पर एक बृहदाकार महाकाव्य लिख दिया गया है जिसमें वन, पर्वत, ट्टतु, सन्ध्या, प्रातः आदि के लम्बे-लम्बे वर्णनों से काव्य के कलेवर हो प्रवृद्ध किया गया है। युग की माँग के कारण माघ जैसा प्रतिभाशाली कवि भी इसी शैली की ओर आकृष्ट हुआ। भारवि को अपना आदर्श मानते हुए माघ ने भारवि को पछाड़ने का भगीरथ प्रयत्न किया है। कवि समाज में माघ को जो सम्मान मिला उसने श्रीहर्ष को प्रभावित किया तथा उन्होंने भी चिन्तामणिमन्त्र के जाप से प्राप्त अलौकिक प्रतिभा को काव्य की अलंकृत शैली बनाने में ही अपने जीवन की सार्थकता समझी। अलंकृत शैली के आलोचकों ने श्रीहर्ष के इस प्रयत्न को सर्वथा सार्थक तथा सफल माना है। इसीलिए उन्होंने श्रीहर्ष को भारवि तथा माघ से उत्कृष्ट कवि मानकर उसकी प्रशंसा की है।

तावद्भा भारवेर्भाति यावन्माघस्य नोदयः।
उदिते नैषधे काव्ये क्व माघः क्व च भारविः।।

अर्थात् भारवि की प्रतिभा तभी तक भाति है, जब तक माघ का उदय नहीं होता है। परन्तु नैषधकाव्य के उदित होने पर न तो भारवि ही कहीं ठहर पाते हैं न माघ ही। इस प्रकार की सूक्तियों से स्पष्ट है कि श्रीहर्ष की कविता संस्कृत की कृत्रिम अथवा अलंकृत शैली का उत्कृष्टतम रूप है। इस शैली के गुण-दोषों की समीक्षा आगे की जायेगी।

11.4 श्रीहर्ष : जीवन-वृत्त

संस्कृत के अधिकांश कवियों का जीवन-परिचय एवं स्थिति-काल अंधकार की गुहा में निहित है, परन्तु श्री हर्ष के काव्य में निर्दिष्ट कतिपय प्रमाणों के आधार पर उनके जीवन और स्थिति-काल के सम्बन्ध में प्रकाश पड़ता हैं ।

श्रीहर्ष: कविराजराजिमुकुटालङ्कारहीर: सुतम् ।
श्रीहीर: सुषवे जितेंद्रियचयं मामल्लदेवी च यम् । ।

श्रीहर्ष ने अपने विषय में संस्कृत के अन्य कवियों की अपेक्षा कुछ विस्तार से बताया है। नैषधीय चरित के सर्गान्त श्लोकों में श्रीहर्ष ने अपनी कृतियों के उल्लेख के साथ-साथ अपने माता-पिता तथा आश्रयदाता का भी उल्लेख किया है। उनके इन संकेतों का सार यह है। श्रीहर्ष के पिता का नाम श्रीहीर तथा माता का नाम मामल्लदेवी था। कुछ लोग मामल्लदेवी पद में- माम् अल्लदेवी, अर्थात् मुझको अल्लदेवी ने (जना) यह भेद करके उनकी माता का नाम अल्लदेवी मानते हैं। उन्हें कान्यकुब्जेश्वर जयचन्द्र की सभा में बड़ा सम्मान प्राप्त था। उन्होंने लिखा है- ताम्बूलद्वयमासनं च लभते यः कान्यकुब्जेश्वरात्, अर्थात् जिस मुझको कान्यकुब्जेश्वर से सम्मानार्थ पान का बीड़ा तथा राजसभा में आसन प्राप्त होता है। उन्होंने चिन्तामणि मन्त्र का जप किया था जिससे उन्हें अभूतपूर्व कवित्व-प्रतिभा प्राप्त हुई थी। उनकी इस मन्त्रसिद्धि को लेकर अनेक प्रकार की दन्तकथायें संस्कृत समाज में प्रचलित हैं जिनका उल्लेख श्रीहषर् सम्बन्धी सभी आलोचनाओं में किया गया है। इनकी प्रमाणकिता के विषय में इदमित्थं रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता।

कान्यकुब्ज के राजा जयचन्द्र का समय इतिहासकारों ने बारहवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध माना है। बनारस के ऊपर उनका राज्य 1163-1174 ई- माना जाता है। इसलिए नैषधकार का समय भी बारहवीं शताब्दी का अन्तिम चरण ही हो सकता है। यद्यपि इस सम्बन्ध में कुछ मतभेद भी थे परन्तु अब इन मतभेदों की समाप्ति हो गई है। श्रीहर्ष के विषय में कुछ किंवदन्तियाँ मिलती हैं। इनकी प्रामाणिकता विचारणीय है।

(क) श्रीहर्ष के पिता श्रीहीर को प्रसिद्ध नैयायिक आचार्य उदयन ने शास्त्रार्थ में हराया था। पिता के आदेशानुसार उन्होंने चिन्तामणि मन्त्र का जप करके त्रिपुरसुन्दरी का वरदान

प्राप्त किया, जिससे उन्हें अपराजेय पाण्डित्य मिला । उन्होंने उदयनाचार्य को हराकर पिता की कामना पूर्ण की । श्रीहर्ष के राज-दरबारमें उनके आने पर उदयनाचार्य ने 'गौगौरागतः' (बैल आया कहा। इसका थे। श्रीहर्ष के मंहतोड उत्तर श्रीहर्ष ने इस प्रकार दिया-

किं गवि गोत्वमुतागवि गोत्वं, यदि गवि गोत्वं नहि मयि गोत्वम् ।

श्रगवि च गोत्वं तव यदि साध्यं, भवतु भवत्यपि संप्रति गोत्वम् ॥

अर्थात् गोभिन्न को यदि तुम गो (बैल, मूर्ख) सिद्ध करना चाहते हो तो वह गोत्व (मूर्खत्व) तुममें भी है।

(ख) काव्यप्रकाशकार मम्मट श्रीहर्ष के मामा कहे जाते हैं। किंवदन्ती वेलतुयह ग्रन्थ पहले दिखाया होता तो मुझे दोष-प्रकरण के लिए अन्य ग्रन्थों को देखने जिन्हें उन्होंने की आवश्यकता नहीं होती। इसके लिए यह श्लोक मुख्य रूप से प्रस्तुत किया जाता है :- तव वर्त्मनि वर्ततां शिवम् ० (२-६२) १. तेरा मार्ग शुभ हो। २. तव वर्त्म निवर्ततां शिवम्, इस प्रकार पढ़ने में थोड़ा-सा अन्तर करने से अर्थ होगा तेरा मार्ग अशुभ हो । मम्मट और श्रीहर्ष के समय में लगभग २०० वर्ष का अन्तर है, अतः यह किवदन्ती रुचिकर होने पर भी अत्यन्त काल्पनिक ही है।

स्वयं आकलन कीजिए –

अभ्यास प्रश्न 1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए –

1. श्री हर्ष के पिता का नाम क्या था?
2. श्री हर्ष की माता कौन थी?
3. श्री हर्ष का समय-काल कबका माना गया है?
4. श्री हर्ष के आश्रयदाता कौन थे?
5. श्री हर्ष की कृति खण्डनखण्डखाद्य का सम्बन्ध किससे है?

11.5 श्रीहर्ष का व्यक्तित्व

श्रीहर्ष न केवल एक प्रतिभाशाली कवि ही थे अपितु उद्भट दार्शनिक भी थे। तर्क तथा वेदान्त का उन्होंने अच्छा मनन किया था। इसके लिए उनकी कृति खण्डन-खण्डखाद्य को प्रमाण के रूप में उपस्थित किया जा सकता है। जिसमें न्याय का खण्डन करके वेदान्त मत की प्रतिष्ठा की गई है। इसके अतिरिक्त नास्तिक दर्शनों का भी उन्होंने पर्यप्त मंथन किया था। नैषधीय चरित्र के सतरहवें सर्ग से इसकी पुष्टि हो जाती है। वेद, शास्त्र तथा संस्कृत भाषा के प्रति उनकी अगाध श्रद्धा थी। दम्यन्ती के स्वयंवर में उपस्थित

सभी राजा एक-दूसरे की भाषा को जानने के कारण संस्कृत का ही प्रयोग कर रहे थे। इसलिए वहाँ देवों तथा मानवों में कोई अन्तर ही नहीं रह गया था। श्रीहर्ष का यह कथन संस्कृत की महत्ता के प्रति उनकी भावना को सहज ही अभिव्यक्त कर देता है। उनका यह श्लोक निम्नलिखित है -

अन्योन्यभाषनवगोधभीतेः संस्कृत्रिमाधिर्व्यवहारवस्तु।
दिगभ्यः समेतेषु नृपेषु तत्र सौवर्गवगों नजनेरचिह्नि।।

दर्शन के अतिरिक्त श्रीहर्ष का व्याकरण का ज्ञान भी ठोस था। उन्होंने अपने काव्य में व्याकरण के अनेक पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग किया है। स्वौ जसादि विभक्ति, स्थानिवदादेश आदि इसके निदर्शन है। साथ ही उनके काव्य में अनेक प्रयोग ऐसे हैं जिन्हें श्रेष्ठ वैयाकरण ही कर सकता है।

इनके अतिरिक्त उनके काव्य में अनेक स्थल ऐसे हैं जिनसे उनके आयुर्वेद, ज्योतिष, राजनीति, संगीतशास्त्र आदि के ज्ञान का भी परिचय मिलता है। इतिहास-पुराण सम्बन्धी प्रसंगों से उनके पुराणज्ञ होने का प्रमाण मिलता है।श्रृंगार रस केरससिद्ध कवि होने के कारण कामशास्त्र से भी उनका पूर्ण परिचय था।

दार्शनिक ज्ञान की गम्भीरता उनके कवित्व की सरसता को नहीं दबा पाई थी, इसलिए उनके जीवन में हास्य का भी पर्याप्त पुट था। विदर्भराज के घर नल की बारात का जो उपहास (शिष्ट हास्य) कवि ने दिखाया है वह उनकी विनोद प्रियता का द्योतक है। धर्म, कर्म के विरुद्ध कवि के तर्कं में भी उनका हास्य बराबर झाँकने लगता है। श्रीहर्ष का प्रमुख रूप कवि का है। उनके कवित्व पर आगे विचार किया जायेगा।

11.6 कर्त्तृत्व

जैसा कि पहिले कहा जा चुका है कि श्रीहर्ष ने नैषधीयचरित के सर्गान्त में जो श्लोक दिये हैं उनसे उनकी कृतियों का पता चलता है। ये कृतियाँ निम्नलिखत है-

1- नैषधीय चरित 2- स्थैर्यविचारण-प्रकरण 3- विजय-प्रशस्ति

4- खंडन खण्डखाद्य 5- गोडोर्वीशकुलप्रशस्ति 6- अर्णव-वर्णन

7- छिन्द-प्रशस्ति 8- शिवशक्तिसिद्धि 9- ईश्वराभिसन्धि

10- नवसांहसांकचरितचम्पू

खण्डनखण्डखाद्य में 'ईश्वराभिसन्धि' ग्रन्थ का ५ बार उल्लेख है।इस प्रकार नैषधीयचरित को लेकर श्रीहर्ष की १०रचनाएँ ज्ञात होती हैं। राजशेखरने अपने 'प्रबन्धकोश' ग्रन्थ में श्रीहर्ष को सौ से अधिक ग्रन्थों का लेखक बताया है,परन्तु ग्रन्थों का नाम नहीं दिया है। श्रीहर्ष के ग्रन्थों में श्रीविजय, गौडोर्वीश,अर्णव, छिन्द और

नवसाहसांक से किन राजाओं और किस समुद्र का उल्लेख हैमतभेद है।' इससे इतना अवश्य सिद्ध होता है कि श्रीहर्ष जयचन्द के दरबार में जाने से पूर्व कई राजाओं के आश्रित कवि रह चुके थे। संभवत वे अपनी दुरभिमानी प्रकृति के कारण किसी एक राजा के आश्रय में अधिक समय तक नहीं रह सके। कश्मीर, काशी, गौडोर्वीश और अर्णव के उल्लेख से स्पष्ट है कि उन्होंने कश्मीर से बंगाल की खाड़ी तक का सारा प्रदेश घूमा हुआ था।

इनमें से अन्तिम कृति का उल्लेख नैषधीयचरित में न होकर खण्डन खण्डखाद्य में है। नैषधीयचरित तथा खण्डनखण्डखाद्य के अतिरिक्त इनकी अन्य कोई रचना अभी तक उपलब्ध नहीं हुई है। खण्डनखण्डखाद्य में नैयायिकों के सिद्धान्तों का खण्डन करके वेदान्त के सिद्धान्तों की स्थापना की गई। इसलिए अद्वैत वेदान्त में इस ग्रन्थ का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है।

स्वयं आकलन कीजिए –

अभ्यास प्रश्न 2

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए –

1. श्री हर्ष को किन-किन विषयों का ज्ञान प्राप्त था?
2. अद्वैत वेदान्त में किस ग्रंथ का महत्त्वपूर्ण स्थान है?
3. श्री हर्ष का प्रसिद्ध महाकाव्य ग्रन्थ कौन सा है?
4. शृंगार रस में सिद्धता के कारण कामशास्त्र का ज्ञाता किसे माना गया है?
5. श्री हर्ष की कितनी रचनाएं प्राप्त होती है?

11.7 सारांश

इस इकाई में आपने श्रीहर्ष के जीवन वृत्त और उनकी कृतियों का अध्ययन किया है। श्रीहर्ष कालिदासोत्तर काल के कलावादी कवियों में सर्वोच्च स्थान के अधिकारी है। उनका महाकाव्य दूरारूढ़ कल्पना, पाण्डित्य प्रदर्शन, आलंकारिक सौन्दर्य, रसपेशलता एवं अद्भुत अप्रस्तुत विधान का अपूर्व भाण्डागार है। उनका उद्देश्य सुकुमारमति पाठकों के लिए काव्य-रचना करना नहीं था। उनका दार्शनिक ज्ञान नितान्त प्रौढ़ था। वह मुख्यतः श्रृंगार रस के कवि हैं और उन्होंने तद्विषयक विविध भंगियों एवं स्वरूपों का अत्यन्त कुशलता के साथ वर्णन किया है।

11.8 कठिन शब्दावली

इदमित्थं = निश्चित।

दुरूह = कठिन।

अभ्रसुकामुक = ऐरावत।

11.9 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न -1 1. श्री हीर 2. मामल्ला देवी 3. 12 वी शताब्दी

4. विजय चंद्र और जय चंद्र 5. न्याय

अभ्यास प्रश्न -2 1. आयुर्वेद, ज्योतिष, राजनीति, सङ्गीतशास्त्र आदि

2. खण्डनखण्डखाद्य 3. नैषधीयचारितं

4. श्री हर्ष 5. दश

11.10 सहायक ग्रन्थ

1. नैषधचरितमहाकाव्यम् (प्रथम सर्ग) श्रीहर्ष, व्याख्याकार: डॉ- सुरेन्द्र देव शास्त्री, चौखम्बा संस्कृत सीरीज वाराणसी।
2. नैषधचरितमहाकाव्यम् (प्रथम सर्ग) श्रीहर्ष, व्याख्याकार: डॉ- देवनारायण मिश्र, साहित्य भण्डार सुभाष बाजार मेरठ।
3. संस्कृत साहित्य का इतिहास, बलदेव उपाध्याय, शारदा निकेतन वाराणसी।
4. संस्कृत साहित्य कोश, राजवंश सहाय हीरा, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

11.11 अभ्यास के लिए प्रश्न

1- श्रीहर्ष का समान्य परिचय देते हुए उनकी कृतियों पर प्रकाश डालिये।

2- श्रीहर्ष के काव्य-सौदर्य पर प्रकाश डालिये।

3- 'नैषधे पदलालित्यम्' इस सूक्ति की सोदाहरण युक्ति-युक्त समीक्षा कीजिये।

4- श्रीहर्ष के प्रकृति-चित्रण पर एक निबन्ध लिखिये।

द्वादश अध्याय

इकाई-12

नैषधीयचरित

संरचना

12.1 प्रस्तावना

12.2 उद्देश्य

12.3 नैषधीयचरित

12.4 नैषधीयचरित की पूर्णता का प्रश्न

12.5 नैषधीयचरित का मूल स्त्रोत

- स्वयं आकलन अभ्यास प्रश्न - 1

12.6 नैषधीयचरित का कवित्व : शैली

12.6.1 श्लेष का मोह

12.6.2 वक्रोक्ति का प्रभाव

12.6.3 अनुप्रास का अनावश्यक मोह

12.6.4 दीर्घ समास

12.6.5 पदलालित्य

12.6.6 नाद-प्रभाव

12.6.7 अलंकारों का प्रयोग

12.6.8 भावपक्ष

12.6.9 अन्य रस

12.6.10 करुण रस

- स्वयं आकलन अभ्यास प्रश्न - 2

12.7 सारांश

12.8 कठिन शब्दावली

12.9 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

12.10 सहायक ग्रन्थ

12.11 अभ्यास के लिए प्रश्न

12.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों, इस इकाई में श्रीहर्ष की रचना नैषधीयचरित का परिचय तथा उसकी पूर्णता के प्रश्न का निवारणकर उसके मूलस्रोत तथा नैषधीयचरित की कवित्व शैली का वर्णन किया जायेगा। इसके अन्तर्गत श्लेष, वक्रोक्ति, अनुप्रास आदि अलंकारों के द्वारा उनके पदलालित्य को चित्रित करने का प्रयास किया जायेगा। इस इकाई में नैषधीयचरित में वर्णित रसों का भी वर्णन किया जायेगा।

12.2 उद्देश्य

इस अध्याय के पचात् आप जानने में सक्षम होंगे-

- नैषधीयचरित में कितने सर्ग और पद्य हैं।
- नैषधीयचरित में वर्णित काव्यशैली को।
- नैषधीयचरित में प्रयुक्त रस।

12.3 नैषधीयचरित

यह 22 सर्गों का महाकाव्य है जिसमें निषध देश के राजा नल के दमयन्ती से विवाह की पुराण-प्रसिद्धि कथा को कुछ परिवर्तनों के साथ उपनिबद्ध किया गया है। इस महाकाव्य की श्लोक संख्या 2828 है। कुछ स्थानों पर यह संख्या 2830 है। इसका कथानक अत्यन्त ही संक्षिप्त है। अलंकृत शैली के काव्यों में कथानक का यह संकोच सभी जगह है। नैषधीयचरित में वर्णित मुख्य घटनायें निम्नलिखित हैं-

प्रथम सर्ग में राजा नल के प्रताप एवं सौन्दर्य का वर्णन है। राजा भीम की पुत्री दमयन्ती नल के यश-प्रताप का वर्णन सुनकर उसकी ओर आकृष्ट होती है और राजा नल भी उसके सौन्दर्य का वर्णन सुनकर उस पर अनुरक्त होता है। अपने मनोविकारों को छिपाने में असमर्थ होने पर वह विहार के लिए उपवन में जाता है जहाँ एक सुनहरी हँस के रूप पर मुग्ध होकर उसे पकड़ लेता है। परन्तु हँस की करुणपूर्ण उक्तियों को सुनकर वह उसे छोड़ देता है।

दूसरे सर्ग में हँस राजा के समक्ष दमयन्ती के सौन्दर्य का वर्णन करता है और वह नल का सन्देश लेकर कुण्डिनपुर दमयन्ती के पास जाता है। तृतीय सर्ग में हँस एकान्त मे नल का सन्देश दमयन्ती को सुनाता है और वह भी नल के प्रति अपनी अनुरक्ति प्रकट करती है। चतुर्थ सर्ग में दमयन्ती की पूर्वरागजन्य वियोगावस्था का चित्रण तथा उसकी सखियों द्वारा भीम से दमयन्ती के स्वयंवर के सम्बन्ध में वार्त्तालाप का वर्णन है। पंचम् सर्ग में नारद द्वारा इन्द्र को दमयन्ती के स्वयंवर की सूचना प्राप्त होती है और वह उससे विवाह करना चाहते हैं। वरुण, यम एवं अग्नि के साथ इन्द्र राजा नल से दमयन्ती के पास संदेश भेजने के लिए दूतत्व करने की प्रार्थना करते हैं। नल को अदृश्य शक्ति प्राप्त हो जाती है और वह अनिच्छुक होते हुए भी इस कार्य को स्वीकार कर लेता है। षष्ठ सर्ग में नल का

अदृश्य रूप से दमयन्ती के पास जाने का वर्णन है। वह वहाँ इन्द्रादि देवताओं द्वारा प्रेषित दूतियों की बाते सुनता है। दमयन्ती उन्हें स्पष्ट रूप से कह देती है कि वह नल का वरण कर चुकी है।

सप्तम सर्ग में दमयन्ती के रूप का वर्णन है जो संस्कृत साहित्य में नख-शिख वर्णन के नाम से पुकारा जाता है। आठवें सर्ग में नल अपने को प्रकट कर देता है। वह इन्द्र, यम, वरुण आदि का सन्देश कहता है। नवम सर्ग में नल देवताओं में से किसी एक को दमयन्ती को वरण करने के लिए कहता है, पर वह राजी नहीं होती है। वह उसे भाग्य का खेल समझकर दृढ़तापूर्वक देवताओं से भयभीत न होने की बात कहता है। दमयन्ती नल से स्वयंवर में आने की प्रार्थना करती है और वह उसकी बात मान लेता है। दशम सर्ग में स्वयंवर का उपक्रम वर्णित है। ग्यारहवें एवं बारहवें सर्ग में सरस्वती द्वारा स्वयंवर में आये हुए राजाओं का वर्णन किया गया है। तेरहवें सर्ग में सरस्वती नल सहित चार देवताओं का परिचय श्लेष में देती है। सभी श्लोकों का अर्थ नल तथा देवताओं पर घटित होता है। चौदहवें सर्ग में दमयन्ती वास्तविक नल का वरण करने के लिए देवताओं की स्तुति करती है जिससे देवगण प्रसन्न होकर सरस्वती के श्लेष को समझने की उसमें शक्ति देते हैं। भैमी वास्तविक नल का वरण कर उसके गले में मधूक पुष्प की माला डाल देती है।

पन्द्रहवें सर्ग में विवाह की तैयारी एवं पाणिग्रहण तथा सोलहवें सर्ग में नल का विवाह एवं उनका राजधानी लौटना वर्णित है। सत्रहवें सर्ग में देवताओं का विमान द्वारा प्रस्थान एवं मार्ग में कलि-सेना का आगमन वर्णित है। सेना में चार्वाक, बौद्ध आदि के द्वारा वेद का खण्डन और उनके अभिमत सिद्धान्तों का वर्णन है। कलि देवताओं द्वारा लन-दमयन्ती के परिणय की बात सुनकर नल को राजच्युत करने की प्रतिज्ञा करता है और नल की राजधानी में चला जाता है। वह उपवन में जाकर विभीतक वृक्ष का आश्रय लेता है और नल को पराजित करने के लिए अवसर की प्रतीक्षा में रहता है। अठारहवें सर्ग में नल-दमयन्ती का विहार तथा पारस्परिक अनुराग वर्णित है। उन्नीसवें सर्ग में प्रभात में वैतालिक द्वारा नल का प्रबोधन सूर्योदय एवं चन्द्रास्त का वर्णन है। बीसवें सर्ग में नल-दमयन्ती का परस्पर प्रेमालाप तथा इक्कीसवें सर्ग में नल द्वारा विष्णु, शिव, वामन, राम-कृष्ण प्रभृति देवताओं की प्रार्थना का वर्णन है। बाईसवें सर्ग में सन्ध्या एवं रात्रि का वर्णन, वैशेषिक के अनुसार अन्धकार का स्वरूप-चित्रण तथा चन्द्रोदय एवं दमयन्ती के सौन्दर्य का वर्णन कर ग्रन्थ की समाप्ति की गई है।

12.4 नैषधीयचरित की पूर्णता का प्रश्न

नल-दमयन्ती के विवाह के साथ ही काव्य की समाप्ति पर आलोचकों ने अनेक शंकायें की हैं। इन शंकाओं का के अग्रिम अंश में घटित होनी चाहिए। ये घटनायें

महाभारत में विवाह के पश्चात् ही घटित होती वर्णित की गई है। निश्चित रूप से श्रीहर्ष ने आगे भी यह काव्य लिखा होगा जो आज उपलब्ध नहीं है। उसी में घटनाओं का वर्णन होगा। कलि द्वारा नल का पराभव किए जाने का संकेत स्वयंवर के अवसर पर किया गया है। इसी प्रकार वस्त्र को फाड़कर नल के चले जाने की घटना का उल्लेख पाणिग्रहण के अवसर पर है। ये दोनों ही घटनायें बाईस सर्ग के बाद होनी चाहिए। सत्रहवें सर्ग में कलि के प्रकोप की बात भी कही है जो प्रस्तुत काव्य में नहीं है। इसलिए कुछ आलोचकों ने नैषध को सौ सर्गों का काव्य कहा है।

परन्तु नैषध की प्राप्त प्रतियों और टीकाओं के आधार पर तो यह सिद्ध होता है कि नैषध का वर्तमान रूप यही है। सभी टीकायें इतने ही अंश पर है। बाईसवें सर्ग के अन्त में ग्रन्थ-समाप्ति सूचक श्लोकों से भी यही सिद्ध होता है। हो सकता है कि प्रारम्भ में कवि ने बहुत बड़ा काव्य लिखने की योजना बनाई हो, परन्तु बाईस सर्गों के पश्चात् उसका विचार बदल गया हो या फिर किसी कारण से वह आगे ने लिख सका हो तो उसने वहीं ग्रन्थ समाप्त करने का निश्चय कर लिया हो। इसलिए आज तक केवल बाईस सर्गों का ही नैषधीयचरित उपलब्ध है तथा इसी को कवि की पूर्ण कृति माना जाता है।

12.5 नैषधीयचरित का मूल स्रोत

नैषधीयचरित का मूल स्रोत महाभारत, पुराण तथा कथासरित्सागर आदि में ढूँढा जा सकता है, परन्तु श्रीहर्ष का मुख्य उपजीव्य महाभारत ही है। महाभारत के कथानक में उन्होंने आवश्यकतानुसार परिवर्तन करके उसे अपने काव्य के उपयोगी बनाया है। नैषध के पाँच सर्ग तक की कथा का मुख्य आधार महाभारत है। परन्तु वहाँ पर भी कवि ने पात्रों के चरित्रें को अपने रंगों से रंगा है। महाभारत के हँस और नल नैषध के हँस और नल से पर्याप्त भिन्न है। महाभारत का नल निपट स्वार्थी की तरह हँस को तभी छोड़ता है जब हँस उसका दूत बनकर दमयन्ती के पास जाने के लिए तैयार हो जाता है। परन्तु नैषध का नल करुणावश हँस को छोड़ देता है। फिर हँस स्वयं उसके पास आकर उपकार का बदला देने के लिए उसका दौत्य करता है। इस प्रकार के अन्य भी अनेक परिवर्तन हैं। पञ्चम सर्ग के पश्चात् सभी वर्णन महाभारत से भिन्न है। भारत का यह कथानक अत्यन्त संक्षिप्त है जो केवल छः अध्यायों के 186 अनुष्टुप् श्लोकों में समाप्त हो जाता है जबकि नैषध की कथा बाईस सर्गों के 2828 श्लोकों में 21 प्रकार के छोटे-बड़े छन्दों में अत्यन्त ही अलंकृत तथा रासमयी शैली में प्रस्तुत की गई है।

स्वयं आकलन कीजिये-

अभ्यास प्रश्न 1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिये-

1. नैषधीयचरित की गणना किसमें होती है?

2. श्रीहर्ष का समय कौन सी शताब्दी सिद्ध होता है?
3. नैषधीयचरित महाकाव्य में कितने सर्ग हैं?
4. नैषधीयचरित का उपजीव्य काव्य कौन सा है?
5. नैषधीयचरित का कौन सा सर्ग पाठ्यक्रम में निर्धारित है?

12.6 नैषधीयचरित का कवित्व : शैली

इस अध्याय के प्रारम्भ में ही यह बात स्पष्ट कर दी गई है कि श्रीहर्ष अपेक्षाकृत नई पीढ़ी के कवि हैं जिनकी कविता अलंकृत होने के कारण कृत्रिमता से युक्त है तथा इसीलिए क्लिष्ट भी है। यह शैली स्वभावतः ही दुरूह है। इस पर भी यदि कोई व्यक्ति जान-बूझकर अपनी कविता को क्लिष्ट बना दे तो फिर इस प्रकार की कविता को पढ़ते समय पाठक के हृदय का आयाम (विकास) हो या न हो, बुद्धि का व्यायाम अवश्य हो जाता है। नैषधीयचरित की क्लिष्टता के अनेक कारण हैं। श्रीहर्ष ने स्वयं कहा है-

ग्रन्थग्रन्थिरिह क्वचित्क्वचिदपि न्यासि प्रयत्नान्मया
प्राज्ञमन्यामना हठेन पठिती मास्मिन् खलः खेलतु।
श्रद्धाराद्धगुरुश्लथीकृतदृढग्रन्थिः समासादयत्वेतत्काव्यर
सोर्मिमज्जनसुखं व्यासज्जनं सज्जनः।।

श्रीहर्ष कवि होने के साथ-साथ दार्शनिक भी है। इसीलिए अनेक स्थानों पर उनका दार्शनिक कवि होने पर हावी हो गया है। परिणाम यह हुआ कि ऐसे स्थलों पर उनका कविता में हृदय की ऊबचूझ कम बुद्धि की सूझबूझ अधिक दिखाई देती है। उनकी अनेक उपमाएँ तथा उत्प्रेक्षाएँ तब तक समझ में नहीं आती जब तक पाठक को श्लोक में वर्णित न्याय अथवा व्याकरण के परिभाषिक पदों का बोध न हो। तीसरे सर्ग का तेईसवाँ तथा दसवें सर्ग का 134 वाँ श्लोक इसी प्रकार के हैं।

12.6.1 श्लेष का मोह

श्लेष के कारण भी नैषधीयचरित में क्लिष्टता आ गई है। तेरहवें सर्ग का प×चनली वर्णन श्रीहर्ष की श्लेष विषयक प्रवृत्ति का प्रकृष्टतम निदर्शन है जहाँ पाठक को पदे-पदे कोश की सहायता लेनी पड़ती है।

12.6.2 वक्रोक्ति का प्रभाव

श्रीहर्ष किसी भी बात को साधारण रूप से कहना उचित नहीं समझते। तनुमध्या दमयन्ती उनके लिए 'ईशाणिमैश्वर्यविवर्तमध्या' या 'सदसत्संशयगोचरोदरी' है। कामदेव शम्बरारि हैं तथा वसन्त 'सखा रतीशस्य ऋतु' हैं, ऐरावत 'अभ्रसुकामुक' है। इस प्रकार के अप्रसिद्ध विशेषणों से श्रीहर्ष का काव्य भरा पड़ा है।

12.6.3 अनुप्रास का अनावश्यक मोह

अनुप्रास का अनावश्यक मोह के कारण भी श्रीहर्ष की कविता में क्लिष्टता आ गई है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि इससे कविता का नादसौन्दर्य बढ़ा है तथा उससे उसकी प्रभावोत्पादकता की क्षमता में वृद्धि हुई है। परन्तु इससे कविता की बोधगम्यता को भारी आघात पहुँचा है। कई स्थानों पर तो कवि ने मात्र अनुप्रास के लिए ही श्लोक में अनावश्यक शब्दों की भर्ती की है। प्रथम सर्ग के 74वें श्लोक में 'ततः क्षणात् क्षोणिपतिर्धुतीच्छया' में 'क्षणात्' का प्रयोग क्षोणिपति के साथ अनुप्रास के लिए किया गया है। क्योंकि यहाँ पर कवि को नल को विलास कानून में घुसाने की शीघ्रता नहीं है।

12.6.4 दीर्घ समास

यद्यपि श्रीहर्ष ने श्लेष के माध्यम से वैदर्भी शैली की बड़ी प्रशंसा की है जिसमें प्रायः असमस्त या अल्पसमासयुक्त पदों का प्रयोग होता है। परन्तु उन्होंने अपने काव्य में अनेक स्थानों पर दस से लेकर बारह शब्दों से बने समस्त पदों का प्रयोग किया गया है। गद्य में तो इस प्रकार के समास चलते भी हैं परन्तु पद्य में इस प्रकार के प्रयोग विरल ही हैं। इतने बड़े समासों के कारण भी नैषध का काव्य क्लिष्ट हो गया है। प्रथम सर्ग के दूसरे श्लोक की द्वितीय पंक्ति एक ही पद की है जिसमें दस शब्द हैं। ऐसे अनेक समास प्रथम सर्ग में विद्यमान हैं। श्रीहर्ष के काव्य के इन गुणों के कारण ही उनके काव्य को 'नैषध विद्वदौषधम्' जैसे विशेषणों से अलंकृत किया जाता है।

12.6.5 पदलालित्य

क्लिष्टता रूपी दोष न होने पर भी नैषध की शैली पदलालित्य से युक्त है। वास्तव में नैषध की रचना के बाद-

उपमा कालिदासस्य भारवेरर्थगौरवम्।
दण्डिनः पदलालित्यं माघे सन्ति त्रयो गुणा।।

इस सूक्ति के तृतीय चरण को नैषधे पदलालित्यं इस रूप में बदल दिया गया है। अनुप्रास की जो छटा नैषध में है वह अन्यत्र दुर्लभ है। इस काव्य का शायद ही कोई श्लोक ऐसा होगा जो पदलालित्य से रहित हो। अनुप्रास के सभी रूपों की बानगी श्रीहर्ष से सरलता से मिल जाती है।

लताऽवलालोस्य कलागुरुस्तरुप्रसूनगन्धोत्करपश्यतो हरः।
असेवतासु मधुगन्धवारिणि प्रणीतलीलाप्लवनो वनानिलः।।

जैसे अनेक श्लोक हैं जो श्रोता के कानों मे मधु घोल देते हैं। अनुप्रास के साथ-साथ यमक की छटा भी शब्दमाधुर्य की सृष्टि करने में सहायक सिद्ध होती है। श्रीहर्ष ने इसका पूरा लाभ उठाया है।

यशः पटं तद्धटचातुरीतुरी। (1-12) दारादराभ्यां दरकम्पिनी पपे। (184) इस प्रकार के स्वाभाविक यमक अनेक हैं।

12.6.6 नाद-प्रभाव

अनेक स्थानों पर पदलालित्य नाद-प्रभाव का कारण बन गया है। शब्द जिस भाव (अर्थ) को प्रकट करते हैं, यदि उसके साथ ही ध्वनियों का भी साम्य हो तो इसे नाद-प्रभाव कहा जाता है। निम्नलिखित श्लोक देखिये-

पतत्रिणा तद्रुचिरेण वंचित श्रियः प्रयान्त्या प्रविहाय पल्लवम्।
चलपदाम्भोरुहनूपुरोपमा चुकूज कूले कलहंसमंडली।।

इस श्लोक के अन्तिम चरण में हंसों के बोलने का वर्णन है जो चुकूज कूले कलहंस-मण्डली इन शब्दों से प्रतिपाद्य है। इन शब्दों की ध्वनि भी हँस की कूज जैसी ही है। अतः यहाँ नाद का प्रभाव कविता को चार चाँद लगा देता है।

12.6.7 अलंकारों का प्रयोग

श्रीहर्ष अलंकृत शैली के कवि हैं। अतः उनके काव्य में अलंकारों का प्रयोग अवश्यम्भावी है। ऊपर शब्दालंकारों का प्रयोग हो चुका है। यहाँ श्रीहर्ष के अर्थालंकारों पर कुछ लिखा जा रहा है।

अर्थान्तरन्यास तथा काव्यलिंग का प्रयोग भी श्रीहर्ष ने किया है परन्तु अपेक्षाकृत कम। दूर की कोड़ी लाने वाले कवि का सबसे प्रिय अलंकार उत्प्रेक्षा होता है जिसका प्रयोग श्रीहर्ष ने बहुत अधिक किया है। उत्प्रेक्षा के साथ अनेक स्थलों पर अपह्नुति का प्रयोग हुआ है। इन अलंकारों से संकर और संसृष्टि के अनेक उदाहरण हैं।

12.6.8 भावपक्ष

इससे पूर्व श्रीहर्ष के कलापक्ष पर विचार किया गया है। अब उसके भावपक्ष पर कुछ चर्चा करते हैं-

श्रीहर्ष मुख्य रूप से शृंगार के कवि हैं। उन्होंने श्रृंगार का साङ्गोंपांग वर्णन किया है। इसलिये उनके काव्य में शृंगार के संयोग और वियोग दोनों रूपों का ही वर्णन है। पूर्वराग के रूप में वियोग का वर्णन मिलन से पूर्व भी हो सकता है, क्योंकि नायक-नायिका एक दूसरे के बारे में सुनकर या स्वप्न में एक दूसरे को देखकर भी परस्पर आकृष्ट हो सकते हैं। भारतीय परम्परा के अनुसार पहले नायिका की नायक-विषयक रति का वर्णन करना उचित है। तदनन्तर नायिका-विषयक नायक की रति का वर्णन होता है। श्रीहर्ष ने इस औचित्य का ध्यान रखते हुए पहले दमयन्ती की रति का वर्णन किया है फिर नल की रति का पूर्वराग की अवस्थाओं का वर्णन अत्यन्त ही हृदयग्राही है। यद्यपि उसमें कहीं-कहीं ऊहात्मकता अधिक है। प्रथम सर्ग में तो श्रृंगार के आलम्बन नायक-नायिका का ही वर्णन है। उनके अनुभवों की योजना में भी कवि ने पर्याप्त कौशल दिखाया है। परन्तु

चतुर्थ सर्ग दमयन्ती के विरह सम्बन्धी अतिश्योक्तिपूर्ण वर्णनों से भरा पड़ा है। अनेक स्थानों पर तो उनकी कल्पनायें हास्यास्पद बन गई है। दमयन्ती के विरह ताप की ऊष्मा से कमल के ताजे हरे पत्ते शरीर के पास जाते-जाते सूख जाते हैं तो उन्हें फेंक देना पड़ता है।

स्मरहुताशनदीपितया तथा बहु मृदु सुरसं सरसीरुहम्।
श्रयितुतर्धपथे कृतमन्तरा श्वसितनिर्मितमर्मरसुज्झितम्।।

चन्द्रोपालम्भ के प्रसंग की अधिक कल्पनाओं में दूर की कोड़ी लगाने का प्रयत्न किया गया है परन्तु उस प्रसंग की अधिक कल्पनाओं में नवीनता के साथ रोचकता है। विरहिणी दमयन्ती को चन्द्रमा बिल्कुल अच्छा नहीं लगता। वह उनके नाश के लिए अनेक उपाय सोचती है। उन्हीं में से एक उपाय निम्नलिखित है-

कुरु करे गुरुमेकममोधनं बहिरितो मुकुरंच कुरुष्व मे।
विशति तत्र यदैव विधुस्तदा सखि सुखादहितं जहि त द्रुतम्।।

दर्पण में पड़ी चन्द्रमा की परछाई को मारने से ही चन्द्रमा की मृत्यु की कल्पना में दमयन्ती का बाल स्वभाव तथा उसकी विरहजन्य उन्मादावस्था का परिचय सहज ही प्राप्त हो जाता है।

उद्दीपन विभागों के वर्णन में भी कवि ने अच्छा कौशल दिखाया है। प्रथम सर्ग का उपवन-वर्णन उद्दीपन के रूप में ही उपनिबद्ध है। दमयन्ती के विरह में व्यथित नल की व्यथा इन पुष्प-पादपों को देखकर और अधिक बढ़ जाती है। इसलिये वे उसे तनिक नहीं भाते। कवि ने अपनी कल्पना माध्यम से इन कुसुमपादपों के कष्टकर रूप को ही प्रस्तुत किया है।

काम-दशाओं के वर्णन में अनुभाव तथा संचारी भावों की योजना भी सुन्दर बन पड़ी है। नल तथा दमयन्ती के विरह में अनुभावों की योजना में एक क्रम है। विरह-व्यथा धीरे-धीरे बढ़ती हुई चरम सीमा पर पहुँचती है। कवि के पूर्वराग वियोग के वर्णन में पर्याप्त कुशलता का परिचय दिया है। नैषधीय चरित के अठारहवें तथा उन्नीसवें सर्ग में सम्भोग श्रृंगार का वर्णन भी उत्कृष्ट कोटि का है।

12.6.9 अन्य रस

नैषधीय चरित का अंगीरस श्रृंगार है परन्तु अंगरस के रूप में अन्य रसों की सामग्री भी विद्यमान है। अन्य रसों में कवि ने करुण तथा हास्य को अधिक महत्त्व दिया है। ये दोनों ही रस श्रृंगार के सहायक हो सकते हैं। वर-यात्र के प्रसंग में शिष्ट हास्य के दर्शन सहज ही हो जाते हैं। बारात के अवसर पर इस प्रकार के हास्य-परिहास की परम्परा पर्याप्त प्राचीन है, यह बात श्रीहर्ष के वर्णनों से स्पष्ट हो जाती है। सत्रहवें सर्ग में भी कवि उक्तियों में हास्य के दर्शन होते हैं। परिस्थितिजन्य हास्य के अनेक प्रसंग नैषध में विद्यमान है।

12.6.10 करुण रस

करुण रस के परिपाक में श्रीहर्ष ने पर्याप्त कौशल का परिचय दिया है। नैषध के प्रथम सर्ग के अन्त मे करुण रस का बहुत ही सुन्दर प्रसंग आया है। इस अवसर पर कवि ने वात्सल्य शृंगार को भी करुण का अंग बना दिया है। करुण रस के अनुभवों की योजना में तो श्रीहर्ष अत्यन्त सिद्धहस्त हैं। हँस की दैन्योक्तियों में इनका सुन्दर चित्रण है। इस प्रसंग की स्वाभाविकता भी स्पृहणीय है। यदि इसी शैली में श्रीहर्ष ने सारी कविता की होती तो निश्चय ही वे कालिदास और भवभूति की टक्कर के कवि समझे जाते। परन्तु खेद है कि आलंकारिक शैली के चक्कर में पड़कर वे प्रतिभा सम्पन्न होने पर भी कविता की स्वाभाविक शैली का ही नहीं अपना सके।

करुण रस के विभिन्न रूपों के सम्बन्धों में उदाहरण श्लोकों की व्याख्या के साथ दिए हैं, वहीं से ले ले। उद्दीप्त रसों के प्रति श्रीहर्ष की रुचि नहीं है। इसलिए कोमलकान्त पदावली का वीर, रौद्र तथा वीभत्स रसों की प्रकृति से मेल नहीं बैठता। यद्यपि लम्बे समासों की क्षमता कवि में है जो इन रसों के लिए आवश्यक है, परन्तु नैषधीय चरित में इन रसों का परिपाक नहीं है। प्रथम सर्ग मे एक स्थान पर वे नल की सेना के कृत्रिम युद्ध का वर्णन करते हैं परन्तु वहाँ भी वे कोमलकान्त पदावली से अपना पल्ला नहीं छुड़ा पाते। परिणाम यह होता है कि पदसंघटना युद्धवीर के अनुरूप नहीं बन पाती। वस्तुतः महाकवि श्रीहर्ष ने शृंगार रस के ही सफल कवि हैं। उन्होंने स्वयं अपनी कृति को शृंगार रामृतशीतगु अर्थात् शृंगार रूपी अमृत का चन्द्रमा कहा है।

स्वयं आकलन कीजिये-

अभ्यास प्रश्न 2

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये-

1. नैषधीयचरित की शैली ---- है।
2. नैषधीयचरित का अंगीरस ---- है।
3. श्रीहर्ष ने स्वयं अपनी कृति को ---- कहा है।
4. इस महाकाव्य में कुल ---- छन्दों का प्रयोग हुआ है।
5. इस महाकाव्य का नायक ---- है।

12.7 सारांश

इस इकाई में श्रीहर्ष के 22 सर्गों के महाकाव्य नैषधीयचरित की विषयवस्तु का संक्षेप में वर्णन किया है। नैषधीयचरित को दार्शनिक निगूढ़ रहस्यों से सम्पृक्त कर उसके उद्देश्य पर विचार करते हुए स्वयं कवि ने ऐसे तथ्य प्रस्तुत किये हैं जिनमें उसकी काव्य-

विषयक मान्यताओं का निदर्शन होता है। वह मुख्यतः श्रृंगाररस के कवि हैं और उन्होंने तद्विषयक विविध भंगियों एवं स्वरूपों का अत्यन्त कुशलता के साथ वर्णन किया है।

12.8 कठिन शब्दावली

चक्षु:श्रवस:=नाग	रतीश=कामदेव
शर्वरीश्वर=पूर्णिमा का चन्द्र	मृगीदृश=शत्रुस्त्री
नतभ्रूवां=सुंदरियाँ	भैमी=दमयन्ती
पतत्रिणी=पक्षी	अवनिपाल=नल

12.9 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न- 1

1. बृहत्त्रयी
2. 12 वी शताब्दी उत्तरार्द्ध
3. 22
4. महाभारत (नलोपाख्यान)
5. प्रथम

अभ्यास प्रश्न- 2

1. क्लिष्ट
2. श्रृंगार
3. श्रृंगारामृतशीतगु
4. 21
5. नल

12.10 सहायक ग्रन्थ

1. नैषधचरितमहाकाव्यम् (प्रथम सर्ग) श्रीहर्ष, व्याख्याकार: डॉ- सुरेन्द्र देव शास्त्री, चौखम्बा संस्कृत सीरीज वाराणसी।
2. नैषधचरितमहाकाव्यम् (प्रथम सर्ग) श्रीहर्ष, व्याख्याकार: डॉ- देवनारायण मिश्र, साहित्य भण्डार सुभाष बाजार मेरठ।
3. संस्कृत साहित्य का इतिहास, बलदेव उपाध्याय, शारदा निकेतन वाराणसी।
4. संस्कृत साहित्य कोश, राजवंश सहाय हीरा, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

12.11 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. श्रीहर्ष का समान्य परिचय देते हुए उनकी कृतियों पर प्रकाश डालिये।
2. श्रीहर्ष के काव्य-सौन्दर्य पर प्रकाश डालिये।
3. 'नैषधे पदलालित्यम्' इस सूक्ति की सोदाहरण युक्ति-युक्त समीक्षा कीजिये।
4. श्रीहर्ष के प्रकृति-चित्रण पर एक निबन्ध लिखिये।

त्रयोदश अध्याय

इकाई-13

नैषधीयचरित : प्रथम सर्ग (पद्य 1-15)

संरचना

13.1 प्रस्तावना

13.2 उद्देश्य

13.3 नैषधीयचरित महाकाव्य के प्रथम सर्ग के 1-10 पद्यों का सरलार्थ

- स्वयं आकलन अभ्यास प्रश्न - 1

13.4 नैषधीयचरित महाकाव्य के प्रथम सर्ग के 11-15 पद्यों का सरलार्थ

- स्वयं आकलन अभ्यास प्रश्न - 2

13.5 सारांश

13.6 कठिन शब्दावली

13.7 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

13.8 सहायक ग्रन्थ

13.9 अभ्यास के लिए प्रश्न

13.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों पिछली इकाई में आपने नैषधीयचरित के रचयिता श्रीहर्ष के विषय में अध्ययन किया। इस इकाई में नैषधीयचरित के प्रथम सर्ग के 1-15 पद्यों का अलंकार सहित अध्ययन करेंगे। यद्यपि इस सर्ग में 145 पद्य हैं। इसमें निषध देश के राजा नल के पावन चरित का बड़ी ही उत्तम रीति से वर्णन किया गया है। इसलिए यह महाकाव्य श्रीहर्ष की कवित्वशक्ति का उज्ज्वल प्रतीक है।

13.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जानने में सक्षम होंगे-

- नैषधीयचरित के प्रथम सर्ग के पद्यों का सरलार्थ।
- नैषधीयचरित में प्रयुक्त अलंकारों के वर्णन भी भी सक्षम हो जायेंगे।
- नैषधीयचरित में प्रयुक्त सूक्तियों को समझने में सक्षम हो जायेंगे।
- प्रथम सर्ग की व्याख्या करने में भी निपुण हो जायेंगे।

13.3 नैषधीयचरित महाकाव्य के प्रथम सर्ग के 1-10 पद्यों का सरलार्थ-

निपीय यस्य क्षितिरक्षिणः कथां तथाद्रियन्ते न बुधाः सुधामपि।
नलः सितच्छत्रितकीर्तिमण्डलः स राशिरासीन्महसां महोज्ज्वलः।। 1 ।।

सरलार्थ-

जिस पृथ्वीपालक (राजा) की कथाओं का सम्यक् प्रकार से पान करके विद्वान् लोग अमृत का भी वैसा आदर नहीं करते हैं, कीर्तिमण्डल को श्वेतच्छत्र बनाने वाले, नित्य उत्सवों से शोभायमान महातेजस्वी वे नल हुए।उपमान सुधा की अपेक्षा नल की कथा की श्रेष्ठता के प्रतिपादन से व्यतिरेक अलंकार है। इसके अतिरिक्त क्ष, थ, ध और र वर्ण की आवृत्ति होने से अनुप्रास अलंकार भी है।

भावार्थ –

जिस प्रकार पृथ्वीरक्षक (सूर्य) की कथा का पूर्णतया पान करके देवगण या विद्वान् चन्द्रमा का भी आदर नहीं करते हैं तथा जिसने अपने शुभ्र विस्तृत मण्डल को श्वेत पत्र बनाया है, ऐसे तेजः पुञ्जरूप तथा अति उज्जवल सूर्य के समान पृथ्वी पालक (राजा) की कथा का पान करके विद्वान् लोग अमृत का भी वैसा आदर नहीं करते हैं, कीर्तिमण्डल को शुत्र छत्र बनाने बाले, अति तेजस्वी तथा उत्सवों से देदीप्यमान वे (राजा) नल हुए।

रसैः कथा यस्य सुधावधीरिणी नलः स भूजानिरभूद्गुणाद्भुतः।
सुवणर्दण्डैकसितापतत्रितज्वलत्प्रतापावलिकीर्तिमण्डलः।। 2 ।।

सरलार्थ-

जिस राजा नल की कथा रसों से अमृत को भी तिरस्कृत करने वाली है, वे शौर्यादि गुणों से आश्चर्य कारक तथा प्रदीप्त तेजःपुंज एवं कीर्ति मण्डल को सुवर्णदण्ड तथा एक मात्र श्वेतच्छत्र बनाने वाले राजा नल हुए। इस पद्य में राजा नल की कथा को अमृत को भी तिरस्कृत करने वाली कहा गया है, अतः व्यतिरेक अलंकार है। इसके अतिरिक्त राजा नल की प्रतापावलि में सुवर्णदण्ड और कीर्तिमण्डल में धवल छत्र का आरोप किये जाने से रूपक अलंकार भी है।

भावार्थ –

जिस राजा नल की कथा श्रृंगारादि नौ रसों से युक्त है। अत् एव वह केवल मधुर रस वाले या मधुर, अम्ल, लवण, कटु, कषाय तिक्त, आदि छः रस वाले अमृत को भी तिरस्कृत कर देती है। ऐसा वह राजा नल शौर्य आदि तथा सन्धि विग्रह आदि छः गुणों से युक्त आश्चर्य कारक था। सम्पूर्ण राज्य में उसका तेज और यशोगाथा फैली हुई थी। उसका शुभ्रयण ही एक मात्र श्वेतच्छत्र था तथा व्याप्त तेज ही सुवर्ण दण्ड था। उसका एक छत्र राज्य था अर्थात् वह सम्राट था।

पवित्रमत्रतनुते जगद्युगे स्मृता रसक्षालनयेव यत्कथा।
कथं न सा मद्गिरमाविलामपि स्वसेवनीमेव पवित्रमेष्यति।। 3 ।।

सरलार्थ-

इस युग में स्मरण मात्र से ही जो कथा संसार को जल से प्रक्षालन के समान पवित्र करती है। वह कथा कलुषित होती हुई भी स्वसेविनी अर्थात् उसका कीर्तन करने में संलग्न मेरी वाणी को क्यों नहीं पवित्र करेगी? अर्थात् अवश्य पवित्र करेगी।इस पद्य में नल की कथा में जल के समान प्रक्षालन करने की सम्भावना प्रकट की है, इसलिए उत्प्रेक्षा अलंकार है।

भावार्थ-

राजा नल की कथा और उनके नाम का स्मरण मात्र कल्याणकारी है।अनेकत्र उसके माहात्म्य को स्वीकार किया गया है। अतः कवि का आशय है कि जिस प्रकार जल प्रक्षालन से संसार की समस्त वस्तुएँ स्वच्छ (निर्दोष) हो जाती हैं, उसी प्रकार राजा नत्र की कथा के स्मरण मात्र से कलियुग में मनुष्य के समस्त पाप (दोष) नष्ट हो जाते हैं। तब नल की कथा का ही वर्णन करने वाली मेरी वाणी क्यों नहीं पवित्र हो जायगी? श्रृंगारादि नौ रसों के प्रक्षालन से मेरी वाणी तो पवित्र होगी ही, क्योंकि वह तो उसकी सेविका ही है। साथ ही यह कथा सहृदय सामाजिकों के हृदय को भी रसादि से स्वच्छ अर्थात् विगलित वेद्यान्तर कर देगी। स्मरण मात्र से पवित्र करने वाली कथा निरन्तर वर्णन से तो अवश्य ही पवित्र करेगी। इसी कारण श्रीहर्षअन्य कथाओं को छोड़कर नल की ही कथा का वर्णन करते हैं।

अधीतिबोधाचरणप्रचारणैर्दशाश्चतङ्डः प्रणयन्नुपाधिभिः।
चतुर्दशत्वं कृतवान् कुतः स्वयं न वेत्ति विद्यासु चतुर्दशस्वयम्।। 4 ।।

सरलार्थ-

राजा नल ने चौदह विद्याओं में अध्ययन, अर्थज्ञान, आचरण और प्रचार आदि उपाधियों से चार प्रकार की अवस्थायें करते हुए स्वयं चतुर्दशता को कैसे प्राप्त किया? यह मैं नहीं जानता हूँ। चौदह विद्याएँ- चार वेद, छः वेदांग (शिक्षा, कल्प, निरुक्त, व्याकरण, छन्द और ज्योतिष),धर्मशास्त्र, पुराण, मीमांसा तथा न्याय। इस पद्य में चौदह विद्याओं को चार उपाधियों से गुणा करने पर छप्पन होना चाहिए किन्तु चतुर्दशत्व को प्राप्त करना विरोधाभास अलंकार है।

भावार्थ –

नल के अद्भुत गुणों का प्रतिपादन करते हुए कवि कहता है कि पहले से ही चौदह विद्याएँ वर्णित हैं- चार वेद (ऋक्, यजुः, साम तथा अथर्व) छः वेदाङ्ग (शिक्षा, कल्प, निरुक्त, व्याकरण, छन्द और ज्योतिष), धर्मशास्त्र, पुराण, मीमांसा तथा ज्याय = १४।

राजा नल ने इन सब को अध्ययन, ज्ञान, आचरण तथा प्रचार से चार विभाग किये। सभी विद्याओं का तब उस पर आचरण शुरु से अध्ययन क्रियापुनः उनका अर्थज्ञान किया करते थे। बाद में क्षत्रिय होने के कारण अध्यधुन कार्य उनके लिए निषिद्ध था, अतः धनदानादि देकर ब्राह्मणों द्वारा विद्याध्यापन करवाते थे। इस प्रकार सम्पूर्ण चौदह विद्याओं का इन चार उपाधियों से विभक्त किया था। तबे स्वयं इनमें चतुर्दशत्व कैसे स्थापित किया था, यह मैं नहीं जानता हूँ अर्थात् जो विद्याएँ पहले से ही चौदह थीं उनको चतुर्दशत्व प्राप्त कराना तो पिण्टपेषण मात्र है।

अमुष्य विद्या रसनाग्रनर्तकी त्रयीव नीताङ्गगुणेन विस्तरम्।
अगाहताष्टादशतां जिगीषया नवद्वयद्वीपपृथग्जयश्रियाम्।। 5 ।।

सरलार्थ-

राजा नल की जिह्ना के अग्रभाग पर नृत्य करने वाली विद्या ने छः वेदांग के गुणन से विस्तार को प्राप्त हुई वेदत्रयी के समान मानों अठारह द्वीपों की विजयश्री को पृथक् पृथक् जीतने की इच्छा से अठारह की संख्या को प्राप्त किया।उपर्युक्त चौदह विद्याओं में आयुर्वेद, धनुर्वेद, गान्धर्ववेद तथा अथर्वेद या अर्थशास्त्र के मिलने से अठारह विद्याएँ हो जाती है। इस पद्य में उपमा अलंकार है।

भावार्थ –

वेदत्रयी को छः वेदाङ्गों से गुणा करने पर वह १८ प्रकार कीहो जाती है। उसी प्रकार राजा नल की विविध विद्यायें भी मानो १८ द्वीपों की राज्य लक्ष्मी को जीतने की इच्छा से अठारह की संख्या की प्राप्त हो गई है। राजा नल की विद्याओं का अनेक प्रकार से अर्थ किया जा सकता है - (१) राजा नल की बुद्धि ने अष्टादशता को इस लिये प्राप्त कर लिया है, जिससे कि वह अठारह द्वीपों की जय श्री को पृथक् पृथक् जीत सके। (२) जिस प्रकार कोई नर्तकी सिर हाथ आदि ६ अङ्गों, ग्रीवा बाहु आदि ६ प्रत्यङ्गों तथा • भ्रू नेत्रादि ६ उपाङ्गों से विस्तार को प्राप्त होकर अष्टादश संख्या वाली हो जाती है। (३) अथवा नल पाकशास्त्र के महापण्डित थे।

दिगीशवृन्दांशविभूतिरीशिता दिशां स कामप्रसरावरोधिनीम्।
बभार शास्त्रणि दृशं द्वयाधिकां निजत्रिनेत्रवतरत्ववोधिकाम्।। 6 ।।

सरलार्थ-

दिक्पालों केअंशों से उत्पन्न दिशाओं के स्वामी वह नल काम के प्रभाव को रोकने वाले, अपने को शिव का अवतार सिद्ध करने वाले शास्त्ररूपी तृतीय नेत्र धारण करते थे। इस पद्य में नल को शास्त्ररूपी तुतीय नेत्र वाला कहा गया है। अतःएव रूपक अलंकार है।

भावार्थ-

राजा नल सम्पूर्ण आलों दिशाओं का शासक था, जब कि इन्द्रा- दिक दिक्पाल एक-एक दिशा के स्वामी थे। अतः सभी दिक्षान्न उसके आंशिक विभूति वाले थे। अथवा मनु के अनुसार राजा राभी दिक् पालों के अंश से उत्पन्न होता है। अतः नलू दिक्पाल समूह के अंश से उत्पन्न होता था। सभी दिशाओं का जामन था। दिकपालों के पास आंशिक विभूति है। सभी दिशाओं के स्वामी भगवान शङ्कर ने जिस प्रकार काम के प्रसर को रोकने के लिये तृतीय नेत्र को धारण करते हैं। उसी प्रकार वह नल इच्छा के प्रसर को रोकने वाले शास्त्र रूपी तृतीय नेत्र को धारण करता था। वह नल शास्त्र विरुद्ध कार्य में कभी प्रवृत्त नहीं होता था । यहाँ उसको इन्द्रादि देवों से अधिक समर्थ व्यञ्जित किया गया है।

पदैश्चतुर्भिः सुकृते स्थिरीकृते कृतेऽमुना के न तपः प्रपेदिरे।

भुवं यदेकाघ्रिकनिष्ठया स्पृशन् दधावधर्मोऽपि कृशस्तपस्विताम्।। 7 ।।

सरलार्थ-

उस नल के द्वारा सत्युग में धर्म के चारों (तप, ज्ञान, यज्ञ और दान रूपी) चरणों के स्थिर किए जाने पर कौन तपस्या में प्रवृत्त नहीं हुआ? अर्थात् सभी तपस्या में प्रवृत्त हुए। क्योंकि अधर्म भी अत्यधिक दुर्बल होकर पैर की सबसे छोटी अघ्गुलि से पृथ्वी को स्पर्श करता हुआ तपस्या करने लगा था। इस पद्य में उत्तरार्द्ध अधर्म के भी तपस्या में लीनता होने से विरोधाभास अलंकार है।

भावार्थ –

नल ने सत्य युग में पुण्य को सत्य, अचौर्य, दम और शम अथवा तप, दान ज्ञान और यज्ञ रूप चार चरणों से स्थिर किया। इस प्रकार धर्म के पूर्ण प्रतिष्ठित हो जाने पैर ऐसा कौन था जो तपश्चर्या में रत न हो जाता। यहाँ तक कि अधर्म भी अत्यन्त क्षीण होकर पैर की एक कनिष्ठिका अँगुली से पृथ्वी पर स्थित होकर मानो वह भी तपस्या करने लगा था। सत्य युग में धर्म की स्थिति चारों चरणों से होती है और अधर्म की स्थिति एक चरण सेलोक में भी पैर की अंगुली पर स्थित होकर तप करने वाला तपस्वी अत्यन्त क्षीण हो जाता है । कुछ विद्वान् र्नल की स्थिति सत्य युग में न मान कर त्रेता युग में मानते हैं। उनके अनुसार इसका अर्थ इस प्रकार होगा - धर्म के चारों घरणों से स्थिर कर देने पर त्रेता में भी सत्य युग की स्थापना कर देने पर किसने तपश्चर्या नहीं की अर्थात् सभी ने की।

यदस्य यात्रसु बलोद्धतं रजः स्फुरत्प्रतापानलधूममिज्जम।

तदेव गत्वा पतितं सुधाम्बुधौ दधाति पङ्कीभवदङ्कतां विधौ।। 8 ।।

सरलार्थ-

राजा नल की यात्रओं में सेनाओं के द्वारा उड़ाई गई जो धूलि जलते हुए प्रतापरूपी अग्नि के धुएँ के समान सुन्दर थी, वही धूलि क्षीरसागर में जाकर गिरी और कीचड़ बनकर चन्द्रमा में कलघङ्कता को धारण कर रही है। इस पद्य के पूर्वार्द्ध में प्रताप में अग्नि का आरोप होने से रूपक तथा उत्तरार्द्ध में धूलि में कलघङ्क होने की सम्भावना होने से उत्प्रेक्षा अलंकार भी है।

भावार्थ –

जब राजा नल दिग्विजय के लिए अपनी सेना लेकर यात्रा करते हैं, 'तब विशाल सेना से जो धूलि उड़ती है। वह नल के प्रतपाग्नि से उत्पन्न धुएँ के समान मनोहर प्रतीत होती है और वही धूलि क्षीर सागर में गिरकर कीचड़ बन जाती है। क्षीर सागर से उत्पन्न चन्द्रमा में उस कीचड़ के लग जाने से वही कलंकरूप में प्रतीत होती है। इस प्रकार से भी अर्थ हो सकता है कि वह धूलि अमृत के सागर चन्द्रमा में गिरकर कीचड़ हो जाती है, जो कलंक रूप में प्रतीत होती है। इससे राजा नल की सेना की विशालता तथा समुद्र पर्यन्त विजयी होना सूचित होता है।

स्फुरद्धनुर्निस्वनतद्धनाशुगप्रगल्भवृष्टिव्ययितस्य संगरे।

निजस्य तेजश्शिखिनः परश्शता वितेनुरङ्गारमिवायशः परे।। 9 ।।

सरलार्थ-

युद्ध में सौ से भी अधिक शत्रुओं ने प्रकाशमान धनुष के टघङ्कार वाले उस नल के अत्यधिक बाणों की वर्षा से बुझे हुए अपने तेज रूपी अग्नि के अंधेरे के समान अपयश को फैला दिया। इस पद्य में तेज में अग्नि तथा अपयश में अंधकार का आरोप होने से रूपक अलंकार है। इव शब्द का प्रयोग होने से उत्प्रेक्षा अलंकार भी है।

भावार्थ –

नल युद्ध में प्रकाशमान अपने धनुप का टङ्कार करते हुए मेघ के समान बाणों की वर्षा करते थे। उस बाण वृष्टि से नल के सैकड़ों शत्रुओं की प्रतापाग्नि बुझ गई और जिस प्रकार बुझी आग कृष्णता को फैलाती है, उसी प्रकार नष्ट हुए प्रताप वाले शत्रु के अपयश फैल गये । अत्यधिक वृष्टि से अग्नि बुझना और उसके द्वारा कोयले का फैलाना उचित ही है। नल ने शतांधिक शत्रुओं को जीतकर उनके प्रतापाग्नि को बुझा दिया था ।

अनल्पदग्धारिपुरानलोज्ज्वलैर्निजप्रतापैर्वलयज्ज्वलद्भुवः।

प्रदक्षिणीकृत्य जयाय सृष्टया रराज नीराजनया स राजघः।। 10 ।।

सरलार्थ-

शत्रुओं को मारने वाले अत्यधिक जलाये गये शत्रु नगरों वाली अग्नि के समान उज्ज्वल भूमण्डल की प्रदक्षिणा करके वह राजा नल विजय के लिए रचित आरती से

सुशोभित हुए। इस पद्य में प्रताप को अग्नि के समान उज्ज्वल कहा गया है, इसलिए उपमा अलंकार है।

भावार्थ –

नल ने महाप्रतापी एवं शूरवीर राजाओं को मारकर उनके नगरों को जला दिया। उस जलती अग्नि से नल का प्रताप और भी जाज्वल्य मान हो उठा । अथवा उस अग्नि के समान प्रकाश मान अपने अत्यधिक प्रताप से देदीप्यमान थे । ऐसे नल सम्पूर्ण भूमण्डल की प्रदक्षिणा करके पुरोहितों द्वारा विजय के लिए रची गई आरती से सुशोभित हुए । अथवा उक्तरूप नल का प्रताप ही मानो विजय की आरती था, जिससे वे शोभित हुए । अथवा 'प्रक्षिणीकृत्यजयाय' का 'प्रदक्षिणी + कृती + अजया + आय' पदच्छेद करके ऐसा अर्थ हो सकता है - राजहन्ता तथा जलाए गये शत्रु नगरों की अग्नि के समान अपने तेज से प्रकाशमान, अत्यधिक दानशील, कृतकार्य वे नल लक्ष्मी के द्वारा विष्णु के लिए रची गई आरती से शोभित हुए । राजा को विष्णु का रूप माना गया है। अतः लक्ष्मी के द्वारा (या राजलक्ष्मी के द्वारा) आरती करना उचित है ।

स्वयं आकलन कीजिए –

अभ्यास प्रश्न - 1

निम्नलिखित प्रश्नो के उत्तर दीजिए –

1. नैषधीयचरित के प्रथम पद्य में किसका वर्णन किया गया है?
2. नैषधीयचरित महाकाव्य का नायक कौन है?
3. नैषधीयचरित की नायिका कौन है?
4. नैषधीयचरित के अरम्भिक पद्यों में किसका वर्णन आया है?
5. राजा नल ने कितनी विद्याओं को प्राप्त किया था?

13.4 नैषधीयचरित महाकाव्य के प्रथम सर्ग के 1-10 पद्यों का सरलार्थ

निवारितास्तेन महीतलेऽखिले निरीतिभावं गमितेऽतिवृष्टयः।
न तत्यजुर्नूनमनन्यसंश्रयाः प्रतीपभूपालमृगीदृशां दृशः।। 11 ।।

सरलार्थ-

उस राजा नल ने सम्पूर्ण पृथ्वीतल पर ईतियों से रहित कर देने पर रोकी गई अतिवृष्टियाँ अन्यत्र स्थान न प्राप्त कर प्रतिपक्षी राजाओं की मृगी के समान स्त्रियों के नेत्रें को प्रायः नहीं छोड़ा। फसल सम्बन्धी उपद्रवों को ईति कहते हैं। ईतियाँ छः प्रकार की होती हैं।

भावार्थ –

राजा नल के राज्य में कहीं भी अतिवृष्टि आदि ईतियाँ नहीं थीं । अतः पृथ्वी पर कहीं आश्रय न प्राप्त कर सकने से वे अति वृष्टियाँ शत्रु राजाओं की रोती हुई स्त्रियों के नेत्रों में ही आश्रय ग्रहण किया । राजा नल ने अपने शत्रुओं को मार डाला था। अतः उनकी स्त्रियाँ रात-दिन रोती रहती थी, जिसमे आँसुओं की सतत प्रवहमान धारा से अतिवृष्टि बनी हुई थी । लोक में भी किसी के द्वारा निकाला गया व्यक्ति उसके शत्रु के घर में आश्रय प्राप्त करता है। अतः अतिवृष्टि के द्वारा नल के शत्रु के यहाँ आश्रय प्राप्त करना उचित ही है।

सितांशुवर्णैर्वयतिस्म तद्गुणैमहासिवेम्नः सहकृत्वरी बहुम्।

दिगङ्गनाङ्गभरणं रणाङ्गणे यशः पटं तद्भटचातुरी तुरी।। 12 ।।

सरलार्थ-

महान् तलवार रूपी वेमा की सहकारिणी उस नल के सैनिकों की चतुरता रूपी तुरी युद्धभूमि में चन्द्रमा के समान वर्ण वाले उस नल के गुणों से दिशारूपी स्त्रियों के अङ्गों के आभूषण के समान यशरूपी वस्त्र को बुनती थी। इस पद्य में रूपक अलंकार है।

भावार्थ –

प्रस्तुत श्लोक में साङ्ग रूपक के माध्यम से वर्णन किया गया है। इसका भाव यह है कि जिस प्रकार करचे की सहकारिणी ढरकी (तुरी)बन्द्रमा के समान श्वेत धागे (गुणैः) से रमणियों के पहनने के लिए सफेद वस्त्र बुनती है, उसी प्रकार राजा नल के योद्धाओं की चतुरता युद्धक्षेत्र में शत्रुओं का विनाश करके नल के गुणों से दिदिगन्त में फैलने वाले यश का निर्माण करती थी।

प्रतीपभूपैरिव किं ततो भिया विरुद्धधर्मैरपि भेतृतोज्झिा।

अमित्रजिन्मित्रजिदोजसा स यद् विचारदृक्चारदृगप्यवर्तत।। 13 ।।

सरलार्थ-

क्या उस राजा नल के भय से प्रतिपक्षी राजाओं के समान विरोधी धर्मों ने भी विरोध छोड़ दिया था? क्योंकि वह नल तेज से शत्रुओं को और सूर्य को भी जीतने वाला था तथा वह विवेकरूपी दृष्टि वाला होकर भी चारदृक् (दूतों के द्वारा देखने वाला)था।

भावार्थ –

जिस प्रकार नल के विरोधी राजाओं ने उसका विरोध करना छोड़ दिया था, उसी प्रकार परस्पर विरोधी स्वभावों ने अथ्ववा प्रतिषिद्ध आचरण करने वालों ने भी उसके भय से विरोध करना छोड़ दिया था। क्योंकि वह राजा अमित्रजित् (शत्रुओं को जीतने वाला) होकर भी मित्रजित् (मित्रों को जीतने वाला था। (विरोध परिहार पक्ष में) मित्रजित् अर्थात् सूर्य को जीतने वाला था। वह चारदृक् (गुप्तचरों के द्वारा देखने वाला)

होकर भी विचारदृक् (गुप्तचरों के द्वारा न देखने वाला) था, (विरोध परिहार पक्ष में) विचार से देखने वाला अर्थात् विवेक पूर्वक कार्य करने वाला था। आशय है कि राजा नल अपने प्रताप से शत्रुओं को जीतने वाला होकर भी सूर्य को भी जीतने वाला था। वह चारदृक् था अर्थात् गुप्तचरों से राज्य के विषय में सारी जानकारी रखता था और विचारदृक् था अर्थात् उस जानकारी के अनुसार विवेकपूर्वकं कार्य करता था।

तदोजसस्तद्यशसः स्थिताविमौ वृथेति चित्ते कुरुते यदा यदा।

तनोति भानोः परिवेषकैतवात्तदाविधिः कुण्डलनां विधोरपि।। 14 ।।

सरलार्थ-

उस राजा नल के प्रताप और यश के रहते हुए ये दोनों सूर्य और चन्द्रमा व्यर्थ हैं। इस प्रकार ब्रह्मा मन में जब-जब विचार करते हैं। तब-तब सूर्य और चन्द्रमा के भी मण्डल (परिवेष) के बहाने व्यर्थता सूचक कुण्डलना बना देते हैं। इस पद्य में सूर्य और चन्द्रमा के चारों ओर इस प्रकार के वर्त्तुलाकार घेरे का होना प्राकृतिक है किन्तु प्रकृत परिवेष का निषेधकर अप्रकृत कुण्डलना की स्थापना किये जाने से यहाँ अपह्नुति अलंकार है।

भावार्थ –

जिस प्रकार लेखक किसी लिखित वस्तु को अर्थ समझकर उसे चारों ओर से घेर देता है। उसी प्रकार नल के तेज और यश के होते हुए सूर्य और चन्द्रमा को व्यर्थ सनशकर मानो ब्रह्मा ने उसके चारों ओर घेरा बना चन्द्रमा को भी जीत दिया है अर्थात उसके तेज और यश ने सूर्य और लिया है।

अयं दरिद्रो भवितेति वैधसीं लिपिं ललाटेऽर्थिजनस्य जाग्रतीम्।

मृषा न चक्रल्पितकल्पपादपः प्रणीय दारिद्रयदरिद्रतां नृपः।। 15 ।।

सरलार्थ-

कल्प वृख को भी तुच्छ करने वाले राजा नल ने याचकों के मस्तक पर स्पष्ट दिखाई देने वाले ‘यह दरिद्र होगा’ ऐसी ब्रह्मा की लिपि को दरिद्रता की दरिद्रता रचकर झूठ नहीं किया? अर्थात् अवश्य किया। इस पद्य में दारिद्रय की दरिद्रता कहकर असम्बन्ध में सम्बन्ध की कल्पना करने से अतिशयोक्ति अलंकार है।

भावार्थ –

राजा नल की दानवीरता का वर्णन है। राजा नल दरिद्र याचकों को इतना धन देते थे कि जितने की वे इच्छा भी नहीं करते थे। अतः अपनी दानशीलता से उन्होंने कल्पवृक्ष को भी तुच्छ बना दिया था, क्योंकि कल्पवृक्ष भी याचित धन ही प्रदान करता है। उसके दान से उन दरिद्र याचकों की निर्धनता दूर हो जाती थी, जिनके मस्तक पर ब्रह्मा ने लिख दिया है कि 'यह दरिद्र होगा'। इस प्रकार नल दरिद्रता का ही दारिद्रय बना कर ब्रह्मा के

लेख को झुठ नहीं होने दिया। इससे न तो नल के राज्य में कोई दरिद्र रहा और न ही ब्रह्मा का लेख ही झूठ हुआ।

स्वयं आकलन कीजिए –

अभ्यास प्रश्न-2

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए –

1. राजा नल ने धर्म के कितने चरणों को प्राप्त किया था?
2. युद्ध में सौ से अधिक शत्रुओं का नाश करने वाला कौन था?
3. ईति किसे कहते है तथा ईतियाँ कितने प्रकार की होती है?
4. युद्धभूमि में नल किस वर्ण के समान माने है?
5. किसके प्रताप और यश के कारण सूर्य और चंद्रमा व्यर्थ है?

13.5 सारांश

संस्कृत काव्य के अपकर्षकाल में आलोचकों की दृष्टि श्रीहर्ष के महनीय काव्य की ओर गड़ी हुई है, क्योंकि अन्धकार युग को आलोक प्रदान करने वाला यही गौरवमय प्रशंसनीय काव्य है। श्रीहर्ष अपनी अलौकिक प्रतिभा तथा अपने काव्य की मधुरता से स्वतः परिचित थे और इनका उन्हें गर्व भी था। नैषधीयचरित में वैदग्धी तथा पाण्डित्य का परमयोग काव्य की उदात्तता का पूर्ण परिचायक है। श्रीहर्ष विशुद्ध-विदग्ध-पदावली के आदरणीय कवि थे। वह नारीरूप के वर्णन में बड़े प्रवीण है। नैषध में दमयन्ती का रूप अनेक अवसरों पर वर्णित है और प्रत्येक अवसर पर अपूर्व नवीनता है। कवि में कल्पना का दारिद्रय नहीं है। वह अलंकृत तथा श्रृङ्गारकला के सिद्धहस्त कवि हैं। इस इकाई में प्रथम सर्ग के आरंभिक पंद्रह पद्यों का वर्णन किया गया है।

13.6 कठिन शब्दावली

महोज्ज्वलों=उत्सवों से उज्ज्वल
सुधावधीरिणी=अमृत का तिरस्कार करने वाला
चतुर्दश= चौदह
रसनाग्रम=जिह्वा के अग्रभाग में
अष्टदाश=अठारह
सुधाम्बुधौ=क्षीरसमुन्द्र
संङ्गरे=युद्ध में
पदैश्चतुभि=चार चरण(तपस्या,ज्ञान,यज्ञ,दान)
राजघ:=शत्रु राजाओ को मारने वाला
कामप्रसभावरोधिनीम्=कामदेव को बल से निवारण करने वाला

13.7 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न-1 1. नल 2. राजा नल 3. दमयन्ती 4. नल 5. चौदह विद्याएँ।

अभ्यास प्रश्न-2 1. चार 2. नल

3. फसल सम्बन्धी उपद्रवों, 6 प्रकार

4. चंद्रमा 5. नल के

13.8 सहायक ग्रन्थ

1. नैषधचरितमहाकाव्यम् (प्रथम सर्ग) श्रीहर्ष, व्याख्याकार: डॉ- सुरेन्द्र देव शास्त्री, चौखम्बा संस्कृत सीरीज वाराणसी।
2. नैषधचरितमहाकाव्यम् (प्रथम सर्ग) श्रीहर्ष, व्याख्याकार: डॉ- देवनारायण मिश्र, साहित्य भण्डार सुभाष बाजार मेरठ।
3. संस्कृत साहित्य का इतिहास, बलदेव उपाध्याय, शारदा निकेतन वाराणसी।
4. संस्कृत साहित्य कोश, राजवंश सहाय हीरा, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

13.9 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. नैषधीयचरित के प्रथम सर्ग के रसों का ध्यान में रखकर एक निबन्ध लिखिये।
2. निम्नलिखित पद्यों की व्याख्या कीजिये-

   प्रथमसर्ग- 2, 4, 6, 9, 10, 12, 13

चतुर्दश अध्याय

इकाई-14

नैषधीयचरित : प्रथम सर्ग (पद्य 16-30)

संरचना

14.1 प्रस्तावना

14.2 उद्देश्य

14.3 नैषधीयचरित महाकाव्य के प्रथम सर्ग के 16-21 पद्यों का सरलार्थ

- स्वयं आकलन अभ्यास प्रश्न - 1

14.4 नैषधीयचरित महाकाव्य के प्रथम सर्ग के 22-30 पद्यों का सरलार्थ

- स्वयं आकलन अभ्यास प्रश्न - 2

14.5 सारांश

14.6 कठिन शब्दावली

14.7 स्वयं आंकलन प्रश्नों के उत्तर

14.8 सहायक ग्रन्थ

14.9 अभ्यास के लिए प्रश्न

14.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों, इस इकाई में नैषधीयचरित के प्रथम सर्ग के 16-30 पद्यों का अलंकार सहित अध्ययन किया जायेगा। । जिसके अन्तर्गत राज नल के शौर्य का वर्णन प्रस्तुत किया जायेगा। राजा नल को सूर्य के समान तेजस्वी और चन्द्रमा की किरणों के समान शोभायमान चित्रित करने का प्रयास इन पद्यों में प्रस्तुत किया गया है। इसमें राजा नल के विशाल स्वरूप की अनूठी कल्पना कर कवि ने काव्य को अद्‌भुत बनाने का प्रयास किया है, जिसका अध्ययन इस इकाई में किया जायेगा।

14.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जानने में सक्षम होंगे-

- नैषधीयचरित के प्रथम सर्ग के पद्यों का सरलार्थ।
- नैषधीयचरित में प्रयुक्त अलंकारों के वर्णन भी भी सक्षम हो जायेंगे।
- नैषधीयचरित में प्रयुक्त सूक्तियों को समझने में सक्षम हो जायेंगे।
- प्रथम सर्ग की व्याख्या करने में भी निपुण हो जायेंगे।

14-3 नैषधीयचरित महाकाव्य के प्रथम सर्ग के 16-30 पद्यों का सरलार्थ

विभज्यमेरुर्नयदर्थिसात्कृतो न सिन्धुः उत्सर्गजलव्ययैर्मरुः।
अमानि तत्तेन निजायशो युगं द्विफालबद्धाश्चिकुराः शिरःस्थितम्।। 16 ।।

सरलार्थ-

जो समेरु पर्वत को बाँटकर याचकों को नहीं दिया गया और समुद्र को दान देते समय संकल्प जल से मरुस्थल नहीं बना दिया गया। इन दो कारणों से उस नल ने दो भागों में विभक्त कर बँधे हुए अपने केश समूह को अपने सिर पर स्थित दो अपयश माना। इस पद्य में केशों में कृष्णता के साम्य से अपयश का आरोप होने से रूपक अलंकार है। सिर के बालों (प्रकृत)का निषेध करके अपयश (अप्रकृत) की स्थापना से अपह्नुति अलंकार भी है।

भावार्थ-

राजा नल यह मानता था कि वह सुमेरु पर्वत के टुकड़े करके याचकों को नहीं बाँट सका है और दान देने में संकल्प के जल के रूप में व्यय करके समुद्र को महसूमि नहीं बना सका है। अतः उसके ये दो अपयश हैं, जो मस्तक के दोनों ओर लटकते हुए काले काले बाल के रूप में उसके सिर पर विद्यमान है। अपयज को भी कवि काला मानते हैं। अतः काले बालों का अपयश के रूप में मानना उचित है ।

अजस्त्रमभ्यासमुपेयसा समं मुदैव देवः कविना बुधेन च।
दधौ पटीयान् समयं नयन्नयं दिनेश्वरश्रीरुदयं दिने दिने।। 17 ।।

सरलार्थ-

सूर्य के समान तेजस्वी अत्यधिक समर्थ वह राजा नल निरन्तर सन्निकटता या अभ्यास को प्राप्त करने वाले कवि और विद्वानों के साथ प्रसन्नतापूर्वक समय को व्यतीत करते हुए प्रतिदिन उन्नति को धारण कर रहे थे।

जिस प्रकार दिन में ईश्वर के सदृश कान्ति को धारण करने वाला, अन्धकार को दूर करने में अत्यधिक समर्थ "ह सूर्य देव सर्वदा समीप में स्थित रहने वाले कवि (शुक्र) और बुध नामक दो ग्रहों के साथ प्रतिदिन उदय को धारण करने वाला है उसी प्रकार सूर्य की कान्ति के समान कान्ति को धारण करने वाला अर्थात् तेजस्वी और अपने विरोधी अथवा विपक्षी राजाओं को नीचा दिखलाने में पूर्णतया समर्थ यह राजा नल भी निरन्तर समीप में विद्यमान रहने वाले काव्यशास्त्र के ज्ञाता पण्डितों तथा विद्वानों के साथ प्रसन्नतापूर्वक समय को व्यतीत करते हुए प्रतिदिन उन्नति को ही धारण किया करते थे। इस पद्य में दिनेश्वरश्री, देवः, कविना, बुधेन के दो-दो अर्थ होने से श्लेष अलंकार है।

भावार्थ –

जिस प्रकार अति तेजस्वी सूर्य देव निरन्तर समीप में रहने वाले शुक्र और बुध नक्षत्रों के साथ सदैव शुभ्रता पूर्वक समय व्यतीत करते हुए प्रति दिन उदय को प्राप्त होते हैं, उसी प्रकार अत्यन्त बुद्धिमान् राजा नल सदैव अपने अपने विषय का अभ्याग करने वाले अथवा समीप में रहने वाले कवियों और विद्वाना के साथ आनन्दपूर्वक समय व्यतीत करते हुए दिन प्रतिदिन उन्नति कर रहे थे या समृद्धि प्राप्त कर रहे थे।

अधो विधानात् कमलप्रवालयोः शिरःसु दानादखिलक्षमाभुजाम्।

पूरेदमूर्ध्व भवतीति वेधसा पदं किमस्याङ्कितमूर्ध्वरेखया।। 18 ।।

सरलार्थ-

कमल और प्रवाल (मूंगे) को नीचा करने से सम्पूर्ण राजाओं के सिरों पर रखने से 'यह इसका पैर सर्वोत्कृष्ट या सबसे ऊपर होगा' ऐसा सोचकर ब्रह्मा ने राजा नल के क्या ऊर्ध्वरेखा से अघिङ्कत कर दिया है? इस पद्य में नल के पैर को ऊर्ध्वरेखा से अघिङ्कत करने की सम्भावना होने से उत्प्रेक्षा अलंकार है।

भावार्थ –

राजा नल का पैर कमल से भी अधिक मसृण तथा मूँगे से भी अधिक लाल था। अतः अपनी शोभा से इन दोनों को जीत लिया था। सभी सामन्त राजा नल के चरणों में नतमस्तक होते थे। अतः उसका पैर सभी राजाओं के सिर पर होता था। अतएव मानो ब्रह्मा ने यह सोचकर कि 'इसका पैर सभी के ऊपर अथवा सर्वोत्कृष्ट होगा,' ऊर्ध्व रेखा से चिह्नित कर दिया था।

जगज्जयं तेन च कोशमक्षयं प्रणीतवाग्शैशवशेषवानयम्।

सखा रतीशस्य ऋतुर्यथा वनं वपुस्तथालिङ्गदथास्य यौवनम्।। 19 ।।

सरलार्थ-

बाल्यावस्था के शेष रहने पर नल ने सम्पूर्ण जगत् को जीत लिया और अपने कोश को कभी नष्ट न होने वाला बना दिया। इसके पश्चात् कामदेव का मित्र वसन्त ऋतु जिस प्रकार वन का आलिङ्गन करता है उसी प्रकार युवावस्था ने भी इस नल के शरीर का आलिगन किया। इस पद्य के उत्तरार्द्ध में उपमा अलंकार है।

भावार्थ-

बाल्यावस्था के समाप्त होते-होते ही राजा नल ने विश्व विजय करके अपने राज्य को निःसपत्न बना दिया और उस विजय से अक्षय कोष स्थापित किया अर्थात् उसका कोप धन से परिपूर्ण हो गया । वस्तुतः विश्व विजय करना ही नल का प्रधान उद्देश्य था, बोत्र की पूर्ति तो आनुपगिक उद्देश्य था क्योंकि उनकी दानवीरता और अक्षय कोष का वर्णन तो पहले ही किया जा चुका है। इसके बाद जिस प्रकार वभन्त ऋतु के आगमन से वन

बिल उठता है, उभी प्रकार यौवन के आर्यनन से नल का शरीर अतिशय सौन्दर्यसे पूरित हो उठा।

अधारि पद्मेषु तदङ्घ्रिणा घृणा क्व तच्छयच्छाय लवोऽपि पल्लवे।
तदास्य दास्योपि गतोऽधिकारितां न शारदः पार्विकशर्वरीश्वरः।। 20 ।।

सरलार्थ-

उस राजा नल के चरण ने कमलों के प्रति घृणा का भाव धारण किया, नवकिसलयों में उसके हाथ की शोभा का लेशमात्र भी कहाँ था? अर्थात् नहीं था। शरत्कालीन पूर्णिमा का चन्द्रमा उस नल के मुख की दासता की भी योग्यता नहीं रखता था। इस पद्य में चरण द्वारा कमल के प्रति घृणा किये जाने का असम्भव वर्णन है। इसलिए इस स्थान पर असम्बन्ध में सम्बन्ध का कथन किए जाने से अतिशयोक्ति अलंकार है।

भावार्थ –

नल के चरणों ने कमलों के प्रति घृणा या दया का भाव धारण किया, क्योंकि उन कमलों में नल के चरण की ही शोभा थी। नल के चरण में कमल चिह्न की रेखाएँ थीं। अतः यह सोचकर कि 'इन कमलों ने मुझसे ही शोभा प्राप्त की है। इनकी शोभा मुझसे कम है। इनके साथ मेरी प्रतिस्पर्धा उचित नहीं है।' कमलों के प्रति घृणा धारण की। अथवा 'ये कमल रेखारूप मैं मुझमें स्थित हैं, मेरे आश्रित हैं।' यह सोचकर कमलों के प्रति दया का भाव था। क्योंकि अपने से हीन के प्रति घृणा और अपने आश्रित के प्रति दवा का भाव होना उचित है। नव किसलयों में नल के हाथ की शोभा का लेशमात्र भी नहीं था क्योंकि उन किसलयों में नल के चरण की कान्ति का लेश मात्र था। अतः जिस पल्लव में चरण का लेशमात्र था, वह हाथ की कान्ति का लेश मात्र भी नहीं धारण कर सकता था। हीनाङ्ग चरण के लेश वाला श्रेष्ठाङ्ग हाथ के लेश वाला कैसे हो सकता था ? शरत्कालीन पूर्णिमा का चन्द्रमा उसके मुख के दास बनने का भी अधिकारी नहीं था। क्योंकि शरद् और पूणिमा आदि अनेक संयोगों से वह सोलह कलाओं से युक्त हो सका, परन्तु नल का मुख तो स्वतः बिना किसी संयोग के सर्वदा चौंसठ कलाओं से युक्त था।

किमस्य रोम्णाङ्कपटेन कोटिभिर्विधिर्न लेखाभिरजीगणद् गुणान्।
न रोमकूपौघ मिषाज्जगत्कृता कृताश्च किं दूषणशून्य विन्दवः।। 21 ।।

सरलार्थ-

क्या ब्रह्मा ने रोओं के बहाने से करोड़ों रेखाओं के द्वारा इस नल के गुणों को नहीं गिना? अर्थात् गिना। क्या जगत् के रचयिता ब्रह्मा ने रोम-छिद्रों के बहाने से इसके

दोषाभाव सूचक बिन्दुओं को नहीं बनाया? अर्थात् अवश्य बनाया है। इस पद्य में रोमों और रामकूपों का कपट और मिष शब्दों द्वारा निषेध करके क्रमशः अप्रस्तुत गुणों की गणक रेखाओं और दोषशून्यता के ज्ञापक बिन्दुओं की उत्प्रेक्षा की गई है। अतः उत्प्रेक्षा अलंकार है।

भावार्थ –

मनुष्य के शरीर में साढ़े तीन करोढ़ रोएँ होते हैं और प्रत्येक रोम एक रोमकूप में होता है। राजा नल के शरीर में भी साढ़े तीन करोड़ रोएँ तथा उतने ही छिद्र थे। कवि ने जिनका व्याजोक्ति के माध्यम से वर्णन किंया है। नल के शरीर में जो करोड़ों रोम हैं, वे रोम नहीं हैं अपितु नल के करोड़ों गुणों को गिनने के लिये बनाई गई रेखाए हैं, क्योंकि अत्यधिक संख्या बाली वस्तु के गिनने के लिए विस्मरण न हो जाय इस लिए रेखाओं द्वारा उनकी गणना की जाती है। नल के रोमकूपसमूह रोमछिद्र नहीं हैं अपितु दोषा-भावसूचक शून्य विन्दु हैं। क्योंकि लोक में भी अभाव सूचित करने के लिए गोलाकार बिन्दु बना दिये जाते हैं। नल में गुण ही गुण थे दोष कोई भी नहीं था। इसीलिए ये रोमछिद्र दोषाभाव को सूचित करने के लिए बनाए गये शून्य बिन्दु हैं।

स्वयं आकलन कीजिए –

अभ्यास प्रश्न 1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए –

1. राजा नल के केशों को कितने भागों में विभक्त किया गया है?
2. सूर्य के समान तेजस्वी किसे कहा गया है?
3. राजा नल को ऊधर्वरेखा से किसने अंकित किया है?
4. जगत के रचियता किसे माना है?
5. कल्प वृक्ष को तुच्छ करने वाला कौन था?

14.4 नैषधीयचरित महाकाव्य के प्रथम सर्ग के 22-30 पद्यों का सरलार्थ

अमुष्य दोर्भ्यामरिदुर्गलुण्ठने ध्रुवं गृहीतार्गलदीर्घपीनता।
उरः श्रिया तत्र च गोपुरस्फुरत् कपाटदुर्धर्षतिरः प्रसारिता।। 22 ।।

सरलार्थ-

राजा नल की दोनों भुजाओं ने शत्रुओं के दुर्गों को लूटने में मानों अर्गला की दीर्घता और स्थूलता को धारण कर लिया है तथा वक्षस्थल की शोभा ने मानों नगर के द्वार पर स्फुरित होने वाले किवाड़ की कठोरता और विशालता को ग्रहण कर लिया है। इस पद्य में सम्भावना व्यक्त होने से उत्प्रेक्षा अलंकार है।

भावार्थ –

राजा नल की दोनों भुजाएँ इतनी लम्बी और मोटी थी कि शत्रुओं के किलों के द्वार पर पड़ी हुई अर्गला प्रतीत होती थीं। उसकी छाती इतनी चौड़ी और कठोर थी कि शत्रु नगर के द्वार पर लगे किवाड़ के समान प्रतीत होती थी। इसका आशय यह है कि राजा नल आजानुबाहु तथा विद्याल वक्षःस्थल वाला था।

स्वकेलिलेशस्मितनिन्दितेन्दुनो निजांशदृक्तर्जित पप्र सम्पदः।
अतद्वयीजित्वरसुन्दरान्तरे न तन्मुखस्य प्रतिमा चराचरे।। 23 ।।

सरलार्थ-

अपनी क्रीड़ा के लेशमात्र मुस्कान से चन्द्रमा को तिरस्कृत करने वाले तथा अवयवभूत नेत्रें से कमल के सौन्दर्य की शोभा को जीतने वाले नल के मुख की उपमा उन दोनों चन्द्रमा और कमल की शोभा को जीतने वाली किसी दूसरी वस्तु से रहित संसार में नहीं थी। इस पद्य में उपमान की अपेक्षा उपमेय को अधिक सौन्दर्यशाली मानने के कारण व्यतिरेक अलंकार है।

भावार्थ –

नल के उस मुख मे अपनी क्रीडापूर्वक मुस्कराहट से चन्द्रमा कोजीत लिया था और उस मुख के केवल एक अवयव नेत्र ने अपनी शोभा से कैमल को जीत लिया था। इस प्रकार नल मुख ने चन्द्रमा और कमल दोनों की शोभा को जीत लिया। अतः उसकी उपमा संसार भर में कोई नहीं थी, क्योंकि संसार में चन्द्रमा और कमल सबसे सुन्दर पदार्थ है। इनसे सुन्दर दूसरी कोई वस्तु नहीं है। ये दोनों नल के मुख से पराजित हो चुके हैं। अतः संसार में नल के मुख के उपमान का अभाव हो गया था। उपमेय की अपेक्षा उपमान के अधिक श्रेष्ठ होने पर ही उपमा दी जाती है। अतः नल का मुखअनुपम था।

सरोरुहं तस्य दृशैव निर्जितं जिताः स्मितेनैव विधोरपिश्रियः।
कुतः परं भव्यमहो महीयसी तदाननस्योपमितौ दरिद्रता।। 24 ।

सरलार्थ-

उस नल के नेत्र के द्वारा ही कमल को जीत लिया गया है और मुस्कराहट के द्वारा चन्द्रमा की शोभा को जीत लिया है। इनसे अधिक सुन्दर वस्तु कहाँ है? आश्चर्य की बात है कि उस नल के मुख की उपमा में अत्यधिक दरिद्रता हो गई है। इस पद्य में उपमान कमल और चन्द्रमा की अपेक्षा नेत्र तथा मुस्कराहट की उत्कृष्टता होने से व्यतिरेक अलंकार है।

भावार्थ –

राजा नल ने अपने नेत्रो से कमल को जीत लिया है अर्थात् नेत्र कमल से अधिक सुन्दर हैं। अपनी मुस्कराहट से चन्द्रमा की शोभा को जीत है अर्थात् मुस्कराहट से जो

दन्तांशु निकलती हैं, वे चन्द्रमा की किरणों से अधिक सुन्दर हैं। अतः चन्द्रमा भी उसके सामने तुच्छ है। इस प्रकार संसार की दोनों सुन्दर वस्तुएँ नल के मुख से जीत ली गई हैं। अतः संसार में ऐसी कोई सुन्दर वस्तु नहीं है जिससे नल के मुख की उपमा दी जा सके। यह कितमे आश्चर्य की बात है कि ब्रह्मा की इतनी बड़ी सृष्टि में नल के मुख के उपमान का अभाव हो गया है।

स्वबालभारस्य तदुत्तमाङ्गजैः समं चमर्येव तुलाभिलाषिणः।
अनागसे शंसति बालचापलं पुनः पुनः पुच्छविलोनच्छलात्।। 25 ।।

सरलार्थ-

उस नल के सिर के बालों के साथ समता चाहने वाले बाल-समूह की निरपराधता के लिए चमरी मृगी बार-बार पूँछ हिलाने के बहाने से बाल सुलभ चंचलता को ही कहती है। इस पद्य में प्रकृत पूँछ के हिलाने का प्रतिषेध करके अप्रकृत बाल चापल्य की स्थापना से अपह्नुति अलंकार है।

भावार्थ-

चमरी मृगी के बाल नल के सिर के बालों के साथ समानता चाहते थे, कहाँ तो नल के सिर के बाल (उत्तमाङ्गज) और कहाँ चमरी मृगी के पूछ के बाल? चमरी के बालों का कितना बड़ा अपराध है। इसलिए चमरी मृगी बार-बार पूछ हिलाकर मानो नल से यह कह रही है कि उन्होंने बाल भाव के कारण चपलता की है। अतः उनका अपराध नहीं माना जाना चाहिए। लोक में भी बच्चे के अपराध के लिए उसकी माता कहती है कि 'बालक ने अज्ञानता से अपराध किया है, क्षमा कर दीजिए और उसे क्षमा कर दिया जाता है। उसी प्रकार चमरी भी बालों (केशों) को बाल (बालक) का अपराध समझ कर क्षमा करने को कह रही है।

महीभृतस्तस्य च मन्मथश्रिया निजस्य चित्तस्य च तं प्रतीच्छया।
द्विधानृपे तत्र जगत्त्रयीभुवां नतभ्रुवां मन्मथ विभ्रमोप्रभवत्।। 26 ।।

सरलार्थ-

उस राजा नल की कामदेव के समान शोभा के कारण उसके प्रति अपने चित्त की अभिलाषा के कारण उस राज के विषय में तीनों लोकों में उत्पन्न हुई सुन्दरियों को दो प्रकार का काम विभ्रम (कामदेव का भ्रम तथा कामजनित विलास)हुआ। इस पद्य में मन्मथविभ्रम पद के दो अर्थ है- एक कामदेव की भ्रान्ति दूसरा कामजनित विलास (कटाक्ष आदि हाव-भाव)। इसलिए इस पद्य में श्लेष अलंकार है।

भावार्थ –

राजा नल कामदैव के समान सुन्दर था। इसलिए उसके विशिष्ट सौन्दर्य के कारण तीनों लोक की सुन्दरियाँ उसके प्रति, आकृष्ट हुई, जिससे कि उन सुन्दरियों में काम विभ्रम दो प्रकार से हुआ - एक तो राजा नल को देखकर स्त्रियाँ उसे कामदेव समझती थीं। अतः कामदेव का भ्रम हुआ और दूसरे हृदय में उसके प्रति आसक्ति के कारण उनमें विभ्रम हुआ अर्थात् कटा- क्षादि बिलास करने लगती थीं। तीनों लोक की सुन्दरियों में सामान्य रूप से विभ्रम होने की बात कही गई है। अतः पतिव्रता स्त्रियों में नल के प्रति कामाभिलाष नहीं होने पर भी कोई दोष नहीं है। अथवा पतिव्रता स्त्रियों में नल के प्रति कामदेव का विशिष्ट भ्रम हुआ तथा पतिव्रताओं से अतिरिक्त स्त्रियों के चित्त में नल के प्रति कामाभिलाष होने से विभ्रम (विलास) हुआ। इस अर्थ से भी उक्त दोष का परिहार हो जाता है।

निमीलनभ्रंश जुषा दृशा भृशं निपीय तं यस्त्रिदशीभिरर्जितः।
अमूस्तमभ्यासभरं विवृण्वते निमेषनिःस्वैरधुनापि लोचनैः।। 27 ।।

सरलार्थ-

देवाघनाओं ने निमेषरहित दृष्टि से उस नल को अत्यधिक या अच्छी प्रकार से देखकर या पानकर जिस अभ्यासाधिक्य को प्राप्त किया, उस अभ्यासाधिक्य को वह आज भी निमेषरहित नेत्रें से प्रकट करती है। इस पद्य में देवाङ्गनाओं के स्वाभाविक निमेषाभाव में निमेषाभाव में निर्निमष दृष्टि से देखने के अभ्यास की सम्भावना की गई है अतः उत्प्रेक्षा अलंकार है।

भावार्थ-

देव योनि में निमेष का अभाव माना जाता है। निमेष नेत्रों केपलकों के गिरने और उठने को कहते हैं। अतः देवाङ्गनाओं में निनिमेषता स्वभाव सिद्ध है। कवि ने उस को प्रकारान्तर से कहा है। देवाङ्गनाएँ अतिप्रिय नल को निमेष रहित दृष्टि से अतिकाल तक देखती रही हैं। इस कारण निनिमेषता का उनका जो अभ्यास था, अभ्यासाधिक्य को ही अब भी वे अपने निमेष रहित नेत्रों से प्रक्ट कर रही हैं। लोक में भी किसी अतिप्रिय वस्तु को लोग बिना पलक गिराये अर्थात् निनिमेष दृष्टि से देखते हैं और किसी कार्य का अधिक अभ्यास करने से बाद में वह स्वभाव बन जाता है।

अदस्तदाकर्णिफलाढ्यजीवितं दृशोर्द्वये नसतदवीक्षि चाफलम्।

इति स्म चक्षुः श्रवसां प्रियां नले स्तुवन्ति निन्दन्ति हृदातदात्मनः ।। 28 ।।

सरलार्थ-

नागाघनाएँ उस समय अपने हृदय से नल के विषय में हमारे दोनों नेत्र उस राजा नल के गुणों को सूनने वाले हो गए हैं इसलिए सफल जीवन हैं, परन्तु उस राजा नल को देखने वाले नहीं हैं इसलिए असफल हैं। इस प्रकार प्रशंसा और निन्दा करती थी। इस पद्य में असम्बन्ध में सम्बन्ध का कथन करने से अतिशयोक्ति अलंकार है। नेत्र को सफल और निष्फल कहने से विरोधाभास अलंकार भी है।

भावार्थ –

पाताल लोक में रहने वाली नागपत्नियाँ मर्त्यलोकवासी नल के गुणों को सुन तो सकती हैं, परन्तु देख नहीं सकती हैं। सर्पों के कान नहीं होते हैं। ये आँखों से ही देखते हैं और सुनते भी हैं। अतः नल के चरित्र को सुन कर नागपनित्याँ अपने नेत्रों को सफल मानती हैं, परन्तु आँखों से देख न सकने के कारण उनको निष्फल भी मानती हैं। इस प्रकार वे अपने नेत्रों की प्रशंसा भी करती हैं और निन्दा भी।

विलोकयन्तीभिरजङ्गभवना बलादमुं नेत्र निमीलनेष्वपि।
अलम्भिमर्त्याभिरमुष्यदर्शने न विघ्नलेशोऽपि निमेषनिर्मितः।। 29 ।।

सरलार्थ-

निरन्तर भावनावश नेत्रें को बन्द करने पर भी इस नल को देखती हुई मानवियों ने उस नल के दर्शन में निमष कृत लेशमात्र भी विघ्न को नहीं प्राप्त किया। इस पद्य में नेत्रें के बन्द किए जाने पर देखने में बाधा का न होना विरोधाभास अलंकार है।

भावार्थ –

मृत्युलोक की स्त्रियाँ निरन्तर नल का चिन्तन करती रहती थीं। इस लिए जब वे आँखें बन्द कर लेती थीं या निमेष के कारण पलकें बन्द हो जाती थीं तब उस थोड़े से समय में भी नल के दर्शन से वञ्चित नहीं होती थीं. क्योंकि मन में बसाये हुए उसके रूप को देखा करती थीं। कोई भी व्यक्ति जिस वस्तु या व्यक्ति का निरन्तर चिन्तन करता रहता है या देखता रहता है। नेत्रों से उसका अदर्शन हो जाने पर भी बुद्धिस्थ रूप का दर्शन होता रहता है।

न का निशि स्वप्नगतं ददर्श तं जगाद गोत्रस्खलिते च का न तम्।
तदात्मताध्यातधवा रते च का चकार वा न स्वमनोभवोद्भवम्।। 30 ।।

सरलार्थ-

किस स्त्री ने रात्रि में उस नल को स्वप्न में नहीं देखा? अर्थात् सभी ने देखा। किस स्त्री ने अपने पति का नाम स्खलित हो जाने पर उस राजा का नाम नहीं लिया? अर्थात् सभी ने लिया। उस राजा नल के रूप में पति का ध्यान करने वाली किस स्त्री ने रतिकाल

में अपने काम की उत्पत्ति नहीं की? अर्थात् सभी ने की। इस पद्य में दर्शनादि के असम्बन्ध में सम्बन्ध की कल्पना करने से अतिशयोक्ति अलंकार है।

भावार्थ –

किस स्त्री ने रात में उस नल को स्वप्न में नहीं देखा, किसने अपने पति के नाम के बदले नल का नाम नहीं लिया और किस स्त्री ने संभोग काल में नल रूप में अपने पति का ध्यान करके अपने काम को नहीं प्रकट किया? अर्थात् सभी स्त्रियों ने नल का सतत चिन्तन करने के कारण उसको रात में स्वप्न में देखा, पति के बदले उसका नाम लिया तथा संभोग काल मेंपति के रूप में उसका ध्यान करके अपने काम को प्रकट किया। परन्तु यह सब कार्य पतिव्रता स्त्रियों को छोड़कर अन्य स्त्रियों ने किया। क्योंकि पतिव्रता स्त्रियों के द्वारा पर पुरुष का दर्शन और चिन्तन दोनों वजित है। इसका यह भी अर्थ हो सकता है कि पतिव्रता स्त्रियों को छोड़कर किस मुग्धा स्त्री ने नल को स्वप्न में नहीं देखा अर्थात् सभी ने देखा, किस मध्या नायिका ने गोत्र- स्खलन अर्थात् पति के नाम के स्थान पर भ्रम वश अन्य पुरुष का उच्चारणं होने से नल का उच्चारण नहीं किया अर्थात् सभी ने किया और नल रूप से पति का ध्यानं करने बानी किसे प्रगल्भा स्त्री ने रति काल में अपने काम की उत्पत्ति नहीं की अर्थात् सभी ने की। नल का स्वप्न दर्शन, नामोच्चारण तथा पति के रूप में ध्यान करना उसके सतत चिन्तन के कारण सम्भव है ।

स्वयं आकलन कीजिए –

अभ्यास प्रश्न 2

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए –

1. किसके वक्षस्थल की शोभा नगर के द्वार के किवाड़ स्वरूप मानी है?
2. किसके नेत्रों के द्वारा कमल को जीत लिया गया है?
3. राजा नल की शोभा किस देव के समान है?
4. मन्मथविभ्रम पद के कितने अर्थ माने है?
5. सभी स्त्रियों के मन को किसने आकर्षित किया है?

14.5 सारांश

इस इकाई में राजा नल के स्वरूप को चित्रित किया गया है। जिसमें राजा नल को भूमण्डल की प्रदक्षिणा कर शत्रुओं का संहार करने के उपरान्त विजय रूपी आरती से सुशोभित होकर उन्होंने सम्पूर्ण धरा पर एक छत्रित राज किया। उनके राज्य में इतियों को अभाव था जिसके कारण से उनकी प्रजा धन-धान्य से परिपूर्ण थी। उस राज नल के

प्रताप और यश के कारण कवि ने सूर्य और चन्द्रमा की कीर्ति को भी निकृष्ट चित्रित किया है।

14.6 कठिन शब्दावली

मेरु:=सुमेरु पर्वत	सिंधु=समुन्द्र
पटीयान=कार्य कुशल	वेधसा=ब्राह्मणा
जगज्जयं=लोकविजयं	वपु:=शरीरं
घृणा=जुगुप्सा	शैशवशेषवान=बाल्यावशेष युक्त
उर:श्रिया=वक्ष:स्थल सम्पत्या	सरोरुहं=कमलं

14.7 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न -1	1. दो भाग	2. नल को	3. ब्रह्म ने
	4. ब्रह्म को	5. नल	
अभ्यास प्रश्न- 2	1. नल की	2. नल	3. कामदेव
	4. दो	5. नल ने	

14.8 सहायक ग्रन्थ

1. नैषधचरितमहाकाव्यम् (प्रथम सर्ग) श्रीहर्ष, व्याख्याकार: डॉ- सुरेन्द्र देव शास्त्री, चौखम्बा संस्कृत सीरीज वाराणसी।
2. नैषधचरितमहाकाव्यम् (प्रथम सर्ग) श्रीहर्ष, व्याख्याकार: डॉ- देवनारायण मिश्र, साहित्य भण्डार सुभाष बाजार मेरठ।
3. संस्कृत साहित्य का इतिहास, बलदेव उपाध्याय, शारदा निकेतन वाराणसी।
4. संस्कृत साहित्य कोश, राजवंश सहाय हीरा, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

14.9 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. श्री हर्ष के प्रकृति चित्रण पर एक निबन्ध लिखिए।
2. निम्नलिखित पद्यों की व्याख्या कीजिये-
   प्रथमसर्ग- 20, 21, 23, 28
3. निम्नलिखित सूक्तियों की व्याख्या कीजिये-
   दिनेश्वरश्रीरुदयं दिने दिने। 1/17
   न शारदः पार्विकशर्वरीश्वरः। 1/20

पञ्चदश अध्याय

इकाई-15

नैषधीयचरित : प्रथम सर्ग (पद्य 31-45)

संरचना

15.1 प्रस्तावना

15.2 उद्देश्य

15.3 नैषधीयचरित महाकाव्य के प्रथम सर्ग के 31-40 पद्यों का सरलार्थ

- स्वयं आकलन अभ्यास प्रश्न - 1

.4 नैषधीयचरित महाकाव्य के प्रथम सर्ग के 41-45 पद्यों का सरलार्थ

- स्वयं आकलन अभ्यास प्रश्न -2

15.5 सारांश

15.6 कठिन शब्दावली

15.7 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

15.8 सहायक ग्रन्थ

15.9 अभ्यास के लिए प्रश्न

15.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों, इस इकाई में नैषधीयचरित के प्रथम सर्ग के 31-45 पद्यों का अलंकार सहित अध्ययन किया जायेगा। इसमें राजा भीम पुत्री दमयन्ती के अनुपम सौन्दर्य का वर्णन प्रस्तुत किया जायेगा। उस दमयन्ती की शोभा को कवि ने तीनों लोकों जीतने वाला बताया गया है, जिसके कारण राजा नल उसकी ओर आकृष्ट होते हैं। दमयन्ती की सखियों के द्वारा राजानल के शौर्य का चित्रण होने से वह भी राजा नल की ओर आकर्षित होने लग जाती है जिसका वर्णन इस इकाई में किया जायेगा।

15.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जानने में सक्षम होंगे-

- नैषधीयचरित के प्रथम सर्ग के पद्यों का सरलार्थ।
- नैषधीयचरित में प्रयुक्त अलंकारों के वर्णन भी भी सक्षम हो जायेंगे।
- नैषधीयचरित में प्रयुक्त सूक्तियों को समझने में सक्षम हो जायेंगे।
- प्रथम सर्ग की व्याख्या करने में भी निपुण हो जायेंगे।

15.3 नैषधीयचरित महाकाव्य के प्रथम सर्ग के 31-40 पद्यों का सरलार्थ

श्रियास्य योग्याहमिति स्वमीक्षितुं करे तमालोक्य सुरूपया धृतः।

विहाय भैमीमपदर्पया कया नदर्पणः श्वासमलीमसः कृतः।। 31 ।।

सरलार्थ-

उस नल को देखकर सौन्दर्य की दृष्टि से मैं इस नल के योग्य हूँ, इस प्रकार अपने को देखने के लिए हाथ में लिया हुआ दर्पण दमयन्ती को छोड़कर किस रूपवती के द्वारा अभिमान रहित होकर साँसों से मलिन नहीं किया गया। इस पद्य में सभी स्त्रियाँ नल की चेष्टा करने लगी, इस प्रकार असम्बन्ध में सम्बन्ध की स्थापना होने से अतिशयोक्ति अलंकार है।

भावार्थ-

दमयन्ती के अतिरिक्त अन्य सभी स्त्रियाँ नल के अयोग्य हैं, इसआशय का वर्णन करता हुआ कवि कहता है कि नल के सौन्दर्य से आकृष्ट होकर संसार की सभी सुन्दरियाँ उसको प्राप्त करने की कामना रखती थीं। अतः सभी सुरूपवती स्त्रियाँ हाथ में दर्पण लेकर अपने सौन्दर्य को निहारती थीं- यह जानने के लिए कि वे नल के योग्य हैं अथवा नहीं। परन्तु जब अपने को नल के अयोग्य पाती थीं, तो उनका सारा सौन्दर्याभिमान चूर हो जाता था और अपते निःश्वास से दर्पण को मलिन कर देती थीं। केवल दमयन्ती ही ऐसी थी जिसके मन में इस प्रकार का आत्महीनता का भाव नहीं पैदा हुआ।

यथोह्यमानः खलु भोग भोजिना प्रसह्य वैरोचनिजस्य पत्तनम्।
विदर्भजाया मदनस्तथा मनोऽनलावरुद्धं वयसेव वेशितः।। 32 ।।

सरलार्थ-

जिस प्रकार सर्पभक्षी गरुड़ के द्वारा ढोये जाते हुए प्रद्युम्न को बाणासुर के अग्नि से घिरे हुए नगर में बलपूर्वक प्रवेश कराया गया, उसी प्रकार सुख भोगने वाली युवावस्था के द्वारा ढोया जाता हुआ काम दमयन्ती के नल में आसक्त मन में बलपूर्वक प्रवेश कराया गया। इस पद्य में यथोह्यमानः और मनोऽनलावरुद्धम् में शब्द श्लेष तथा भोगभोजिना आदि में अर्थ श्लेष है।

भावार्थ-

पौराणिक कथा- वलि के पुत्र बाणासुर की पुत्री उषा ने कृष्ण के पौत्र एवं प्रद्युम्न के पुत्र अनिरुद्ध को एक रात स्वप्न में देखा। जागने पर उसने स्वप्न वृत्तान्त अपनी सखी चित्रलेखा को बताया। चित्रलेखा ने अपने योग बल से अनिरुद्ध को लाकर उपा के साथ संगम करा दिया। यह वृत्तान्त बाणासुर को ज्ञात हुआ, तब वह कुपित होकर अनिरुद्ध को बँधवा दिया। कुछ समय बाद नारद मुनि से बाणासुर द्वार। अनिरुद्ध को रोके जाने का समाचार कृष्ण को मिला। तब श्रीकृष्ण, बलराम तथा प्रद्युम्न गरुड पर सवार होकर

बाणासुर के नगरी में पहुंचे और बाणासुर को पराजित कर पद्युम्न को मुक्त कराया। इस कथा का वर्णन विष्णु पुराण में है। श्लोक से सम्बद्ध उद्धरण इस प्रकार है-

ततो गरुडमारुह्य स्मृतिमात्रगतं हरिः ।

बलप्रद्युम्न सहितो बाणस्य प्रययो पुरीस् ॥ (विष्णुपुराण)

उपर्युक्त कथा के सन्दर्भ में श्लोक का आशय है कि जैसे सर्पपक्षी गरुण पर सवार होकर अग्नि से घिरी बाणासुर की नगरी शोणितपुर में प्रवेश किया वैसे ही दमयन्ती भोग विलासकारी यौवन को प्राप्त हुई कथा प्रसङ्गों में बन्दिचारणादि से सुनकर तथा चित्र में देखकर नल के प्रति आकृष्ट हुईऔर उस नलाक्रान्त दमयन्ती के मन में कामभाव ने प्रवेश किया।

नृपेनुरूपसम्पदां दिदेश तस्मिन् बहुशः श्रुतिं गते।

विशिष्य सा भीमनरेन्द्र नन्दना मनोभवाज्ञैक वशंवदं मनः।। 33 ।।

सरलार्थ-

उस राजा भीम पुत्री दमयन्ती ने अनेक बार अपने रूप सौन्दर्य के अनुरूप सुने गए उस नल के प्रति काम के वशीभूत अपने मन को विशेष रूप से लगा दिया। इस पद्य में अनुप्रास अलंकार है।

भावार्थ –

नृपेन्द्र भीम की पुत्री दमयन्ती चारण वन्दी आदि के मुख से तथा कथा प्रसङ्गों में नल के सौन्दर्य का गुणगान सुना करती थी। जिसके अनुसार उसने राजा नल को अपनी रूप सम्पत्ति के अनुरूप समझा और उसका मन नल के प्रति काम के वशीभूत हो गया ।

उपासनामेत्य पितुः स्मरज्यते दिने दिने सावरेषु वन्दिनाम्।

पठत्सु तेषु प्रतिभूपतीनलं विनिद्ररोमाजनि शृण्वतीनलम्।। 34 ।।

सरलार्थ-

वह दमयन्ती प्रतिदिन अपने पिता की सेवा में उपस्थित होकर वन्दियों के (नृपस्तुति)अवसरों पर अनुरक्त होती थी। उनमें प्रत्येक राजाओं की स्तुति करने पर नल (की स्तुति) को सुनती हुई अत्यधिक रोमाञ्चित हो उठती थी।

भावार्थ-

दमयन्ती प्रतिदिन पिता की सेवा के व्याज से सभा में उपस्थित रहती थी और राजाओं की स्तुति के समय अनुरक्त हो जाती थी। जब नल की स्तुति की जाने लगती थी, तब उसके विषय में सुनकर दमयन्ती बहुत अधिक रोमांचित हो जाती थी।

कथा प्रसङ्गेषु मिथः सखीमुखात् तृणोपि तन्व्या नलनामनि श्रुते।

द्रुतं विधूयान्यदभूयता नया मुदा तदाकर्णनसज्जकर्णया।। 35 ।।

सरलार्थ-

पारस्परिक वार्त्तालाप के प्रसगों में सखी के मुख से नल नामक तृण के विषय में सुनकर तुरन्त वह दमयन्ती अन्य सभी कार्य को छोड़कर हर्ष से उसको सुनने में कान लगा देती थी। इस पद्य में अतिशयोक्ति अलंकार है।

भावार्थ-

दमयन्ती की सखियाँ जब आपस में वार्तालाप करते समय कभी 'नल' नामक तृण का नाम ले लेती थीं। तो वह उस नल शब्द को सुनकर यही सोचती थी कि वे सखियाँ उसके प्रियतम राजा नल के विषय में ही बात कर रही हैं और तुरन्त अन्य सारे काम छोड़करसांवधान होकर उस चर्चा को ही सुनने लगती थी।

स्मरात्परासोरनिमेषलोचनाद् विभेमितद्भिन्नमुदाहरेति सा।
जनेन यूनः स्तुवता तदास्पदे निदर्शनं नैषधमभ्यषेचयत्।। 36 ।।

सरलार्थ-

मृत (अतःएव) निमेषरहित नेत्रें वाले कामदेव से मैं डरती हूँ। अतः उससे भिन्न कोई उदाहरण प्रस्तुत करो, ऐसा कहकर उस दमयन्ती ने युवकों की स्तुति करने वाले लोगोके द्वारा कामदेव के स्थान पर नल को अभिषिक्त कराया। इस पद्य में मृत कामदेव को भय का हेतु बताने से काव्यलिगं अलंकार है।

भावार्थ-

कामदेव देव योनि का होने से निमेपहीन है। उसकी पलकें नहीं गिरती हैं। शंकर जी के द्वारा भस्म कर दिये जाने से वह मरा हुआ भी है। मरे हुए व्यक्ति की भी आंखें निमेषहीन होती हैं। अतः जब कोई सखी या वन्दी युवकों की प्रशंसा करते समय कामदेव की उपमा देता है, तब दमयन्ती कहती है 'कि कामदेव की आँखें निमेषहीन हैं तथा वह मरा हुआं है, इसलिए मुझे डर लगता है । कामदेव के स्थान पर कोई दूसरा उदाहरण दो' । कामदेव के समान किसी दूसरे व्यक्ति के न होने से लोग नल की उपमा देते थे । इस प्रकार दमयन्ती ने लोक विश्रुत दृष्टान्त कामदेव के स्थान पर राजा नल को अभिषिक्त करा दिया । लोक में भी जब कोई व्यक्ति मर जाता है तब उन्हीं गुणों से सम्पन्न किसी दूसरे व्यक्ति को उसका उत्तराधिकारी बनाया जाता है।

नलस्य पृष्टा निषधामतागुणान् मिषेण दूतद्विजवन्दिचारणा।
निपीय तत्कीर्ति कथामथानया चिराय तस्थे विमनायमानया।। 37 ।।

सरलार्थ-

निषध देश से आए हुए दूतों, ब्राह्मणों, वन्दियों तथा चारणों से किसी बहाने से नल के गुणों के विषय में पूछती थी और उसकी यशोगाथा को सुनकर बहुत देर तक वह उदास मन वाली अथवा प्रसन्न मन वाली हो जाती थी। इस पद्य में भावोदय नामक अलंकार है।

भावार्थ –

निषध देश से जब कोई भी दूत, ब्राह्मण, वन्दी अथवा चारण आता था, तब वह (दमयन्ती) उससे किसी बहाने से अनेकों प्रश्न करती थी-उस देश का राजा कौन है? उसमें कौन-कौन से गुण हैं? वह प्रजापालन कैसा करता है? इत्यादि। उन दूतों आदि के द्वारा बताए गये नल की कीतिकथा और गुणों को सुनकर वह सोचती थी कि ऐसे सद्‌गुण सम्पन्न तथा यशस्वी राजा क़ो मैं कैसे प्राप्त कर सकूंगी? इस भावना से वह बहुत देर तक उदास रहती थी अथवा यह सोचकर कि 'ऐसे महान् राजा के प्रति मेरा अनुराग हुआ है, जिसे पाकर मैं कृतकृत्य हो जाऊँगी।बहुत देर तक आनन्दित होती थी।

प्रियं प्रियां च त्रिजगज्जयिश्रियौ लिखाधिलीला गृहभित्तिकावपि।

इति स्म सा कारुतरेण लेखितं नलस्य च स्वस्य च सख्यमीक्षते।। 38 ।।

सरलार्थ-

वह दमयन्ती तीनों लोकों को जीतने वाली शोभा से युक्त किसी प्रेमी और प्रेमिका को विलासगृह की दीवार पर लिखो अर्थात् चित्रित करो, ऐसा कहने पर चित्रकार द्वारा लिखे गए अपने तथा नल के रूप साम्य को देखा करती थी।

भावार्थ –

प्रियतम के विषय में बात-चीत करना, उनका चित्र देखना स्वप्न में देखना और स्वप्न की बातें करना विरहिणियों के मनोविनोद के उपाय होते हैं। अतः प्रियतम नल के चित्र दर्शन की अभिलाषा से वह चित्रकारों से कहती है कि 'लीलागृह की भित्ति पर संसार के सबसे सुन्दर किसी प्रेमी-प्रेमिका का चित्र बनाओ'। तत्र चित्रकारों के द्वारा स्वाभाविक है नल और दमयन्ती का चित्र बना दिया जाता था, जिसे वह देखा करती थी और दोनों के सौन्दर्य की समानता को देखकर मुग्ध होती थी।

मनोरथेन स्वपतीकृतं नलं निशि क्व सा न स्वपती स्म पश्यति।

अदृष्टमप्यर्थमदृष्टवैभवात् करोतिसुप्तिर्जन दर्शनातिथिम्।। 39 ।।

सरलार्थ-

सोती हुई उस दमयन्ती ने स्वेच्छा से पति बनाए हुए उस नल को किस रात में नहीं देखा? अर्थात् सभी रात्रियों को देखा करती थी। क्योंकि भाग्यवश स्वप्न पहले न देखे गए पदार्थ को भी मनुष्यों की दृष्टि का अतिथि बना देता है। इस पद्य में पूर्वार्द्ध विशेष का उत्तरार्द्ध सामान्य के साथ समर्थन होने से अर्थान्तरन्यास अलंकार है।

भावार्थ –

नल का सतत चिन्तन करने वाली तथा अपनी इच्छा से उसको पति मान लेने वाली दमयन्ती जब भी रात में सोती थी, तब उसको स्वप्न मेंदेखती थी। यद्यपि दमयन्ती ने नल का कभी प्रत्यक्ष दर्शन नहीं किया है तथाधि चित्रादि में उसको देखा है। पूर्व जन्मों के संस्कार से कभी न देखी हुई वस्तु भी स्वप्न में दिखाई पड़ जाती है, तो दमयन्ती ने तो चित्र में देखा भी है। अतः उसके द्वारा नल को स्वप्न में देखना कोई अनुचित नहीं है।

निमीलितादक्षि युगाच्च निद्रया हृदोऽपि बाह्येन्द्रिय मौनमुद्रितात्।

अदशिरा संगोप्य कदाप्यवीक्षितो रहस्यमस्याः स महन्महीपतिः।। 40 ।।

सरलार्थ-

निद्रा ने, बन्द हुए दोनों नेत्रें से तथा बाह्येन्द्रिय के अपने विषय को ग्रहण करने में मौन हो जाने से बन्द हृदय से भी छिपाकर कभी भी न देखे गये अति रहस्य रूप महाराज नल को उस दमयन्ती के लिए दिखा दिया।

भावार्थ –

जिस प्रकार किसी अद्भुत रहस्य को कोई आप्त व्यक्ति अन्यलोगों से छिपाकर अपने अभीष्टतम व्यक्ति को दिखा देता है अथवा जिस प्रकार सुचतुरा दूती किसी नायक को दूसरे से छिपाकर नायिका के लिए दिखा देती है, उसी प्रकार कभी न देखे गये अतएव रहस्यभूत उस प्रसिद्धतम राजा नल को निद्रा ने अधि और हृदय से भी छिपाकर दमयन्ती के लिए दिखा दिया। अर्थात् दमयन्ती ने नल को स्वप्न में देखा। निद्रा की अवस्था में सभी बाह्यन्द्रियाँ व्यापार शून्य होती हैं। बाह्यन्द्रियों से ज्ञान का अर्जक उभयेन्द्रिय मन भी व्यायाम शून्य हो जाता है अतएव हृदय से छिपाकर नल के दर्शन की बात कही गई है। अर्थात् उसका बाह्य सम्पर्क टूट गया है। कुछ व्याख्याकारों ने सुषुप्ति में नल के दर्शन के प्रश्न को लेकर बहुत लम्बा चौड़ा समाधान दिया है, परन्तु उसका औचित्य नहीं प्रतीत होता है। नल का दर्शन स्वप्नावस्था में ही हुआ, जो व्यावहारिक और प्रासङ्गिक है।

स्वयं आकलन कीजिए –

अभ्यास प्रश्न 1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए –

1. इस महाकाव्य में सर्पभक्षी किसे कहा है?
2. दमयन्ती के पिता कौन थे?
3. किनकी वार्ता को सुनकर दमयन्ती सभी कार्य छोड़ कर हर्ष से वार्ता सुनती है?
4. नल किस देश का राजा था?
5. तीनों लोको को जीतने वाली शोभा से युक्त कौन है?

15.4 नैषधीयचरित महाकाव्य के प्रथम सर्ग के 41-45 पद्यों का सरलार्थ

अहो अहोर्भिमहिमा हिमागमेऽप्यतिप्रपेदे प्रति तां स्मरार्दिताम्।
तपर्तुपूर्ताविपि मेदसां भरा विभावरीभिर्बिभरांबभूविरे।। 41 ।।

सरलार्थ-

आश्चर्य है कि उस काम पीड़ित उस दमयन्ती के लिए हेमन्त टृतु के दिन बड़े होने लगे तथा ग्रीष्मटृतु पूर्णता पर भी राते बड़ी होने लगी। इस पद्य में हेमन्त और ग्रीष्म रूप कारणों के होने पर भी दिन और रात्रियों का लघु न होना रूप कार्य का अभाव है, अतः विशेषोक्ति अलंकार है।

भावार्थ-

कष्टके क्षण हमेशा बड़े होते हैं और विरहणियों के लिए जा सद्यः-पातिप्रणयिहृदया होती हैं। उनके लिए तो एक-एक क्षण एक वर्ष के समान और एक दिन एक गग के समान लगता है। यह आश्चर्य है कि विरहिणी उस दमयन्ती के लिए हेमन्त ऋतु में भी दिन बड़े हो रहे थे और श्रीष्म ऋतु में राते चड़ी हो रही थीं। जबकि स्वाभाविकता इसके विपरीत है। ग्रीष्म में रातें और हेमन्त में दिन छोटे होते हैं। परन्तु नल के विरह की वियोगिनी दमयन्ती के लिए एक पल भी बड़ा लग रहा था।

स्वकान्तिकीत्तिर्व्रजमौक्तिकस्त्रजः श्रयन्तमन्तर्घटनागुणश्रियम्।
कदाचिदस्यायुवधैर्यलोपिनं नलोापि लोकाद शृणोद्गुणोत्करम्।। 42 ।।

सरलार्थ-

राजा नल ने भी किसी समय युवको के धैर्य को नष्टकरने वाले तथा सौन्दर्य विषयक कीर्ति समूह रूप मोतियों की माला के बीच गुँथने वाले सूत्र की शोभा को धारण करने वाले उस (दमयन्ती)के गुण समूह को लोगों से सुना। इस पद्य में कीर्त्तिव्रज में मौक्तिकड्डुज का तथा गुणोत्कर में गुणश्री (गुम्फन सूत्र की शोभा) का आरोप किए जाने से रूपक अलंकार है।

भावार्थ –

राजा नल ने दमयन्ती के अप्रतिम सौन्दर्य को लोगों के द्वारा सुना। उसका सौन्दयं युवकों के धैर्य को नष्ट करने वाला था। उसके सौन्दर्य से उत्पन्न कीति समूह मोतियों की माला के समान थी और उसके बीच गुथे हुए सूत्र के समान उसके गुण थे। सौन्दर्य कीति के शुभ्र होने से उसमें मोती की कल्पना की गई है। मोतियों की माला के बीच के धागे के समान दमयन्ती के गुण थे, वे गल के चित्त में माला के समान गुम्फित हो गये।

तमेवलब्ध्वावसरं ततः स्मरः शरीरशोभाजयजातमत्सरः।
अमोघशक्त्या निजयेव मूर्तया तया विनिर्जेतुमियेष नैषधम्।। 43 ।।

सरलार्थ-

तदनन्तर शारीरिक सौन्दर्य के जीत लिए जाने से द्वैष युक्त कामदेव ने अवसर को प्राप्त करके अपनी मूर्तिमती अमोघ शक्ति के समान उस (दमयन्ती) के द्वारा नल को जीतने की इच्छा की। इस पद्य में कामदेव ने मानों दमयन्ती रूपी अपनी अमोघशक्ति से उस नल को जीतने की इच्छा की, इस सम्भावना से उत्प्रेक्षा अलंकार है।

भावार्थ-

नल ने अपनी शारीरिक शोभा से कामदेव को पराजित कर दिया था। अतः कामदेव उचित अवसर की प्रतीक्षा में था। जब दमयन्ती रूप अमोघशक्ति उसको प्राप्त हुई। तब पहले के द्वेष भाव की प्रतिकार की भावना से वह नल को जीतने की इच्छा की। क्योंकि दमयन्ती का सौन्दयं युव धैर्यलोपी था। अतः कामदेव का यह अस्त्र निष्फल नहीं हो सकता था। लोक में भी कोई व्यक्ति किसी प्रबल व्यक्ति से पराजित होकर उसके साथ द्वेष करता हुआ अवसर पाकर अपनी अचूक शक्ति से उसे पराजित करने की इच्छा करता है।

अकारि तेन श्रवणातिथिर्गुणः क्षमाभुजा भीमनृपात्मजाश्रितः।
तदुच्चधैर्यव्ययसंहितेषुणा स्मरेण च स्वात्मशरासनाश्रयः।। 44 ।।

सरलार्थ-

उस राजा नल ने राजा भीम की पुत्री के आश्रित सौन्दर्यादि गुणों को कान का अतिथि बनाया तथा उस राजा नल के अत्यधिक धैर्य को नष्ट करने के लिए कामदेव के द्वारा अपने धनुष पर आश्रित प्रत्यञ्चा को श्रवण का अतिथि बनाया गया अर्थात् कामदेव ने धनुष की डोर को कान तक खींचा। इस पद्य में पूर्वार्द्ध सम्बन्धी वाक्यार्थ के प्रति उत्तरार्द्ध का वाच्यार्थ हेतु है। अतः काव्यलिगं अलंकार है।

भावार्थ –

राजा नल ने दमयन्ती के सौन्दर्यादि गुणों को जब सुना, तब उसका धैर्य नष्ट हो गया। वह काम के वशीभूत हो गया। क्योंकि कामदेव ने अपनी धनुष पर प्रत्यञ्चा को चढ़ाकर और उस पर दमयन्ती के गुण रूपी बाण को रखकर कानों तक खींच कर प्रहार किया था। अतः अमोघ प्रहार से नल का धैर्य टूट गया और काम से पीड़ित हो उठा।

अमुष्य धीरस्य जयाय साहसी तदा खलु ज्यां विशिखैस्सनाथयन्।
निमज्जयामास यशांसि संशये स्मरस्त्रिलोकीविजयार्जितान्यपि।। 45 ।।

सरलार्थ-

उस समय निश्चय ही उस धैर्यशाली नल को जीतने के लिए धनुष की प्रत्यञ्चा को बाणों से युक्त करते हुए साहसी कामदेव ने तीनों लोकों की विजय से प्राप्त अपने यश को सन्देह में डाल दिया। इस पद्य में कामदेव के मन में नल की जीत के विषय में संशय न होने पर भी उसका सम्बन्ध प्रदर्शित किया है अतः अतिशयोक्ति अलंकार है।

भावार्य –

राजा नल एक अप्रतिम धैर्यशाली महापुरुष था। कामदेव ने तीनों लोकों को जीत कर अपार यश अजित किया था। निश्चय ही कानदेव ने नल को जीतने के लिए जो बाण सन्धान किया, उससे उसका यश ही खतरे में पड़ गया। कामदेव का यह कार्य एक साहस पूर्व कार्य था। यदि वह नल को नहीं जीत सका तो उसका सम्पूर्ण यप्र नष्ट हो जायगा । किसी महान् शत्रु की वास्तुविक शक्ति को जाने बिना युद्ध के लिए उयंत हो जाना विवेक हीनता है। अतः उस माहमी कामदेव ने अपने यश को संशय में डाल दिया । तथापिउसने सफलता के लिए प्रत्यञ्चा पर अनेक बाणों को एक साथ ही रख दिया । बह जानता था कि धीर नल को एक बाण से जीतना सर्वथा असम्भव है।

स्वयं आकलन कीजिए –

अभ्यास प्रश्न 2

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए –

1. किसके लिए हेमन्त ऋतु के दिन बड़े और ग्रीष्म ऋतु की रातें बड़ी होने लगी?
2. युवकों के धैर्य को नष्ट करने वाला सौन्दर्य किसका है?
3. किसने मूर्तिमती अमोघ शक्ति के कारण दमयन्ती के द्वारा नल को जीतने की इच्छा की थी?
4. राजा नल के धैर्य को नष्ट करने का प्रयास किसने किया था?
5. राजा नल ने किसे अपना अतिथि बनाया था?

15.5 सारांश

इस इकाई में नल के सौन्दर्य से आकर्षित दमयन्ती की सखियाँ वार्तालाप् करती है। उनकी वार्ता को सुनकर दमयन्ती भी नल के विषय में सोचने लगती है। नल के शौर्य और सौन्दर्य के विषय में दमयन्ती सोचकर उस की ओर आकर्षित होती है। राजा भीम की पुत्री दमयन्ती के सौन्दर्य का वर्णन भी इस इकाई में किया गया है। उसके सौन्दर्य को कवि ने तीनों लोकों की शोभा से युक्त प्रस्तुत किया है।

15.6 कठिन शब्दावली

नीराजनया = आरती से।

पार्विकशर्वरीश्वरः = पूर्णिमा का चन्द्रमा।

अनागसे = अपराध के अभाव के लिए।

तदास्पदे = उसके स्थान पर।

इयेष = इच्छा करना, चाहना।

हयस्य = घोड़े के।

नासीरगते = सेना के अग्रभाग में स्थित।

चिकुराः = बाल, केश।

महीयस=अत्यधिक।

विनिद्ररोमा = रोमाचिंत।

कारुतरेण = चित्रकार के द्वारा।

निह्नोतुम् = छिपाने के लिए।

अवधीर्य = छोड़कर।

15.7 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न -1	1. गरुड़	2. राजा भीम	3. सखी की
	4. निषध देश	5. दमयन्ती	
अभ्यास प्रश्न -2	1. दमयन्ती	2. दमयन्ती का	3. कामदेव
	4. कामदेव ने	5. राजा भीम को	

15.8 सहायक ग्रन्थ

1. नैषधचरितमहाकाव्यम् (प्रथम सर्ग) श्रीहर्ष, व्याख्याकार: डॉ- सुरेन्द्र देव शास्त्री, चौखम्बा संस्कृत सीरीज वाराणसी।
2. नैषधचरितमहाकाव्यम् (प्रथम सर्ग) श्रीहर्ष, व्याख्याकार: डॉ- देवनारायण मिश्र, साहित्य भण्डार सुभाष बाजार मेरठ।
3. संस्कृत साहित्य का इतिहास, बलदेव उपाध्याय, शारदा निकेतन वाराणसी।
4. संस्कृत साहित्य कोश, राजवंश सहाय हीरा, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

15.9 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. नैषधं विद्वदौषधम् इस कथन की समीक्षा कीजिए।
2. निम्नलिखित पद्यों की व्याख्या कीजिये-
   प्रथमसर्ग- 31, 32, 35, 36, 37, 38, 40, 42, 45
3. निम्नलिखित सूक्तियों की व्याख्या कीजिये-
   नदर्पणः श्वासमलीमसः कृतः। 1/31
   अदृष्टमप्यर्थमदृष्टवैभवात् करोतिसुप्तिर्जन दर्शनातिथिम्। 1/39

षोडश अध्याय
इकाई-16
नैषधीयचरित : प्रथम सर्ग (पद्य 46-60)

संरचना

16.1 प्रस्तावना

16.2 उद्देश्य

16.3 नैषधीयचरित महाकाव्य के प्रथम सर्ग के 46-52 पद्यों का सरलार्थ
- स्वयं आकलन कीजिए

16.4 नैषधीयचरित महाकाव्य के प्रथम सर्ग के 53-60 पद्यों का सरलार्थ
- स्वयं आकलन कीजिए

16.5 सारांश

16.6 कठिन शब्दावली

16.7 स्वयं आंकलन प्रश्नों के उत्तर

16.8 सहायक ग्रन्थ

16.9 अभ्यास के लिए प्रश्न

16.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों, इस इकाई में राजा नल द्वारा राजा भीम को अतिथि रूप में स्वागत करते हुए दर्शाया गया है। वहीं दूसरी ओर राजा नल के शौर्य से द्वेषभाव रखने वाले कामदेव द्वारा दमयन्ती को जीतने की इच्छा का भी वर्णन भी इस इकाई में किया जायेगा। इसमें कामदेव के द्वारा नल पर अपने बाणों से प्रहार करते हुए चित्रित किया गया है जिसके कारण से राजा नल दमयन्ती की ओर आसक्त होकर उसके विरह की चिन्ता के कारण एकान्त देश में जाने की इच्छा प्रकट करने की बात इस इकाई में कही गई है।

16.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जानने में सक्षम होंगे-

- नैषधीयचरित के प्रथम सर्ग के पद्यों का सरलार्थ।
- नैषधीयचरित में प्रयुक्त अलंकारों के वर्णन भी भी सक्षम हो जायेंगे।
- नैषधीयचरित में प्रयुक्त सूक्तियों को समझने में सक्षम हो जायेंगे।
- प्रथम सर्ग की व्याख्या करने में भी निपुण हो जायेंगे।

16.3 नैषधीयचरित महाकाव्य के प्रथम सर्ग के 46-52 पद्यों का सरलार्थ

अनेन भैमीं घटयिष्यतस्तथा विधेरबन्ध्येच्छतया व्यलासि तत्।
अभेदि तत्तादृगनङ्गमार्गणैर्यदस्य पौष्पैरपि धैर्यकच्चुकम्।। 46 ।।

सरलार्थ-

इस नल का उस प्रकार का प्रसिद्ध धैर्यरूपी कच्चुक पुष्पों से बने हुए कामदेव के बाणों से विदीर्ण कर दिया तो वह नल के साथ दमयन्ती को मिलाने वाले ब्रह्मा के दृढ़ संकल्प का ही विलास था। इस पद्य में कामदेव के पुष्प के बाणों ने नल के धैर्यरूपी कवच को विदीर्ण कर दिया। पुष्पों से कवच का विरोधाभास है। परन्तु धैर्य का कवच होना तथा विधि की इच्छा का विलास विरोध परिहार के कारण है। इसलिए विरोधाभास अलंकार है तथा धैर्य में कच्चुक के रूप का आरोप होने से रूपक अलंकार भी है।

भावार्थ-

नल का धैर्य कञ्चुक इतना दुर्भेद्य था कि उसका शत्रुओं के कठोरतम वाण भी भेदन नहीं कर पाये। परन्तु धैर्य रूपी कवच को गरीरहीन योद्धा कामदेव के अत्यन्त कोमल फूल के बाणों ने छिन्न-भिन्त्र कर दिया। इस अघटित घटना में ऐसा प्रतीत होता है कि ब्रह्मा ने दमयन्ती का इन्द्रादि देवों को छोड़कर नत्र से ही संगम कराने का उद्देश्य ही नल के धैर्य को नष्ट करना या । अन्यया दगवन्नी का संगम इन्द्रादि दियालों में कराते। अथवा दमगन्ती के प्रति अगुरुक्त होने में भी कामवीदिन नन का धैर्य नष्ट होता। अत सिद्ध होता है कि विधि की इच्छा बड़ी प्रवास होनी है, उसे कोई टाल नहीं सकता है।

किमन्यदद्यापि यदस्त्रतापितः पितामहो वारिजमाश्रयत्यहो।
स्मरं तनुच्छायतया तमात्मना शशाक शङ्के स न लङ्घितुं नलः।। 47 ।।

सरलार्थ-

और क्या? आश्चर्य है जिसके अस्त्रें से संतप्त ब्रह्मा आज भी कमल का सहारा लिये हुए हैं, उस कामदेव का वह नल अपने शरीर की छाया होने के कारण अतिक्रमण नहीं कर सका, ऐसा मैं मानता हूँ। इस पद्य में कामदेव का अतिक्रमण करने में ब्रह्मा भी असमर्थ थे तो नल का क्या कहना? इस रूप में अर्थापत्ति अलंकार है।

भावार्थ-

जो कामदेव अतिशय बूढे वृद्ध को अपने पिता के पिता को अथवा ब्रह्मा को भी इतना अधिक संतप्त किया कि बहुत समय के व्यतीत होने पर भी वे आज सन्तापनिवारक शीतल कमल पर निवास कर रहे हैं, ऐसा कामदेव नल को संतप्त नहीं करेगा, यह कैसे हो सकता है ? अथवा जो कामदेव ब्रह्मा या अपने पितामइ को भी संताल कर सकता है, बह नल को क्यों नहीं संतप्त करेगा ? नस तीनों लोग में सर्वाधिक सुन्दर है। कामदेव तो उम

नल की परछाई मात्र है। अतएव नल मम्पूर्ण संसार का अतिक्रमणकरने के बाद भी अपनी परछाई रूप काम का अतिक्रमण नहीं कर सके। लोक में कोई भी व्यक्ति अपनी परछाई को कब लाँच सका है? अपने शरीर की छाया सभी के लिए अनुलंध्य होती है। अथवा अपने से कम सौन्दर्य वाले काम को वह नल नहीं लाँघ सके अर्थात् जीत ही लिये।

उरोभुवा कुम्भयुगेन जृम्भितं नवोपहारेण वयस्कृतेन किम्।

त्रपासरिद्दुर्गमपि प्रतीर्य सा नलस्य तन्वी हृदयं विवेश यत्।। 48 ।।

सरलार्थ-

उस कृशाग्र (दमयन्ती)ने लज्जारूपी नदी के दुर्ग को पार करके जो नल के हृदय में प्रवेश किया था, तो क्या वह युवावस्था द्वारा दिये गए नवीन उपहार रूप वक्षस्थल पर उत्पन्न हुए दोनों स्तनरूपी कलशों का विलास था। इस पद्य में त्रपासरिद्दुर्गम् में रूपक अलंकार है।

भावार्थ-

जिस प्रकार कोई व्यक्ति दो कलशों को अपनी छाती से लगा कर उसी के सहारे भीषण नदीं को भी पार कर अपने अभीष्ट स्थान को पहुँच जाता है, उसी प्रकार मानो कृशाङ्गी दमयन्ती भी अपने छाती पर उभरे हुए दो कुच कलशों की सहायता में अपनी या नल की लज्जा रूपेणी नदी के उच्चतम प्रकार को पार करके नल के हृदय में प्रवेश कर गई। उसके स्तनद्वय उसकी युवावस्था द्वारा प्रदत्त नवीन उपहार थे, जिनकी महिमा के कारण वह लज्जा का त्याग करके नल के हृदय में प्रविष्ट हुई।।

अपह्नुवानस्य जनाय यन्निजामधीरतामस्य कृतं मनोभुवा।

अबोधि तज्जागर दुःखसाक्षिणी निशा च शय्या च शशाङ्ककोमला।। 49 ।।

सरलार्थ-

अपनी अधीरता या व्याकुलता को लोगों से छिपाने वाले नल के साथ कामदेव ने जो कुछ किया था, उसे जागरण के दुःख के साक्षीभूत मृग के क्रोड के समान कोमल शय्या तथा रात ही जानती थी। इस पद्य में शशाङ्क कोमला में उपमा अलंकार है।

भावार्थ

दमयन्ती के वियोग से दुखी वह नल अपनी अधीरता को लोगों से छिपाने का प्रयास करता रहा। अतः अन्य कोई व्यक्ति उसके दुःख को नहीं जान सका। परन्तु उसे रात भर नींद नहीं आती थी। अतः मृग विशेष की गोद के समान प्रयवा चन्द्रमा के समान गुत्र तथा कोमल शय्या और चाँदनी राहें तो उसकी अधीरता की जानडी ही थी। उनसे नहीं छिपा सका। कोमल विस्तर पर रात भर जागा करता था, इस लिए ये दोनों ही उसके दुःख के साक्षी थे।

स्मरोपतप्तोपि भृशं न स प्रभुर्विदर्भराजं तनयामयाचत्

त्यजन्त्यसूय्शर्म च मानिनो वरं त्यजन्ति न त्वेकमयाचितव्रतम्।। 50 ।।

सरलार्थ-

अत्यधिक काम सन्तप्त होने पर उस राजा नल ने विदर्भराज से उसकी पुत्री को नहीं माँगा। स्वाभिमानी लोग प्राण और सुख का भले ही त्याग कर देते हैं, परन्तु एक मात्र अयाचित व्रत को नहीं त्यागते हैं। इस पद्य में उत्तरार्द्ध के वाक्यार्थ रूप सामान्य द्वारा पूर्वार्द्ध के वाक्यार्थ रूप विशेष के साथ समर्थन होने से अर्थान्तरन्यास अलंकार है।

भावार्थ-

राजा नल अत्यधिक काम पीडित होकर येन केन प्रकारेण अपना समय यापन करता रहा, परन्तु विदर्भ के राजा भीम से उनकी पुत्री दमयन्ती की याचना नहीं की। यद्यपि राजा नल सर्वगुण सम्पन्न महाप्रतापी एवं शील सौन्दर्य युक्त था, यदि वह दमयन्ती की याचना करता तो भीम उसे प्रसन्नता पूर्वक दमयन्ती हो देता। परन्तु राजा नल ने ऐसा नहीं किया, क्योंकि वह एक स्वाभिमानी रात वा और स्वाभिमानी पुरुष प्राण और सुद्ध दोनों को छोड़ देते हैं, लेकिन किती से कोई वस्तु मांगते नहीं है। अथवा प्राणों को सुखपूर्वक त्याग देते हैं, परन्तु अयाचता के व्रत को नहीं त्यागते हैं।

मृषाविषादाभिनयादयं क्वचिज्जुगोप निःश्वासततिं वियोगजाम्।

विलेपनस्याधिकचन्द्रभागताविभावनाच्चापललाप पाण्डुताम्।। 51 ।।

सरलार्थ-

इस नल ने वियोग से उत्पन्न आहों की परम्परा को किसी वस्तु के विषय में झूठे दुःख के अभिनय से छिपाया और पाण्डुता को कपूर के अधिक अंश हो जाने की कल्पना से छिपाया। इस पद्य में वास्तविकता को अन्य बहाने से छिपाने के कारण व्याजोक्ति अलंकार है।

भावार्थ-

दमयन्ती की वियोगजन्य पीड़ा से नल अत्यन्त दुःखी था, वह लम्बी आहें लेता था परन्तु उन्हें छिपाने के लिए 'शिव-शिव' आदि करके या किसी अन्य विषय सम्बन्धी दुःख प्रदर्शित करके अपने वास्तविक कष्ट को छिपाया करता था। शरीर में पाण्डुता आ गई थी। इस पाण्डुता को वह लेपन में कपूर के अधिक हो जाने का बहाना करता था। इस प्रकार वह दमयन्ती के विरजन्य सन्ताप को सभी से छिपाता रहा।

शशाक निह्नोतुमयेन तत्प्रियामयं बभाषे यदलीकवीक्षिताम्।

समाज एवालपितासु वैणिकैर्मुमूर्च्छयत्पंचममुर्च्छनासु।। 52 ।।

सरलार्थ-

यह नल जो मिथ्यारूप में देखी गई प्रिया (दमयन्ती)से बोला और वीणा वादकों के द्वारा पञ्चम मूर्च्छना के अलाप किये जाने पर समाज (सभा) में ही मूचिर्छत हो गया, उसे भाग्य से छिपाने में समर्थ हुआ। इस पद्य में अनुप्रास अलंकार है।

भावार्थ-

नल का दमयन्ती के प्रति इतना अधिक अनुराग था कि उसे चारों ओर दमयन्ती ही दृष्टिगोवर होती थी। इसीलिए वह मिथ्या दृष्ट प्रियासे बोला और तभी वीणा वादकों ने पञ्चम मूर्च्छा का जलाप किया, जिसे सुनकर वह सभा में मूच्छित हो गया। इस प्रकार उसका सम्भाषण और मूर्च्छा भी भाग्यवश छिप गई अर्थात् लोगों ने यही इसे पञ्चम मूर्च्छंना का प्रभाव समझा । यह संयोग ही था दोनों घटना एक साथ ही घटित हुई। अथवा 'अयम् अलीकवीक्षिताम् प्रियाम् अये इति बभाषे तत् निह्नोतुं न शशाक' वह नल जब मिध्यादृष्ट प्रिया से ऐसा कहा, तो उसे छिपाने में समर्थ नहीं हुआ ? अर्थात् छिपा ही लिए। अबत्रा- 'समाज एव मुमुच्छ' ऐसा अन्वय करने पर अर्थ होगा कि नल द्वारा प्रिया से बोलने और मूच्छित होने के समय पञ्चम मूच्छेना के अलाप करने पर सारा समाज (सम्पूर्ण सभा) मूच्छित हो गया । अतः नल का बोलना या मूच्छित होना कोई देख नहीं सका । अथवा 'अये (कामाय) निलोतुं न शशाक' समाज के मूच्छित हो जाने पर कामदेव से (अये) छिपाने में समर्थ नहीं हुआ। अर्थात् कामदेव ने तो नल के उक्त सम्भाषण को सुन ही लिया।

स्वयं आकलन कीजिए –

अभ्यास प्रश्न 1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए –

1. राजा नल पर कामदेव ने कौन सा बाण चलाया था?
2. त्रपासरिद्दुर्गम शब्द में कौन सा अलंकार है?
3. दमयन्ती किस देश की राजकुमारी थी?
4. किसने अपने दुख को अभिनय से छुपाने का प्रयास किया था?
5. वीणा वादकों के द्वारा कितनी मुर्च्छना का अलाप किया गया?

16.4 नैषधीयचरित महाकाव्य के प्रथम सर्ग के 53-60 पद्यों का सरलार्थ

अवाप सापत्रपतां स भूपतिर्जितेन्द्रियाणां धुरि कीर्तितस्थितिः।
असंवरे शम्बरवैरिविक्रमे क्रमेण तत्र स्फुटतामुपेयुषि।। 53 ।।

सरलार्थ-

जितेन्द्रियों में सबसे पहले अपनी कीर्ति को स्थापित करने वाले वह राजा नल वहाँ सभा में न छिपाये जा सकने वाले कामदेव के पराक्रम के स्पष्ट हो जाने पर लज्जा को प्राप्त हुए। इस पद्य में अनुप्रास अलंकार है।

भावार्थ-

राजा नल जितेन्द्रियों में अग्रणी थे। फिर भी काम के वशीभूत होकर कामजन्य विकार पाण्डुता, चपला, मूर्च्छा आदि को नहीं छिपा सके। क्योंकि काम विकार अगोप्य होता है। बहुत समय तक उसे छिपाया नहीं जा सकता है। जब राजा नल का काम विकार स्पष्ट होकर सभा में अन्य लोगों को ज्ञात हो गया तो वे बहुत लज्जित हुए।

अयं नलं रोद्धुममी किलाभवन् गुणा विवेकप्रभवा न चापलम्।
स्मरः स रत्यामनिरुद्धमेव यत्सृजत्यय सर्गनिसर्ग ईदृशः।। 54 ।।

सरलार्थ-

ये विवेक से उत्पन्न गुण भी नल को चञ्चलता से रोकने में समर्थ नहीं हुआ। यह सृष्टि का स्वभाव है कि वह कामदेव रति से अनिरुद्ध को ही उत्पन्न करता है। अथवा अनुराग होने पर चञ्चलता को जन्म देता है। इस पद्य के पूर्वार्द्ध में वर्णित वाक्यार्थ सामान्य का उत्तरार्द्ध में वणिर्त वाक्यार्थ विशेष द्वारा समर्थन किये जाने से अर्थान्तरन्यास अलंकार है।

भावार्थ –

राजा नल त्याज्य और ग्राह्य आदि विवेक तथा धैर्य आदि गुणों से युक्त था, फिर भी कामदेव के प्रभाव से वह चञ्चल हो उठा। उन्माद, मूर्च्छा आदि से युक्त हो गया। वस्तुतः यह सृष्टि का नियम है कि रति अर्थात् अनुराग होने पर कामदेव चञ्चलता का जन्म देता है। अथवा कामदेव रति काल में चञ्चलता का जन्म देता है। अथवा कामदेव 'रति' नाम को अपनी पत्नी में अतिरुद्ध नामक पुत्र का जन्म देता है। अनिरुद्ध कामदेव के पुत्र का नाम है। इस प्रकार विवेकादि गुण युक्त भी नल दमयन्ती के विरजन्य काम पीड़ा से अतिशय चञ्चन हो उठा।

अनघचिह्न न विना शशाक नो यदासितुं संसदि यत्नवानपि।
क्षणं तदारामविहारकैतवान्निषेवितुं देशमियेष निर्जनम्।। 55 ।।

सरलार्थ-

जब वह राजा नल प्रयत्न करने पर भी बिना काम चिह्न के क्षणभर भी सभा में नहीं रह सके, तब उद्यान में भ्रमण क बहाने एकान्त देश में रहने की इच्छा की। इस पद्य में उद्यान भ्रमण के बहाने से एकान्त वास की इच्छा करने से अपह्नुति अलंकार है।

भावार्थ –

राजा नल काम जन्य पाण्डुता, कृशता, उन्माद आदि लक्षणों को सभा में लोगों से छिपा सकने में असमर्थ हो गये। तब उन्होंने उद्यान में विहार का बहाना करके एकान्त स्थान में कुछ समय व्यतीत करने की इच्छा व्यक्त की।

अथ श्रिया भर्त्सितमत्स्यलाच्छनः सम वयस्यैः स्वरहस्यवेदिभिः।

पुरोपकण्ठोपवनं किलेक्षिता दिदेश यानायं निदेशकारिणः।। 56 ।।

सरलार्थ-

इसके पश्चात् सौन्दर्य से कामदेव को तिरस्कृत करने वाले अपने रहस्य को जानने वाले मित्रें के साथ नगर के निकट के उद्यान को देखने वाले (नल ने) सेवकों को वाहन लाने का आदेश दिया। इस पद्य में सहोक्ति अलंकार है।

भावार्थ-

उद्यान-विहाराचं इच्छा करने के बाद काम पीड़ित होकर भी अपनी शारीरिक शोभा से कामदेव को तिरस्कृत करने वाले राजा नल उन मित्रों के साथ नगर के निकट के उपवन में जाने की इच्छा से नौकरों को सवारी लाने के लिए आदेश दिया, जो मित्र यह जानते थे कि राजा नल विहार के लिए उद्यान नहीं जा रहे हैं, अपितु काम के चिह्नों को छिपाने के लिए जा रहे हैं।

अमी ततस्तस्य विभूषितं सितं जवे{पि माने{पि च पौरुषाधिकम्।

उपाहरन्नश्वमजड्डचंचलैः खुराञ्चलैः क्षोदितमन्दुरोदरम्।। 57 ।।

सरलार्थ-

तदनन्तर वह भृत्य लोग अलंकारों से विभूषित, श्वेतवर्ण वाले, वेग तथा प्रमाण में भी पुरुषों से ऊँचे और निरन्तर चञ्चल खुराग्र भागों से अश्वशाला के मध्य भाग को चूणिर्त करने वाले नल के अश्व को ले आए। इस पद्य में त्, स्, अपि, ञ्चलैः तथा द् र् की आवृत्ति होने से अनुप्रास अलंकार है।

भावार्थ-

नौकरों ने राजा नल के लिए जो पोड़ा लाकर प्रस्तुत किया, यह अलंकारों से सुसज्जित, शुत्र वर्ण का, अत्यधिक तीव्रगति वाला, पुरुष में भी अधिक ऊँचा या। वह निरन्तर अपने खुर से घुड़साल की फर्म खोदता रहता था ।

अथान्तरेणावटुगामिनाध्वना निशीथिनीनाथमहः सहोदरैः।

निगालगाद्देवमणेरिवोत्थितैर्विराजितं केसरकेशरश्मिभिः।। 58 ।।

सरलार्थ-

तत्पश्चात् गलप्रदेशस्थ देवमणि कण्ठ के बीच में स्थित गर्दन के ऊपरी प्रदेश की ओर जाते हुए मार्ग से निकले हुए तथा चन्द्रमा की किरणों के समान केसर के बालों की

किरणों से शोभित अश्व पर सवार हुए। इस पद्य में निशीथिनीनाथमहः सहोदरैः में बालों की उपमा चन्द्र किरणों से दी गई है, अतः उपमा है।

भावार्थ-

सेवकों द्वारा जो घोड़ा लाया गया उसके गले के पिछले भाग की ओर जाने वाले मार्ग से होकर गल प्रदेश में एक देवमणि विद्यमान अर्थात् बालों की भौरी विद्यमान थी, मानो उसी देवर्माण से निकले हुए और चन्द्रमा को किरणों के सहृण केसर के बालों की किरणों से वह घोड़ा सुशोभित था। उसी घोड़े पर राजा नल गवार हुए ।

अजड्डभूमीतटकुट्टनोत्थितै रूपास्यमानं चरणेषुरेणुभिः।

रयप्रकर्षाध्ययनार्थमागतैर्जनस्य चेतोभिरिवाणिमाङ्कितैः।। 59 ।।

सरलार्थ-

निरन्तर भूतल के कूटने से उठी हुई धूलि के द्वारा मानों वेग के उत्कर्ष को अध्ययन करने के लिए आए हुए, अणुत्व युक्त लोगों के अन्तःकरण के द्वारा सेवित चरण वाले अश्व पर नल सवार हुए। इस पद्य में स्वाभावोक्ति अलंकार है।

भावार्थ –

अत्यधिक वेग से चलते हुए घोड़े के खुर से धूलि खुद रही थी, जो उसके पैरों में लिपटी हुई थी। अतः ऐसा प्रतीत हो रहा था मानो घोड़े के अधिक वेग को पढ़ने के लिए मनुष्यों के चिंत्त आये हुए हैं और शिष्य रूप में विनीत भाव से उसके उरणों की उपासना में लगे हुए हैं। मन का परिमाण अणु के समान होता है। अतएव धूलि कण में मन की सम्भावना की गई है। इस प्रकार आशय हुआ कि मनुष्य मन से अधिक वेगवान् घोड़े पर राजा नल सवार हुए।

चलाचलप्रोथतया महीभृते स्ववेगदर्पानिव वक्तुमुत्सुकम्।

अलं गिरा वेद किलायमाशयं स्वयं हयस्येति च मौनमास्थितम्।। 60 ।।

सरलार्थ-

चलायमान नासापुट के होने से राजा नल से अपने वेग के गर्व को कहने के लिए उत्सुक हुए से वाणी से मत कहो, यह स्वयं अपनं घोड़े के वेग को जानते हैं, यह सोचकर मौन धारण किण् हुए अश्व पर राजा नल सवार हुए। इस पद्य में अश्व मानों नल से कुछ कहना चाहता है, इव यहाँ सम्भावना अर्थ में है, अतः उत्प्रेक्षा अलंकार है।

भावार्थ –

राजा नल का चञ्चल घोड़ा बार-बार अपने नथुनों को फुला रहा था, जिससे ऐसा प्रतीत होता था कि मानो यह अपने तीव्रगामिता के गर्व को कहना चाहता है, परन्तु पुनः

यह सोच कर कि इनसे वाणी से कहना ठीक नहीं है, अपने घोड़े के आशय को ये बिना कहे ही जानते हैं', वह घोड़ा चुप बड़ा रहता है।

स्वयं आकलन कीजिए –

अभ्यास प्रश्न 2

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए –

1. जितेंद्रियों में सबसे पहले किसने अपनी कीर्ति स्थापित की थी?
2. कौन रति से अनिरुद्ध को उत्पन्न करता है?
3. किसने एकांत देश में रहने की इच्छा प्रकट की थी?
4. नल के अश्व का वर्ण कैसा था?
5. राजा नल के अश्व के केश किसकी किरणों के समान शोभित थे?

16.5 सारांश

इस इकाई में दमयन्ती के वियोग की पीड़ा से दुखी नल का वर्णन किया गया है। नल का दमयन्ती के प्रति इतना अधिक अनुराग था कि उसे चारों ओर दमयन्ती ही दिखाई देती थी। राजा नल यद्यपि जितेन्द्रियों में अग्रणी थे, फिर भी कामके वशीभूत होकर वह अपनी पीड़ा को छुपाने में असमर्थ प्रकट किए गए है। यही इस इकाई का सारांश है।

16.6 कठिन शब्दावली

भैमीं=दमयन्ती — तन्वी=कृशाङ्गी

विवेश=प्रविष्टवती — मनोभूवा=कामदेव

शशाङ्गकोमला=चंद्र के समान कोमल — तनयां=पुत्री

मृषाविषाद=मिथ्या ज्ञान — वैणिके=बीन बजाने वाला

निर्जनं=लोगों से रहित — सितं=सफेद वर्ण

खुराञ्चलै:=खुरो का अग्रभाग

16.7 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न -1	1. धैर्यरूपी कञ्चुक पुष्प	2. रुपक
	3. विदर्भ देश	4. नल ने
	5. पञ्चम	
अभ्यास प्रश्न -2	1. राजा नल	2. कामदेव
	3. नल ने	4. श्वेत

5. चंद्रमा की किरणों

16.8 सहायक ग्रन्थ

1. नैषधचरितमहाकाव्यम् (प्रथम सर्ग) श्रीहर्ष, व्याख्याकार: डॉ. सुरेन्द्र देव शास्त्री, चौखम्बा संस्कृत सीरीज वाराणसी।
2. नैषधचरितमहाकाव्यम् (प्रथम सर्ग) श्रीहर्ष, व्याख्याकार: डॉ. देवनारायण मिश्र, साहित्य भण्डार सुभाष बाजार मेरठ।
3. संस्कृत साहित्य का इतिहास, बलदेव उपाध्याय, शारदा निकेतन वाराणसी।
4. संस्कृत साहित्य कोश, राजवंश सहाय हीरा, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

16.9 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. श्री हर्ष के काव्य-सौन्दर्य की समीक्षा कीजिए।
2. निम्नलिखित पद्यों की व्याख्या कीजिये-
   प्रथमसर्ग- 46, 48, 50, 52, 54, 56, 58, 59
3. निम्नलिखित सूक्तियों की व्याख्या कीजिये-
   शशांक शङ्के स न लङ्घितुं नलः। 1/47
   त्यजन्ति न त्वेकमयाचितव्रतम्। 1/50
   विभावनाच्चापललाप पाण्डुताम्। 1/51
   अनङ्ग चिह्नं न विना शशाक नो। 1/55

सप्तदश अध्याय

इकाई-17

नैषधीयचरित : प्रथम सर्ग (पद्य 61-75)

संरचना

17.1 प्रस्तावना

17.2 उद्देश्य

17.3 नैषधीयचरित महाकाव्य के प्रथम सर्ग के 61-66 पद्यों का सरलार्थ

- स्वयं आकलन अभ्यास प्रश्न - 1

17.4 नैषधीयचरित महाकाव्य के प्रथम सर्ग के 67-75 पद्यों का सरलार्थ

- स्वयं आकलन अभ्यास प्रश्न - 2

17.5 सारांश

17.6 कठिन शब्दावली

17.7 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

17.8 सहायक ग्रन्थ

17.9 अभ्यास के लिए प्रश्न

17.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों, इस इकाई में नैषधीयचरित के प्रथम सर्ग के 61-75 पद्यों का अलंकार सहित विवेचन किया जायेगा। इसमें राजा नल के अश्व का को सौन्दर्य का वर्णन किया गया है। राजा नल का अश्व को अत्यधिक वेग से युक्त चित्रित करने का प्रयास किया गया है।

17.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जानने में सक्षम होंगे-

- नैषधीयचरित के प्रथम सर्ग के पद्यों का सरलार्थ।
- नैषधीयचरित में प्रयुक्त अलंकारों के वर्णन भी भी सक्षम हो जायेंगे।
- नैषधीयचरित में प्रयुक्त सूक्तियों को समझने में सक्षम हो जायेंगे।
- प्रथम सर्ग की व्याख्या करने में भी निपुण हो जायेंगे।

17.3 नैषधीयचरित महाकाव्य के प्रथम सर्ग के 61-66 पद्यों का सरलार्थ

महारथस्याध्वनिचक्रवर्तिनः परानपेक्षोद्वहनाद्यशः सितम्।

रदावदातांशु मिषादनीदृशां हसनतमन्तर्बलमर्वतां रवेः।। 61 ।।

सरलार्थ-

महारथी एवं चक्रवर्ती राजा नल के मार्ग में दूसरों की अपेक्षा के बिना वहन करने के कारण उत्पन्न यश से शुभ्र तथा दाँतों की स्वच्छ किरणों के बहाने सूर्य के ऐसे यश से रहित घोड़ों के अन्तर्बल की हँसी उड़ाते हुए घोड़े पर नल सवार हुए। इस पद्य में मानों नल का अश्व सूर्य के अश्वों का उपहास कर रहा हो ऐसी सम्भावना से उत्प्रेक्षा अलंकार है।

भावार्थ-

दस हजार धनुर्धारियों से युद्ध करता हुआ सारथी और घोड़े की रक्षा करने वाला शास्त्र में प्रवीण योद्धा महारथ कहलाता है।महारथी एवं चक्रवर्ती राजा नल का घोड़ा शुभ्र वर्ण का था और अकेले ही बिना किसी दूसरे की सहायता के वह नल को होता था। उसके दाँतों से चमकदार किरणें निकल रही थीं। जबकि महारथी और चक्रवर्ती सूर्य के अनेक (सात) घोड़े हरितवर्ण के हैं और एक पहिये बाला रथ खींचते हैं। अतः यशोहीन हैं। इस प्रकार आकाश मार्ग में, दो पहिये वाला रथ बिना किसी दूसरे की सहायता के अकेले ही खींचने के कारण उत्पन्न यश से नल का घोड़ा शुभ्र वर्ण है और आकाश मार्ग में सात घोड़े मिलकर एक-दूसरे की सहायता से एक पहिये वाले सूर्य के रथ को ढोने वाले घोड़े यशोहीन होने के कारण हरे रंग के हैं। अतः नल का घोड़ा मानो अपनी इस शुभ्रता और दाँतों की स्वच्छ चमक से सूर्य के घोड़ों का उपहास कर रहा था। ऐसे घोड़े पर नल सवार हुए।

सितत्विषेश्चचलतामुपेयुषो मिषेण पुच्छस्य च केसरस्य च।
स्फुटां चलञ्चामरयुग्मचिह्ननैरनिह्नुवान निजवाजिराजताम्।। 62 ।।

सरलार्थ-

श्वेतकान्ति वाली तथा चंचलता को प्राप्त पूँछ और गर्दन के बालों के बहाने चलायमान दो चामर रूपी चिह्नों से प्रसिद्ध अपनी अश्वराजता को प्रकट करने वाले अश्व पर राजा नल सवार हुए। इस पद्य में श्वेत अश्व के केसर और पूँछ के सम्बन्ध में कवि ने उत्प्रेक्षा की है मानों पूँछ और केसर के बहाने से घोड़े ने अश्वराजता के चिह्न के रूप में दो चामर धारण कर रखे हो।

भावार्थ-

जिस प्रकार किसी राजा के उभय पार्श्व में दो चामर डुलाए जाते हैं, उसी प्रकार नल के घोड़े की नीचे लटकने वाली सफेद पंछ बौर गरदन के सफेद बाल बामर के रूप में हिल रहे थे, जिससे प्रतीत होता था कि यह सश्वराज है। ऐसे घोड़े पर नल सवार हुए ।

अपि द्विजिह्नाभ्यवहारपौरुषे मुखानुषक्तायतवल्गुवल्गया।
उपेयिवांसं प्रतिमल्लतां रयस्मये जितस्य प्रसभं गरुत्मतः।। 63 ।।

सरलार्थ-

अति वेग के गर्व में बलपूर्वक जीते गये गरुड़ से मुख में लगी हुई लम्बी और सुन्दर लगाम से सर्प भक्षण के पुरुषार्थ में भी प्रतिद्वन्दिता को प्राप्त करने वाले अश्व पर नल सवार हुए। इस पद्य में भी अश्व के मुख में लगाम के विषय में कवि ने उत्प्रेक्षा की है मानों वेग में हराये हुए गरुड़ को अब यह अश्व सर्पों के भक्षण में भी हराने के लिये लगाम के बहाने से सर्पों को ही खा रहा है।

भावार्थ-

घोड़े ने तीव्र वेग में तो गरुड़ को पहले ही जीत लिया था, परन्तु गरुड़ का दूसरा पौरुष्य है सर्प भक्षण अर्थात् वह सपों को खा जाता है। उस घोड़े के मुख में जो सुन्दर और लम्बी लगाम की रस्सी पड़ी हुई है, वह सर्पाकार है। अतः ऐसा प्रतीत होता है कि मानो वह घोड़ा उस लगाम के बहाने सर्प खाने की प्रतिद्वन्दिता में भी गरुड़ को जीतना चाहता है। भाव हुआ कि घोड़े के मुख की लगाम की दोनों रस्तियों दो साँप के समान प्रतीत्त हो रही थी।

स सिन्धुजं शीतमहः सहोदरं हरन्तमुच्चैः श्रवसः श्रियं हयम्।
जिताखिलक्ष्माभृदनल्पलोचनस्तमारुरोह क्षितिपाकशासनः।। 64 ।।

सरलार्थ-

समुद्र से उत्पन्न तथा चन्द्रमा के सहोदर उच्चैःश्रवा की शोभा को जीतने वाले सिन्धु देश में उत्पन्न तथा चन्द्रमा के समान शुभ्र घोड़े पर सम्पूर्ण पर्वतों के विजेता पृथ्वी पर इन्द्र के समान सम्पूर्ण राजाओं के विजेता राजा नल सवार हुए। इस पद्य में उपमा अलंकार है।

भावार्थ-

उच्चैःश्रवा घोड़ा और चन्द्रमा दोनों ही समुद्र से उत्पन्न हैं,अतः सहोदर हैं। एतावता समुद्र से उत्पन्न तथा चन्द्र भ्राता उच्चैः श्रवा की शोभा को सिन्धु देश में उत्पन्न तथा चन्द्रमा के समान धवल नल के घोड़े ने नपनी शोभा से मात कर दिया था। सिन्धु देश में उत्पन्न घोड़े उच्चकोटि के माने जाते हैं। इन्द्र ने समस्त पर्वतों के पंख काट करके उनको पराजित कर दिया था, अतः नल ने सम्पूर्ण राजाओं को पराजित कर दिया था। इन्द्र ना बहुत से नेत्रों वाले थे और नल विशाल नेत्रों वाले थे। इस प्रकार राजा नल पृथिवी के इन्द्र थे। जो उस घोड़े पर सवार हुए। सारांश हुआ- समुद्रोत्पन्न चन्द्रमा के सहोदर उच्चैः श्रवा पर सर्व पर्वत विजेता सहस्त्र नेत्र इन्द्र के समान सिन्धु देशोत्पन्न, चन्द्रमा के समान श्वेत वर्ण उच्चैः श्रवा की शोभा बाले उस घोड़े पर सर्वभूपति विजेता विशाल भयन भूपति नल सवार ले हुए।

निजामयूखा इव तीक्ष्णदीधितं स्फुटारविन्दाङ्कितपाणिपङ्कजम्।
तमष्ठववारा जवनाश्वयायिनं प्रकाशरूपा मनुजेशमन्वयु।। 65 ।।

सरलार्थ-

विकसित कमल से चिह्नित करकमल वाले तथा तीव्र वेग वाले घोड़े से चलने वाले सूर्य के पीछे जिस प्रकार प्रकाशरूप अपनी किरणें चलती हैं, उसी प्रकार (रेखा रूप) विकसित कमल से चिह्नित करकमल वाले तीव्र घोड़े से चलने वाले उस मनुजेश्वर (नल) के पीछे अपने घुड़सवार चलने लगे। इस पद्य में नल की सूर्य से समानता होने से उपमा अलंकार है।

भावार्थ-

जिस प्रकार खिले हुए कमल से युक्त करकमल वाला सूर्य अपने तीव्र गामी घोड़े से जब चलता है, तब प्रकाश रूप किरणें उसके पीछे-पीछे चलती हैं, उसी प्रकार कमल की रेखा से चिह्नित कर कमल वाला नल बंपने तीव्रगति वाले धोरे में जब चला तच उस राजा के पीछे-पीछे उसके घुड़सवार भी चल पड़े ।

चलन्नलङ्कृत्य महारयं हयं स्ववाहवाहोचितवेष पेशलः।
प्रमोदनिष्पन्दतराक्षितपक्ष्मभिर्व्यलोकि लोकैर्नगरालयैर्नलः।। 66 ।।

सरलार्थ-

घुड़सवार योग्य वेष से मनोहर तथा तीव्र वेग वाले घोड़े को अलंकृत करके चलते हुए नल को अत्यधिक हर्ष के कारण निर्निमेष नेत्रें के पलकों वाले नगरनिवासी लोगों ने देखा। इस पद्य में वृत्यनुप्रास अलंकार है।

भावार्थ –

राजा नल अपने चढ़ने से उस घोड़े को अलङ्कत किये और स्वयं अश्वारोही योग्य वेषभूषा धारण किये हुए थे, जिसके कारणं वे और भी अधिक मनोहर लग रहे थे । ऐसे जाते हुए नल को अत्यधिक हर्ष के साथ वहाँ के मगरनि वासियों ने निनिमेष दृष्टि से देखा।"

स्वयं आकलन कीजिए –

अभ्यास प्रश्न 1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए –

1. राजा नल के अश्व का वेग किसके समान था?
2. समुन्द्र मंथन से किस अश्व की प्राप्ति हुई थी?
3. इन्द्र के समान सम्पूर्ण राजाओं का विजेता कौन था?
4. मनुजेश्वर किसकी संज्ञा है?
5. निशीथिनीनाथमह: शब्द में किसकी उपमा की गई है?

17.4 नैषधीयचरित महाकाव्य के प्रथम सर्ग के 67-77 पद्यों का सरलार्थ

क्षणादथैष क्षणदापतिप्रभः प्रभय्जनाध्येयजवेन वाजिना।

सहैव ताभिर्जनदृष्टिवृष्टिभिर्बहिः पुरोऽभूत् पुरुहूत पौरुषः।। 67 ।।

सरलार्थ-

इसके पश्चात् चन्द्रमा के समान कान्ति वाले तथा इन्द्र के समान पराक्रम वाले व हनल वायु से अध्ययन करने योग्य वेग वाले घोड़े से नागरिकों की दृष्टि-वृष्टि के साथ (देखते-देखते) ही क्षणमात्र में नगर से बाहर हो गये। इस पद्य में क्षणदापतिप्रभः तथा पुरुहूत पौरुषः में उपमा अलंकार है।

भावार्थ-

राजा नल निशापति चन्द्रमा के समान आह्लादक और रमणीय थे। वे पराक्रम में शतक्रतु इन्द्र के समान थे। उनके घोड़े की गति इतनी तेज थी, कि वायु भी उसमे शिक्षा ग्रहण कर सकती थी। ऐसे राजा नल को तोव्रगामी घोड़े पर सवार होकर नगर से बाहर जाते हुए यहाँ लोग हुर्ष और आरचयं के माय देख ही रहे थे कि वे क्षण भर में नगर से बाहर हो गये।

ततः प्रतीच्छ प्रहरेतिभाषिणी परस्परोल्लासितशल्यपल्लवे।

मृषामृधं सादिबले कुतूहलान्नलस्य नासीरगते वितेनतुः।। 68 ।।

सरलार्थ-

इसके पश्चात् 'पकड़ों' 'मारो' ऐसा कहते हुए सेना के अग्रभाग में स्थित, एक दूसरे पर भाले की नोक ताने हुए नल के घुड़सवारों के दो दल कौतूहलवश मिथ्या युद्ध का प्रदर्शन करने लगे।

भावार्थ –

नगर से बाहर निकलने के बाद, जो अश्वारोही सैनिक सेना के आगे-आगे चल रहे थे, दो दो टुकड़ियों में विभक्त हो गये और 'पकड़ो' 'मारो' ऐसा कहते हुए तथा एक दूसरे पर भाले की नोक ताने हुए युद्ध का झूठा प्रदर्शन करने लगे ।

प्रयातुमसमाकमियं कियत्पदं धरातदम्भोधिरपि स्थलायताम्।

इतीव वाहैर्निजवेगदर्पितैः पयोधिरोधक्षममुद्धतं रजः।। 69 ।।

सरलार्थ-

हम सभी लोगों के चलने के लिए यह पृथ्वी कितने कदम होगी, इसलिए यह समुद्र भी स्थल हो जाय, मानों ऐसा विचार कर अपने वेग पर गर्व करने वाले घोड़ों ने समुद्र को पाटने में समर्थ धूलि उड़ाई। इस पद्य में सम्भावना व्यक्त होने से उत्प्रेक्षा अलंकार है।

भावार्थ –

अत्यन्त वेग से चलने वाले घोड़ों ने यह सोचा कि उनके चलने के लिये पृथ्वी बहुत छोटी है। यदि समुद्र भी स्थस हो जाय तो उनको चलने के लिये पर्याप्त अवकाश प्राप्त हो जायेगा। अपनी गति पर गर्व करने वाले उन घोड़ों ने समुद्र को पाटने के लिये धूलि उड़ाना आरम्भ कर दिया।

हरेर्यदक्रामि पदैककेन खं पदैश्चतुर्भिः क्रमेण{पित स्य नः।

त्रपा हरीणामिति नम्रितराननैर्न्यवर्ति तैरर्धनभःकृतक्रमैः।। 70 ।।

सरलार्थ-

जिस आकाश को विष्णु के एक पैर ने लाँघा था, उस आकाश को चार पैरों से लाँघने में भीह हम घोड़ों के लिए लज्जा की बात है मानों ऐसा सोचकर मुँह नीचा किए हुए वह घोड़े आकाश में पैर का आधा उठाये हुए निवृत्त हो गये। इस पद्य में उत्प्रेक्षा अलंकार है।

भावार्थ-

नल की सेना के घोड़े या नल का घोड़ा अपनी कला बाजी में बागे के दोनों पैर आकाश में उठा लिये और कुछ देर तक स्थिर रहे। कवि ने इसी दृश्य को उत्प्रेक्षित किया। पहले तो घोड़ों ने आकाण आक्रान्त करनाचाहा, परन्तु बाद में यह सोचकर कि 'इसी आकाश को तो विष्णु ने एक ही पैर से आक्रान्त कर लिया है. वे इस कार्य से विख हो गये क्योंकि जिल आकाश को हरि (विष्णु) ने एक ही पैर से आक्रान्त दिया, उसे चारों पैरों से आक्रान्त करना हरियों (थोंडों) के लिये लज्जा की बात है। अतः वे सिर झुका लिये और उसका विचार त्याग दिये। लोक में भी यह देखा जाता है कि किसी व्यक्ति के द्वारा लघु उपाय से किया गया कोई कार्य यदि दूसरे व्यक्ति के द्वारा वही कार्य गुरु उपाय से किया जाता है, तो वह उसके लघुता, को प्रदर्शित करता है तथा अपयश का कारण बनता है। अतः गुरु उपाय से उस कार्य को करने का विचार ही छोड़ देता है।

चमूचरास्तस्य नृपस्य सादिनो जिनोक्तिषु श्राद्धतयेवसैन्धवाः।

विहारदेशं तमवाप्य मण्डलीमकारयन्भूरितुरङ्गमानपि।। 71 ।।

सरलार्थ-

उस राज नल के सैनिक घुड़सवारों ने जिनके वचनों में श्रद्धा रखने के कारण सिन्धु देशज जैनियों के समान उस विहार देश में पहुँचकर बहुत से घोड़ों को भी मण्डलाकार खड़ा कराया।

कहने का अभिप्राय यह है कि जिस प्रकार जिन के वचनों अर्थात् जैन दर्शन में श्रद्धा रखने के कारण सिन्धु देश में उत्पन्न जैनी लोग जैनियों के मन्दिर में पहुँच कर मण्डलासन लगाते हैं, उसी प्रकार सिन्धु देश में उत्पन्न घोड़ों पर सवार सैनिकों ने उस घुड़दौड़ के

मैदान में जाकर अधिसंख्य घोड़ों को गोलाकार चक्कर लगवाया। सैन्धवाः तथा विहारदेशम् में श्लेष अलंकार है।

भावार्थ-

जिस प्रकार जिन के वचनों अर्थात् जैन दर्शन में श्रद्धा रखने के कारण सिन्धु देश में उत्पन्न जैनी लोग जैनियों के मन्दिर (बिहार स्थान) में पहुँच कर मण्डलासन लगाते है या सप्तधान्यमयी मण्डली को कराते हैं। उसी प्रकार सिन्धु देश में उत्पन्न घोड़ों पर सवार सैनिकों ने उस घुड़दौड़ के मैदान में जाकर अधिसंख्य घोड़ों को गोलाकार चक्कर लगवाया अर्थात् गोलाई मेंउनको घुमाने लगे ।

द्विषद्भिरेवास्य विलघ्घितादिशो यशोभिरेवाब्धिरकारि गोष्पदम्।

इतीव धारामवधीर्य मण्डलीक्रियाश्रियामण्डि तुरङ्गमैः स्थली।। 72 ।।

सरलार्थ-

इस राजा नल के शत्रुओं ने ही दिशाओं को लाँघ लिया है और कीर्तियों ने ही समुद्र को गोखुर के सदृश (गड्ढा) बना दिया है। ऐसा सोचकर मानों घोड़ों ने अपनी गति को छोड़कर मण्डलाकार क्रिया की शोभा से अकृत्रिम भूमि को सुशोभित किया। यहाँ पर इव का प्रयोग सम्भावना के अर्थ में किये जाने से उत्प्रेक्षा अलंकार है।

भावार्थ-

राजा नल के शत्र ही अपने प्राणों की रक्षा के लिए युद्ध भूमि से भागकर दिशाओं को लांघ गय हैं। नल का यण ही समुद्र को गो के खुर अर्थात् नल का यश समुद्र पार तक के बराबर छोटा गड्ढा बना दिया है। दिगदिगन्त में व्याप्त हो गया है। मानो यह सोचकर ही घोड़ों ने आस्कन्दित, धौरितक, रचित, वल्गित तथा प्लुत आदि पाचो धारा को अनादर करके मण्डलाकार घूमने की शोभा में उस अकृत्रिम भूमि को सुशोभित किया ।

अचीकरच्चारुहयेन या भ्रमीर्निजातपत्रस्य तलसथले नलः।

मरुत्किमद्यापि न तासु शिक्षते वितत्य वात्यामयचक्रचङ्क्रमान्।। 73 ।।

सरलार्थ-

राजा नल ने अपने छत्र के नीचे घोड़े से जो सुन्दर मण्डलाकार चक्कर लगवाये, उनके विषय में वायु आज भी वात्याचक्र (बवण्डर)के रूप में गोल-गोल घूम करके क्या नहीं सीख रहा है? अर्थात् अवश्य सीख रहा है। ग्रीष्म ट्टतु में वात्याचक्र को घोड़े के मण्डलाकार चक्कर को सीखने की उत्प्रेक्षा की गई है। अतः उत्प्रेक्षा अलंकार है।

भावार्थ –

उस विहार स्थल में पहुँच कर नल अपने घोड़े को गोलाई में चक्कर कटवाने लगा। उसकी सुन्दरता पर आकृष्ट होकर इतने दिन बाद वायु आज भी मानो अपने वात्याचक्र का विस्तार करके उसको सीखने का बभ्यास कर रहा है, फिर भी यथार्थतः उसे सीख

नहीं सका। ग्रीष्म ऋतु में वायु गोलाकार में कभी-कभी उड़ने लगता है। उसे बात्याचक्र या बवण्डर कहते हैं।

विवेश गत्वा स विलासकाननं ततः क्षणात्क्षौणिपतिर्धृतीच्छया।

प्रवालरागच्छुरितं सुषुप्सया हरिर्घनच्छायमिवाम्भसां निधिम्।। 74 ।।

सरलार्थ-

उसके पश्चात् राजा नल ने शीघ्र ही जाकर नूतन किसलयों की लालिमा से युक्त सघन छाया वाले क्रोडोपवन में धैर्य की इच्छा से उसी प्रकार प्रवेश किया, जिस प्रकार भगवान् विष्णु मूँगों की लालिमा से चित्रित तथा मेघ के समान कान्ति वाले क्षीर सागर को प्राप्त कर शीघ्र ही सोने की इच्छा से प्रवेश करते हैं अथवा जिस प्रकार सिंह पल्लवों की लालिमा से युक्त सघन छाया वाले जंगल में सोने की इच्छा से प्रवेश करता है। इस पद्य में श्लेष अलंकार है।

भावार्थ –

भगवान् विष्णु क्षीर सागर में शयन करते हैं। सिह जंगल में सोता है। जिस प्रकार विश्णु प्रवाल मणियों की लालिमा से व्याप्त है, तथा मेघ के समान नीली कान्ति बाल सागर में सोने की इच्छा से प्रवेश करते हैं। समुद्र रत्नाबर है, अतः सभी प्रकार की मणियों से युक्त है। अथवा जिस प्रकार सिह नवकिसलय की लालिमा से युक्त तथा घनी छाया बाले जंगल में सोने की इच्छा से प्रवेश करता है। उसी प्रकार राजा नल उस क्रीडा के उपवन, जो मषकिसलयों की लालिमा पूरित नया घनी छाया वाला था,में पहुंचकर शोध ही काम जनित पीड़ा से शान्ति प्राप्त करने की इच्छा से प्रवेश किया।

वनान्तपर्यनतमुपेत्य सस्पृहं क्रमेण तस्मिन्नवतीर्णदृक्पथे।

न्यवर्ति दृष्टिप्रकरैः पुरौकसा मनुव्रजद्बन्धुसमाजबन्धुभिः।। 75 ।।

सरलार्थ-

पीछे जाते हुये बन्धुजनों के समूह के समान नगरवासियों की नेत्रसमूह के द्वारा वन तक जाकर क्रमशः उस नल के दृष्टिपथ से ओझल हो जाने पर लौट आये। 'अनुव्रजद्बन्धुसमाजबन्धुभिः' के आधार पर उपमा अलंकार है।

भावार्थ-

जैसे कोई इष्ट जन कही जाने लगता है, तब उसके बरभु समूह घन तब पहुंचाने के लिए उसके साथ जाते हैं और उस इष्टवान्धव के दृष्टि से ओझल हो जाने पर लौट आते हैं, उसी प्रकार नगर वासियों के नेत्र समूह भी तल को देखने के लिए स्पृहापूर्वक वन के समीप तक गये, और नल के दृष्टि से बाहर हो जाने पर लौट आए अर्थात् जब तक नल बन

के पास नहीं पहुंचे थे, तब तक नागरिक लोग नल को देखते रहे, किन्तु जब वे दृष्टिः से बाहर हो गये तब नागरिकों ने विवश होकर उधर दखना छोड़कर लौट आए।

स्वयं आकलन कीजिए –

अभ्यास प्रश्न 2

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए –

1. क्षणदापतिप्रभ: में कौन सा अलंकार निहित है?
2. नल के कितने दल युद्ध का प्रदर्शन करने लगे थे?
3. किसने आकाश को एक पैर में लाँघा था?
4. किसने दिशाओं को लाँघ दिया है?
5. राजा नल ने किस छाया वाले वन में प्रवेश किया था?

17.5 सारांश

इस इकाई में राजा नल के अश्व का वर्णन प्रस्तुत किया गया है।।राजा नल का अश्व शुभ्र वर्ण का चित्रित किया गया है। यह अश्व राजा नल की युद्ध के समय में सहायता भी करता हुआ दर्शाया गया है। उस अश्व की तुलना कवि ने सूर्य के सात अश्वों के यश के साथ की है। यही इस इकाई का सारांश है।

17.6 कठिन शब्दावली

अध्वनि=मार्ग में	महारथस्य=बड़े रथ वाले
सीतत्विष:=सफेद कान्ति वाला	रयस्मये=वेग के अहंकार में
प्रसभं=बलपूर्वक जीते गए	क्षितिपाकशासन:=पृथ्वी के महाराज इन्द्र
मयूखा=किरणसमूह	प्रकाशरूपा=प्रसिद्ध सौन्दर्य वाला
हयम्=घोड़े को	महारयम्=बड़े वेग वाला
क्षणदापतिप्रभ:=चंद्रमा के सदृश	मृषामृधं=मिथ्या युद्ध

17.7 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न -1	1. गरुड़	2. उच्चैश्रवा	3. नल
	4. नल की	5. चंद्र किरणों से	
अभ्यास प्रश्न -2	1. उपमा	2. दो दल	3. विष्णु ने
	4. नल ने	5. क्रोडोपवन	

17.8 सहायक ग्रन्थ

1. नैषधचरितमहाकाव्यम् (प्रथम सर्ग) श्रीहर्ष, व्याख्याकार: डॉ- सुरेन्द्र देव शास्त्री, चौखम्बा संस्कृत सीरीज वाराणसी।
2. नैषधचरितमहाकाव्यम् (प्रथम सर्ग) श्रीहर्ष, व्याख्याकार: डॉ- देवनारायण मिश्र, साहित्य भण्डार सुभाष बाजार मेरठ।
3. संस्कृत साहित्य का इतिहास, बलदेव उपाध्याय, शारदा निकेतन वाराणसी।
4. संस्कृत साहित्य कोश, राजवंश सहाय हीरा, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

17.9 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. नैषधीयचरित के प्रथम अङ्क की संक्षिप्त कथा बताइये।
2. निम्नलिखित पद्यों की व्याख्या कीजिये-

   प्रथमसर्ग-, 61, 63, 65, 67, 68, 70, 72, 74

अष्टादश अध्याय
इकाई-18
नैषधीयचरित : प्रथम सर्ग (पद्य 76-90)

संरचना

18.1 प्रस्तावना

18.2 उद्देश्य

18.3 नैषधीयचरित महाकाव्य के प्रथम सर्ग के 76-81 पद्यों का सरलार्थ

- स्वयं आकलन कीजिए

18.4 नैषधीयचरित महाकाव्य के प्रथम सर्ग के 76-81 पद्यों का सरलार्थ

- स्वयं आकलन कीजिए

18.5 सारांश

18.6 कठिन शब्दावली

18.7 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

18.8 सहायक ग्रन्थ

18.9 अभ्यास के लिए प्रश्न

18.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों, इस इकाई में नैषधीयचरित के प्रथम सर्ग के 76-90 पद्यों का अलंकार सहित अध्ययन किया जायेगा। इसमें राजा नल की शत्रुओं पर विजय का वर्णन किया गया है। वह राजा नल युद्धभूमि में दिशाओं को लांघने वाला दर्शाया गया है। जिसका अध्ययन इस इकाई में किया जायेगा।

18.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जानने में सक्षम होंगे-

- नैषधीयचरित के प्रथम सर्ग के पद्यों का सरलार्थ।
- नैषधीयचरित में प्रयुक्त अलंकारों के वर्णन भी भी सक्षम हो जायेंगे।
- नैषधीयचरित में प्रयुक्त सूक्तियों को समझने में सक्षम हो जायेंगे।
- प्रथम सर्ग की व्याख्या करने में भी निपुण हो जायेंगे।

18.3 नैषधीयचरित महाकाव्य के प्रथम सर्ग के 76-81 पद्यों का सरलार्थ

ततः प्रसूने च फले च मज्जुले स सम्मुखीनाघ्गुलिना जनाधिपः।

निवेद्यमानं वनपालपाणिना व्यलोकयत्काननरामणीयकम्।। 76 ।।

सरलार्थ-

वन में प्रवेश करने के उपरान्त राजा नल ने मनोहर फूलों तथा फलों की ओर दिखलाने वाली अंगुलि से युक्त वनरक्षक के हाथ से निर्देशित वन की शोभा को देखा। इस पद्य में स्वभावोक्ति अलंकार है।

भावार्थ-

जब राजा नल ने उपवन में प्रवेश किया तब अरण्यपाल उन्हे फूलों और कयों पर अंगुली में निर्देशक हुआ तथा उनके नाम और गुणों का वर्णन करता हुआ दिश्श्रा रहा था। और तल उपवन की उस रमणीयता को देखने लगे

फलानि पुष्पाणि च पल्लवे करे वयोऽतिपातोद्गतवावेपिते।

स्थितैः समादाय महर्षिवार्धका द्वने तदातिथ्यमशिक्षि शाखिभिः।। 77 ।।

सरलार्थ-

पक्षियों के उड़ने से उत्पन्न वायु से हिलते हुए पल्लवरूपी हाथ में फल और पुष्पों को लेकर वन में स्थित वृक्षों ने मानों अधिक अवस्था के कारण वातरोग से काँपते हुये हाथ में फल और पुष्पों को लेकर वन में स्थित वृद्ध महर्षियों के समूह से उन नल का अतिथि सत्कार सीखा है। इस पद्य में वृक्षों के पल्लवों पर करो का आरोप होने से रूपक अलंकार है तथा वन के वृक्षों के द्वारा वृद्ध ट्टषियों से आतिथ्य सत्कार सीखने की उत्प्रेक्षा की गई है, अतः उत्प्रेक्षा अलंकार है।

भावार्थ –

उस विलासवन में वृद्ध महपि भी रहते थे। अत्यधिक अवस्था के कारण उनमें बात रोग हो गया था। अतः उनके हाथ कंपते रहते थे। फिर भी अपने कंपते हुए हाथों में वे फल-पुष्प लेकर राजा नल का स्वागत करते थे। मानों उस वन के वृक्षों ने भी उन वृद्ध महषियों से इस स्वागत की शिक्षा को ग्रहण कर लिया हो और पक्षियों के उड़ने से उत्पन्न वायु से प्रव म्पित वे वृक्ष अपने पल्लव रूपी हाय में फल पुष्प लेकर वहाँ उपस्थित राजा नल का स्वागत कर रहे हो। लोक व्यवहार में भी वन में रहकर वृद्ध मक्षियों से शिक्षा ग्रहण करना श्रेष्ठ माना जाता है।

विनिद्रपत्रलिगतालिकैतवान्मृगाङ्गचूडामणिवर्जनार्जितम्।

दधानमाशासु चरिष्णु दुर्यशः स कौतुकी तत्र ददर्श केतकम्।। 78 ।।

सरलार्थ-

उत्सुकतापूर्ण राजा नल ने उस वन में शिवजी के द्वारा त्याग दिये जाने के कारण उत्पन्न तथा सभी दिशाओं में फैले हुए अपयश को विकसित पंखुडियों पर स्थित भ्रमर के बहाने से धारण करते हुए केतकी के पुष्प को देखा। इस पद्य में अलिकैतवात् पद में अलित्व का निषेध कर अपकीर्तित्व का आरोप करने से अपह्नुति अलंकार है।

भावार्थ–

उस विलास बन में बिजी हुई पखुड़ियों वाले केतकी के फूल पर काले-काले भ्रमर बैठे हुए थे। ऐसा लग रहा था, मानों शंकर जी के द्वारा त्याग दिये जाने के कारण वे काले चमर नहीं अपितु काला अपयश था, जो चारों दिशाओं में फैल रहा था। ऐसे केतक-पुष्प को राजा नल ने आश्चर्य पूर्वक देखा। लोक में भी किसी अहं महापुरुष द्वारा त्यागा जाना अपकीति- कारी होता है।

वियोगभाजां हृदि कण्टकैः कटुर्निधीयसे कर्णिशरः स्मरेण यत्।
ततो दुराकर्षतया तदन्तकृद् विगीयसे मन्मथदेहदाहिना।। 79 ।।

सरलार्थ-

हे केतकी के पुष्प! जिस कारण कामदेव के द्वारा वियोगियों के हृदय में काँटों से तीक्ष्ण बाण के रूप में रखे जाते हो, इसलिए कठिनता से खींचे जा सकने के कारण उन वियोगियों का अन्त करने वाले तुम कामदेव के शरीर को जलाने वाले शिव के द्वारा निन्दित किए जाते हो। इस पद्य में केतकी के पुष्प में कणिर्शरत्व के आरोप से रूपक अलंकार है। शिव के द्वारा केतकी के विगर्हित होने से काम के सहयोगित्व की सम्भावना की गई है। अतः उत्प्रेक्षा अलंकार है।

भावार्थ –

राजा नल क्रोध से केतकी पुष्प की निन्दा करते हुए कहते हैं कि कामदेव तुम को वियोगियों के हृदय में कंटकों से तीक्ष्ण तथा कर्ण युक्त अर्थात् नुकीला बता कर बाण रूप में प्रवेश कर देता है। कर्ण युक्त तथा कंटक युक्त होने के कारण वियोगियों के हृदय से तुम्हें बाहर निकालना दुष्कर हो जाता है और यदि बड़ी कठिनता से किसी प्रकार निकाला भो जाता है, तो उस वियोगी का अत्त ही हो जाता है। एतावता तुम काम के प्रभाव को बढ़ाने बाले तथा दुघर्ष बनाने वाले हैं। यही कारण है कि भगवान शंकर तुम्हारी निन्दा करते हैं क्योंकि वे काम के शत्रु तथा उसके शरीर को जलाने वाले हैं।

त्वदग्रसूच्या सचिवेन कामिनोर्मनोभवः सीव्यति दुर्यशः पटौ।
स्फुटं स पत्रैः करपत्रमूर्तिभिर्वियोगिहृद्दारुणि दारुणायते।। 80 ।।

सरलार्थ-

तुम्हारे अग्रभाग रूपी सुई को सहायक बनाकर कामदेव कामी और कामिनी के अपयश रूपी वस्त्रें को सीता है और स्पष्ट रूप से वह कामदेव आरे के समान आकार वाले पत्तों से वियोगियों के हृदयरूपी काष्ठ पर क्रूर के समान आचरण करता है। इस पद्य में दारुणायते में उपमा अलंकार है।

भावार्थ-

नल केतकी की निन्दा करता हुआ कहता है कि तुम्हारी नोक रूपी सुई की सहायता से कामदेव विरही स्त्री-पुरुषों के दुयंश रूपी वस्त्र को सीता है। और जिस प्रकार

कोई व्यक्ति आरे से लकड़ी को चीरता है, उसी प्रकार तुम अपने पत्तों से वियोगियों के हृदय को चीरते हो। अतः तुम्हार। आचरण अत्यन्त कर है। वस्तुतः केतकी का पुष्प देखने से विरही व्यक्ति का धैर्य भङ्ग हो जाता है, जिसके कारण वह अपकीति को प्राप्त होता है। राजा नल भी बिरही है। इसलिए वह केतकी के पुष्प के देखकर और अधिक व्यथित हो उठता है।

धनुर्मधुस्विन्नकरोऽपि भीमजापरं परागैस्तव धूलिहसतयनु।
प्रसून्धन्वा शरसात्करोति मामिति क्रुधाक्रुश्यत तेन केतकम्।। 81 ।।

सरलार्थ-

पुष्पनिर्मित धनुष वाला कामदेव धनुष अर्थात् पुष्पों के मधु से गीले हाथों वाला होकर भी तुम्हारे परागों से हाथ को धूलियुक्त करता हुआ दमयन्ती के प्रति आसक्त मुझ नल को बाणों का लक्ष्य बना रहा है, इस प्रकार नल ने क्रोध से केतकी के पुष्प की निन्दा की। इस पद्य में नल के द्वारा केतकी के प्रति क्रोध किये जाने के कारण का निर्देश है, अतः काव्यलिगं अलंकार है।

भावार्थ-

केतकी पुष्प के प्रति नल का कथन है कि यदि पुष्पमय धनुष के मधु से आईहस्त कामदेव तुम्हारे परागों से हाथ को धूलि युक्त नहीं करता तो फिसलन के कारण लक्ष्य भ्रष्ट हो जाता और मुझे वाणपीडित नहीं कर सकता था । बतः रामबाण से मेरे पीडित होने में तुम ही मुख्य कारण हो। इस प्रकार नलने केतकी की अत्यधिक निन्दा की। लोक में धनुष को बहुत समय तक पकड़े रहने के कारण हाय पसीजने लगता है, तब धनुर्धर योद्धा हांथ में धूलि लगाकर उसे सुखा लेता है और सही लक्ष्य वेध कर सकता है।

स्वयं आकलन कीजिए –

अभ्यास प्रश्न 1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए –

1. राजा नल ने किसके हाथों से वन की शोभा को देखा था?
2. राजा नल ने किन से अतिथि सत्कार सिखा है ?
3. केतकी के पुष्पों को किसके द्वारा त्यागा गया था?
4. किसका अग्रभाग कामदेव के अपयश रूपी वस्त्रों को सीता है ?
5. नल ने क्रोध में किस पुष्प की निन्दा की थी?

18.4 नैषधीयचरित महाकाव्य के प्रथम सर्ग के 82-90 पद्यों का सरलार्थ

विदर्भसुभ्रूस्तनतुङ्गताप्तये घटानिवापश्य दलं तपस्यतः।

फलानि धूमस्य धयानधोमुखान् स दाडिमे दोहदधूपिनी द्रुमे।। 82 ।।

सरलार्थ-

उस नल ने दोहद के रूप में दिये जाने वाले धूप से युक्त अनार के वृक्ष पर दमयन्ती के स्तनों की ऊँचाई को प्राप्त करने के लिए धुयें का पान करते हुए अतिशय तपस्या करने वाले फलों को अधोमुख घड़ों के समान देखा। इस पद्य में अधोमुख घड़ों के समान फलों के होने की सम्भावना की गई है, अतः उत्प्रेक्षा अलंकार है।

भावार्थ-

दमयन्ती के स्तन बहुत बड़े-बड़े थे, घट के समान आकार वाले अनार के फल भी चाहते थे कि वे भी दमयन्ती के स्तनों की विशालता को प्राप्त कर ले। बतएव दोहद धूप से युक्त अनार पेड़ पर अधोमुख लटकते हुए वे बनार के फल ऐसे प्रतीत हो रहे थे, मानो वे अधोमुख होकर कठोर तपस्या कर रहे हों, इस प्रकार के अनार-फलों को नल ने देखा। जैसे लोक में कोई व्यक्ति किसी महान् अभीष्ट फल को प्राप्त करना चाहता है, तो वह अधोमुख होकर घूम का पान करता हुआ कठोर तपस्या करता है। वृक्ष में अच्छे फल लगने के लिए विविध द्रव्यों द्वारा उसके नीचे दिये गये धूम को ही दोहद कहते हैं।

वियोगिनीमैच्छत दाडिमीमसौ प्रियस्मृतेः स्पष्टमुदीतकण्टकाम्।
फलस्तनस्थानविदीर्णरागविहृद्विशच्छुकास्यस्मरकिंशुकाशुगाम्।। 83 ।।

सरलार्थ-

वह राजा नल प्रियतमा के स्मरण से स्पष्ट रूप से रोमाचिंत तथा फल के समान स्तनों के मध्य विदीर्ण तथा अनुराग युक्त हृदय में प्रवेश करते हुए शुक के मुख के समान कामदेव के पलाश रूपी बाणों से युक्त वियोगिनी के समान दोहद के स्मरण से स्पष्ट रूप से स्वावयवभूत काँटों से युक्त तथा स्तन सदृश फलों के मध्य में विदीर्ण तथा रक्तवर्ण वाले मध्यभाग में प्रवेश करते हुए शुकमुख रूपी कामदेव के पलाश पुष्परूपी बाणों से युक्त अनार के वृक्ष को देखा। इस पद्य में श्लेष अलंकार है।

भावार्थ-

राज नल ने दाडिमी के फलों को दमयन्ती के स्तनों के समान देखा. जो पत्र निज ब.ण्टकों से युक्त थे। जैसे दमयन्ती के स्तन रोमाञ्च से युक्त थे । अनार का फल बीच से कट जाता है और उसके लाल-लाल दाने दिखाई देने लगते है। जिस प्रकार दमयन्ती के 'तनों के मध्य विदीर्ण होने से लालिमा दिखाई पड़ती है। फलों के बीच के दानों को खाने के लिए शुकों के मुखाग्र भाग वैसे ही प्रवेश कर रहे थे, जिस प्रकार दमयन्ती के विदीर्ण हृदय में पत्ताश पुष्प रूप कामदेव का बाण प्रवेश करता है। अथवा परमात्मा के साक्षात्कार रूप फल का बोधक (तुरीयावस्थारूप) स्थात से च्युत पूर्वकाल में विषयों में अनुरागी हृदय में

प्रवेश करते हुए उस देश से हटाए जाते हैं। कामदेव पलाश पुष्पमय बाण जिससे ऐसी, तथा परमप्रिय सच्चिदानन्द केस्मरण से रोमाञ्च युक्त वियोगिनी के समान दाडिमी को नल ने देखा।

स्मरार्धचन्द्रेषु निभेक्रशीयसां स्फुटं पलाशेध्यजुषां पलाशनात्।

स वृन्तमालोकत खण्डमन्वितं वियोगहृत्खण्डिनि कालखण्डजम्।। 84 ।।

सरलार्थ-

राजा नल ने कामदेव के अर्धचन्द्राकार बाण के समान वियोगियों के हृदय को विदीर्ण करने वाले तथा अत्यन्त दुर्बल पथिकों के माँस खाने के कारण स्पष्ट रूप से पलाश(पल$आस= माँस भक्षण) के पुष्प में लगे हुए वृन्त को यकृत के टुकड़े के रूप में देखा। इस पद्य में वृन्त में यकृत खण्ड का आरोप किये जाने से रूपक अलंकार है।

भावार्थ-

पलाश वृक्ष पर अर्धचन्द्राकार फूल लगे हुए थे, जो कामदेव के वियोंगिघातक अर्धचन्द्राकार बाण के तुल्य प्रतीत हो रहे थे। उन फूलों के ऊपर कृष्ण वर्ण के वृन्त (जहाँ से फूल टूट कर अलग होता है) ऐसे प्रतीत हो रहे थे, जैसे कि विरहियों के दाहिने पार्श्व में अर्धचन्द्राकार पलाश पुष्पमय बाण से प्रहार किया है। उस चाण में उन विरहियों के दक्षिण पार्श्व का कृष्ण वर्ण मांस का कुष्छ भाग सम्बद्ध हो गया है। तथा उन पलाश पुष्पों को देखने में बसन्त का आगमन जानकर विरही पथिक कामपीड़ित होकर दुर्बल हो रहे थे। अतएव पलाश (अर्थात् मांस का भक्षक) यह नाम सार्थक सा हो रहा था।

नवा लता गन्धवहेन चुम्बिता कराम्बिताघी मकरन्दशीकरैः।

दृशा नृपेण स्मितशोभिकुड्मला दरादराभ्यां दरकम्पिनी पपे।। 85 ।।

सरलार्थ-

वायु द्वारा स्पर्श की गयी पुष्प रस के कणों से मिश्रित अघों वाली, विकसित कलियों से सुशोभित तथा कुछ-कुछ हिलती हुई नवीन लता राजा नल के द्वारा भय और आदर के साथ देखी गई। इस पद्य में प्रस्तुत लता सम्बन्धी विशेषणों की समानता के आधार पर अप्रस्तुत नायिका की प्रतीति हो रही है। अतः समासोक्ति अलंकार है।

भावार्थ –

नायक रूप वायु से स्पृष्ट, मकरन्द कणों से रोमाञ्चित शरीर वाली, ईषद्धिकसित एवं शोभायमान कलियों वाली, तथा ईषत् प्रकामान नवीन पल्लवों वाली लता को विरहियों को दुःखद होने से उक्त लता को देखने से उत्पन्न भय तथा सुन्दरता के होने से आदर युक्त राजा नल ने नेत्रों से मानो उस प्रकार पान किया अर्थात् देखा जिस प्रकार कस्तूरी कर्पूर चन्द- नादि की सुगन्धि से युक्त नायक द्वारा चुम्बित, प्रियस्पर्श से रोमाञ्चित

अङ्गों बाली थोड़ा स्मित करती हुई तथा सात्त्विक भाव से उत्पन्न होने से कुछ कम्पनयुक्त नायिका को पर स्त्री होने से भयपूर्वक तया सुन्दरी होने से आदर पूर्वक कोई दूसरा नायक देखता है।

चिचिन्वतीः पान्थपतघहिंसनै रपुण्यकर्माण्यलिकज्जलच्छलात्।

व्यलोकयच्चम्पककोरकावलीः स शम्बरारेर्बलिदीपिका इव।। 86 ।।

सरलार्थ-

उस राजा नल ने पथिक रूपी पतघों की हिंसा करने के कारण पाप कर्मों को भ्रमर रूपी काजल के बहाने संचय करने वाली कामदेव के पूजा के दीपकों के समान चम्पा की कलियों की पंक्ति को देखा। इस पद्य में 'पान्थपतघ' में रूपक अलंकार है। चम्पक पुष्प में पूजा के दीपक की सम्भावना की गई है, अतः उत्प्रेक्षा अलंकार है।

भावार्थ-

चम्पक की कलियाँ अत्यधिक कामोद्दीपक होती हैं। उन कलियों को देखकर विरही व्यक्ति वैसे ही मर जाता है, जिस प्रकार दीपक की शिखा पर बैठने वाले पतिगे मर जाते हैं। चम्पा की कलियों पर बैठने वाले काले- काले भ्रमर दीपक के उस कज्जल के रूप में दिख रहे थे, मानों जिसे दीपक की लौ ने पतिगों को मारने के पाप के रूप में संचित किया था। इस प्रकार भ्रमरे युक्त चम्पक कलियों को कामदेव के पूजा-दीपक के समान नल ने देखा । दीपक की लौ के समान चम्पा की कलियाँ भी पीली होती हैं। कुछ ऐसा मानते हैं कि चम्पा के पुष्प पर भ्रमर नहीं बैठते हैं और बैठते हैं तो मर जाते हैं।

अमन्यतासौ कुसुमेषु गर्भ्भं रागमन्धङ्करणं वियोगिनाम्।

स्मरेण मुक्तेषु पुरा पुरारये तदङ्गभस्मेव शरेषु सङ्गतम्।। 87 ।।

सरलार्थ-

उस नल ने पुष्पों के अन्दर स्थित वियोगियों को अन्धा बनाने वाले पराग को पूर्वकाल में कामदेव के द्वारा शिव पर छोड़े गये बाणों में लगा हुआ शिवजी के शरीर का भस्म माना। इस पद्य में पुष्प के पराग में शिव के शरीर के भस्म की सम्भावना होने से उत्प्रेक्षा अलंकार है।

भावार्थ –

राजा नल ने फूलों के बीच में स्थित पराग को ऐसे समझा, मानो जब कामदेव ने शंकर के शरीर पर पुष्पमय बाणों से प्रहार किया था तो उससे शंकर के शरीर पर लगा हुआ भस्म हो। भस्म आंख में पड़ने पर लोगों को अन्धा बना देती है और फूलों के परागों को देखकर विरही व्यक्ति काम पीडित हो विवेकहीन हो जाते हैं।

पिकाद्वने शृण्वति भृङ्गहुंकृतैर्दशामुदय्चत्करुणे वियोगिनाम्।

अनास्थया सूनकरप्रसारिणीं ददर्श दूनस्थलपप्रिनीं नलः।। 88 ।।

सरलार्थ-

सन्तप्त नल ने विकसित करुण वृक्षों वाले तथा कोयलों से भौरों के द्वारा हुँकार से वियोगियों की दशा को सुने जाने वाले वन में अनादर से हाथ फैलाए हुए कमलिनी को देखा। इस पद्य में 'सूनकरप्रसारिणीम्' में पुष्प में हाथ का आरोप होने से रूपक अलंकार है।

भावार्थ–

उपवन में करुण वृक्ष फून रहे थे, कोयल मानो विरहियों की दशा कर रही थी, गुञ्जार करते हुए अमर हुंकार कर रहे थे अर्थात् कारी भर रहे थे। वहाँ पर स्वलकमलिनी मानो अपना हाथ फैला कर अनादर भाव से इन सब को मना कर रही हो कि तुम्हें ऐसा नहीं करना चाहिए। ऐसा करना अनुचित है। राजा नल ने इन सब को देखा तो उनकी बिरह वेदना कम होने की अपेक्षा और अधिक बढ़ गई। लोक में भी किसी को अनुचित कार्य 'करते हुए देखकर दूसरा सज्जन व्यक्ति अनादर भाव से हाय फैला कर उसे 'निषेध करता है। आशय यह हुआ हुआ कि वन में विकसित होते हुए करुण वृक्ष को, कूडू करती हुई कोयल को, गुञ्जार करते हुए अमर को और खिलती हुई स्थल- कमलिनी को कामपीडित नन ने देखा।

रसालसालः समदृश्यतामुना स्फुरद्विरेफारवरोषहुङ्कृतिः।
समीरलोलैर्मुकुलैवियोगिने जनाय दित्सन्निव तर्जनाभियम्।। 89 ।।

सरलार्थ-

नल ने भ्रमण करते हुए भ्रमरों के गुज्जार रूपी कोप युक्त हुँकार वाले तथा वायु से प्रकम्पित मंजरियों के द्वारा वियोगी जनों को भर्त्सना रूपी भय प्रदान करने की इच्छा करते हुए से आम्र के वृक्ष को देखा। इस पद्य में गूँज पर हुँकार का आरोप होने से रूपक अलंकार है।

भावार्थ-

वन में आमों में बौर आ गये थे और उन पर भौरे गुजार कर रहे थे तथा हवा चलने से मञ्जरियाँ हिल रही थीं। इससे ऐसा प्रतीत हो रहा वा मानो आम के पेड़ विरही जनों को भयभीत कर रहे हों। भौरों का हुकार ही उनका क्रोध था और मरियाँ ही उनके हाथ थी जिस हिलाकर वे विरहियों को तजित कर रहे थे।

दिने दिने त्वं तनुरेधिरेधिकं पुनर्पुनर्मूर्च्छ च तापमृच्छ च।
इतीव पान्थाशपतः पिकान्द्विजान् सखेदमैक्षिष्ट सलोहितेक्षणान्।। 90 ।।

सरलार्थ-

हे पथिक! तू दिन प्रतिदिन अधिक दुर्बल होते जाओ, बार-बार मूर्च्छित हो और सन्ताप को प्राप्त करो, इस प्रकार मानों पथिकों को शाप देते हुए लाल नेत्र वाले कोयलों तथा द्विजों को नल ने खेदपूर्वक देखा। इस पद्य में लाल नेत्रें वाले कोयल के द्वारा पथिको को शाप देने की सम्भावना प्रकट होने से उत्प्रेक्षा अलंकार है।

भावार्थ-

कोकिल की मधुर कूजन विरही पचिक को अत्यधिक संतप्त करने वाला होना है। उसकी आंखें लाल होती हैं। अतः कवि सम्भावना करता है कि रक्त नेत्र की कोकिले मानों विरही पथिकों को अत्यधिक दुर्वल होने, बार- बार मूच्छित होने तथा संतप्त होने का शाप दे रही हैं, जिस प्रकार रक्त नेत्र बाले ब्राह्मण जब क्रोध में होते हैं तब उक्त प्रकार का शाप किसी प्रकार के अपराध करने वाले व्यक्ति को देते हैं। नल भी एक विरही व्यक्ति हैं, बतः उन पक्षि रूप कोकिलों को खेद पूर्वक देखा, क्योंकि उक्त शाप से वह भी तो अभि-शप्त हो रहा है।

स्वयं आकलन कीजिए –

अभ्यास प्रश्न 2

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए –

1. दोहद किस वृक्ष की संज्ञा है?
2. राजा नल ने किस पुष्प में दुर्बल पथिकों के माँस भक्षण के यकृत को देखा था?
3. पान्थपतंग में कौन सा अलंकार निहित है ?
4. राजा नल ने किसमें शिव के भस्म की अनुभूति की?
5. किसने भ्रमरों के गुंजार पर आम्र वृक्ष को देखा था?

18.4 सारांश

इस इकाई में राजा नल की पराक्रम और शौर्य का वर्णन चित्रित किया गया है। इसमें राजा नल अपने शत्रुओं पर विजय करते हुए दृष्टिगोचर होते हैं। वह अपने शत्रुओं को परास्त करते हुए चारों दिशाओं में अविझित प्रकट होते हैं। जिसका वर्णन श्रीहर्ष ने अपने काव्य में किया है।

18.5 कठिन शब्दावली

प्रसूने=सुंदर फूल
वनपालपाणिना=उद्यान रक्षक के हाथों में
चरिष्णु=सञ्चरणशील
महर्षिबार्द्धकात्=बुढ़े महर्षियों के समान
दुर्यश:=अपकीर्ति
कौतुकी=केतकी पुष्प

दारूणायते=भयंकर आचरण प्रसूनधन्वा=पुष्परूपधनु को लेने वाला
दोहृदधूपिनी=अनार का पेड़(फलवर्धक पेड़)
पलाशनात्=मांस भक्षण करने वाले शम्बरारे:=कामदेव की
लोहितेक्षणान्=क्रोधसेलालनेत्र

18.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न -1 1. वन रक्षक 2. वृद्ध महर्षि 3. शिव जी 4. केतकी पुष्प 5. केतकी

अभ्यास प्रश्न -2 1. अनार 2. पलाश 3. रुपक 4. पुष्प पराग में 5. नल ने

18.7 सहायक ग्रन्थ

1. नैषधचरितमहाकाव्यम् (प्रथम सर्ग) श्रीहर्ष, व्याख्याकार: डॉ- सुरेन्द्र देव शास्त्री, चौखम्बा संस्कृत सीरीज वाराणसी।
2. नैषधचरितमहाकाव्यम् (प्रथम सर्ग) श्रीहर्ष, व्याख्याकार: डॉ- देवनारायण मिश्र, साहित्य भण्डार सुभाष बाजार मेरठ।
3. संस्कृत साहित्य का इतिहास, बलदेव उपाध्याय, शारदा निकेतन वाराणसी।
4. संस्कृत साहित्य कोश, राजवंश सहाय हीरा, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

18.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. श्री हर्ष की भाषा-शैली की सोदाहरण विवेचना कीजिए।
2. निम्नलिखित पद्यों की व्याख्या कीजिये-
   प्रथमसर्ग-, 77, 80, 84,88

नवदश अध्याय

इकाई-19

नैषधीयचरित : प्रथम सर्ग (पद्य 91-105)

संरचना

19.1 प्रस्तावना

19.2 उद्देश्य

19.3 नैषधीयचरित महाकाव्य के प्रथम सर्ग के 91-96 पद्यों का सरलार्थ

- स्वयं आंकलन कीजिए

19.4 नैषधीयचरित महाकाव्य के प्रथम सर्ग के 97-105 पद्यों का सरलार्थ

- स्वयं आंकलन कीजिए

19.5 सारांश

19.6 कठिन शब्दावली

19.7 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

19.8 सहायक ग्रन्थ

19.9 अभ्यास के लिए प्रश्न

19.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों, इस इकाई में नैषधीयचरित के प्रथम सर्ग के 91-105 पद्यों का अलंकार सहित अध्ययन किया जायेगा। प्रस्तुत इकाई में वन के प्राकृतिक सौन्दर्य का वर्णन किया गया है। इसमें राज नल को अरण्यपाल फल और फूलों के विषय में बताता हुआ दिखाया गया है। इसमें कवि ने केतकीपुष्प के पराग की तुलना भगवान शिव के भस्म से की गई है। अद्वितीय प्रकृतिक सौन्दर्य का अध्ययन इस इकाई में किया जायेगा।

19-2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जानने में सक्षम होंगे-

- नैषधीयचरित के प्रथम सर्ग के पद्यों का सरलार्थ।
- नैषधीयचरित में प्रयुक्त अलंकारों के वर्णन भी भी सक्षम हो जायेंगे।
- नैषधीयचरित में प्रयुक्त सूक्तियों को समझने में सक्षम हो जायेंगे।
- प्रथम सर्ग की व्याख्या करने में भी निपुण हो जायेंगे।

19-3 नैषधीयचरित महाकाव्य के प्रथम सर्ग के 91-96 पद्यों का सरलार्थ

अलिस्त्रजा कुड्मलमुच्चशेखरं निपीय चाम्पेयमधीरया दृशा।
स धूमकेतुं विपदे वियोगिनामुदीतमातङ्कितवानशङ्कत।। 91 ।।

सरलार्थ-

भ्रमर पंक्ति से ऊँची चोटी वालली च्म्पा की कली को अति व्याकुल दृष्टि से देखकर आतघिङ्कत हुए नल ने उसे विरहियों के विनाश के लिए उदित हुआ धूमकेतु समझा। इस पद्य में भ्रमरयुक्त चम्पक में धूमकेतु की आशङ्का किये जाने से उत्प्रेक्षा अलंकार है।

भावार्थ-

चम्पा की कलियों पर भ्रमर बैठे हुए थे, जिन्हें राजा नल नेबड़े ही व्याकुल भाव से देखा और भविष्य में किसी अनिष्ट की सम्भावना सेनातङ्कित हो उठे। चम्पा की कली पर काले काले चोटी के समान भवरों कोदेखकर उन्हें ऐसा लगा मानो चियोगियों के विनाश के लिए पुच्छल तारा का उदय हो गया है। अर्थात् उसे विरहितों के लिए अनिष्ट सूचक समझा। वस्तुतः वग्या को कली अत्यधिक कामोद्दीपक होती है। इसीलिए उसे घूमकेतु कहा गया है।

गलत्परागं भ्रमिभघिभिः पतत् प्रसक्तभृघावलि नागकेसरम्।

स मारनाराचनिघर्षणस्खलज्ज्वत्कणं शाणमिव व्यलोकयत्।। 92 ।।

सरलार्थ-

उस नल ने गिरते हुए पराग वाले तथा चक्कर काटने से विशेष प्रकार से गिरती हुई भ्रमर पंक्ति वाले नागकेसर पुष्प को कामदेव के बाण के रगड़ने से निकलती हुई जलती चिनगारियों वाले बाण के समान देखा। इस पद्य में नागकेसर में निकष की सम्भावाना होने से उत्प्रेक्षा अलंकार है।

भावार्थ-

उस केलिवन में नल ने आगे बढ़ते हुए नागकेसर के पुष्प को देखा, जिस पर काले-काले भौंरे दूसरे वृक्षों से आ-आ करके बैठ रहे थे और उनके बैठने से पुष्पों से पीले-पीले पराग झर रहे थे, जो ऐसा प्रतीत होता था, मानो कामदेव के बाणों के संवर्ष से निकलती हुई आग की चिनगारियाँ हो और वे पुष्प उन चिनगारियों से युक्त बाण के समान लग रहे थे ।

तदङ्गमुद्दिश्य सुगन्धि पातुकाः शिलीमुखालीः कुसुमाद् गुणस्पृशः।

स्वचापदुर्निगतमार्गणभ्रमात् समरः स्वनन्तीरवलोक्य लज्जितः।। 93 ।।

सरलार्थ-

सुगन्धित नल शरीर को उद्देश्य करके सुगन्धित गुण को चाहने वाली अथवा प्रत्यञ्चा का स्पर्श करने वाली फूलों से दौड़ने वाली तथा शब्द करती हुई भ्रमर पंक्तियों अथवा बाण पंक्तियों को देखकर कामदेव अपने धनुष से लक्ष्य भ्रष्ट होकर निकले हुए बाणों के भ्रम से लज्जित हो उठा। इस पद्य में भ्रमर पंक्तियों में बाण का भ्रम होने से भ्रन्तिमान अलंकार है।

भावार्थ –

नल के शरीर की सुगन्धि पुष्पों से अधिक यो। अतः जब नल उधर से निकले तब भ्रमर समूह पुष्पों को छोड़कर नल की ओर दौड़ पड़े क्योंकि वे सुगन्धि गुण के अभिलाषी होते है। इस प्रकार नल शरीर पर गूंजते हुए अमर समूह को देखकर कामदेव ने सोचा कि वे मेरे बाण पुष्प रूप चाप की प्रत्यचा से निकल कर लक्ष्य भ्रष्ट होकर शब्द करते हुए जा रहे हैं, ऐसा भ्रम होने से मानो वह कामदेव लज्जित हो गया। लोक में भी कोई योद्धा अपने बाणों को लक्ष्य से भ्रष्ट देखकर लज्जित हो उठता है।

मरुल्ललत्पल्लवकण्टकैः क्षतं समुच्चलच्चन्दनसारसौरभम्।
स वारनारी कुचसिचतोपमं ददर्श मालूरफलं पचेलिमम्।। 94 ।।

सरलार्थ-

नल ने वायु से हिलते हुए पल्लवों के काँटों से (कुच पक्ष में वायु के समान विलास करते हुए विट के नखों से) क्षत-विक्षत फैलते हुए चन्दन के समान सुगन्ध से युक्त (कुच पक्ष में विलिप्त चन्दन की सुगन्ध से युक्त) तथा वेयाओं के कुचों की समानता करने वाले पके हुए विल्व फल को देखा। इस पद्य में विल्व फलों की समानता वेश्या के स्तनों से की गई है, अतः उपमा अलंकार है।

भावार्थ-

वायु के समान विलास करने वाले धूर्त नायक के काँटों के समान नाखूनों से क्षत-विक्षत एवं विलिप्त चन्दन की सुगन्ध से युक्त वेश्याओं के कुचों के समान वायु से हिलते हुए पल्लवों के काँटों से क्षत-विक्षत एवं फैलते हुए सुगन्ध से युक्त पके हुए वेल के फलों को देखा ।

युवद्वयी चित्त निमज्जनोचितप्रसूनशून्येतरगर्भ गह्नरम्।
स्मरेषुधीकृत्य धिया भियान्धया स पाटलायाः स्तबकं प्रकम्पितः।। 95 ।।

सरलार्थ-

वह नल युवक और युवतियों के चित्त में प्रवेश करने योग्य पुष्पों से पूर्ण मध्य भाग वाले पाटला के गुच्छों को भय से अन्धी बुद्धि से कामदेव का तरकस समझकर कम्पित हो उठा। इस पद्य में पाटला के स्तबक में काम तूणीर का भ्रम होने से भ्रान्तिमान अलंकार है।

भावार्थ-

नल ते पाटला के गुच्छों को जब पुष्पों से परिपूर्ण देखा, तब उन्होंने यह समझा कि यह विरही दम्पति के हृदय को वेधने वाले कामदेव के बाणों से भरा हुआ तरकस है। नल स्वयं भी विरहो थे। इसलिए उनका हृदय भय से काँप उठा। कवि की कल्पना है कि भय के कारण ही नल की विचार- शक्ति नष्ट हो गई थी। अतएव उन्होंने ऐसा समझा ।

मुनिद्रुमः कोरकितः शितिद्युतिर्वनेऽमुनामन्यत सिंहिकासुतः।

तमिड्डपक्षत्रुटिकुट भक्षितं कलाकलापं किल वैधवं वमन्।। 96 ।।

सरलार्थ-

नल ने उपवन में कलियों से युक्त तथा कृष्ण कान्ति वाले अगस्त्य वृक्ष को, कृष्ण पक्ष में कला के घटने के बहाने से निगले हुए चन्द्रकलासमूह को उगलते हुए राहु समझा। इस पद्य में चन्द्रकला कलाप वमन की अगस्त्य द्रुम में सम्भावना की गई है। अतः उत्प्रेक्षा अलंकार है।

भावार्थ-

उन में नल ने अगस्त्य वृक्ष को देखा, जिसकी काली-काली वलियाँ पी और सफेद रंग की अर्धबन्द्राकार कलियाँ खिली हुई थीं। तो उसे देखकर नल को ऐसा लगा मानो राहू ने चन्द्रमा को निगल लिया था और अब धीरे-धीरे उसे उगल रहा है, क्योंकि काली पत्तियाँ काला राहु और श्वेत पुष्प उसके मुँह से निकलता हुआ चन्द्रमा था। अत एव नल ने अगस्त्य वृक्ष को राहु के रूप में देखा ।

वस्तुत. कवि की कल्पना है कि नल उसे उगलते हुए चन्द्रमा वाला राहु समझकर यह सोचने लगा कि यह राहु चन्द्रमा को खा गया था। बतः मुझे सन्ताप नहीं हो रहा था, किन्तु अब पुनः चन्द्रमा को वमन कर रहा है, अतएव मुझे यह संतप्त करेगा । ऐसा सोचकर नल भयभीत हो गया ।

स्वयं आकलन कीजिए –

अभ्यास प्रश्न 1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए –

1. राजा नल ने किसे विरहियों के विनाश का धूमकेतु माना है?
2. नाग केसर पुष्प की तुलना किससे की गई है?
3. कौन अपने धनुष से लक्ष्य भ्रष्ट होने पर लज्जित हुआ था?
4. चन्दन की सुगन्ध से युक्त फल कौन सा है?
5. युवक और युवतियों के चित्त में प्रवेश करने वाला कौन है?

19.4 नैषधीयचरित महाकाव्य के प्रथम सर्ग के 97-105 पद्यों का सरलार्थ

पुरोहठाक्षिप्ततुषारपाण्डरच्छदावृतेर्वीरुधि बद्धविभ्रमाः।
मिलन्निमीलं विदधुर्विलोकिता नभस्वतस्तं कुसुमेषु केलयः।। 97 ।।

सरलार्थ-

सामने हठपूर्वक तुषार से धवल पत्तों को हटाने वाली वायु की लताओं में की गई विशिष्ट भ्रमण युक्त पुष्प् विषयक देखी गई क्रीड़ाओं ने नल के नेत्रें को बन्द कर दिया। इस

पद्य में वायु और लता में नायक और नायिका के व्यवहार का आरोप किया गया है। अतः समासोक्ति अलंकार है।

भावार्थ-

सामने वायु ओस के कारण सफेद लताओं के पत्तों को हठपूर्वक हटाता हुआ भ्रमण कर रहा था और पुष्पों के साथ क्रीडा कर रहा था, जिसे देखकर के नल ने अपनी आँखें बन्द कर ली। क्योंकि इस प्रकार लताओं की कीड़ा अत्यन्त कामोद्दीपक थी। जैसे कोई नायक जब नायिका के वस्त्रों को हटाता है, तब नायिका विलास करती है और नायक जब उसके साथ काम क्रीड़ा करता है, तब कोई दर्शक लज्जा के कारण अपनी आँखें बन्द कर लेता है। स्मृति शास्त्र में स्त्रीपुरुष की कामक्रीड़ा के दर्शन का निषेध किया गया है।

गता यदुत्सङ्गतले विशालतां द्रुमाः शिरोभिः फलगौरवेण ताम्।

कथं न धात्रीमतिमात्र नामितैः स वन्दमानानभिनन्दति स्म तान्।। 98 ।।

सरलार्थ-

जिसकी (पृथ्वी) गोद में बड़े हुए उस पृथ्वी (माँ) को फलभार से (अतिशय पुण्य से) लदे हुए तथा अत्यधिक झुके हुए अग्रभागों (शिरों) से वन्दना करने वाले उन वृक्षों (पुत्रें) का अभिनन्दन नल कैसे नहीं करते? इस पद्य में विशेषण साम्य के आधार पर वृक्षों के व्यवहार में पुत्र व्यवहार की प्रतीति होने से समासोक्ति अलंकार है।

भावार्थ-

जिस पृथ्वी की गोद में पलकर वृक्ष बड़े हुए थे और फलपुष्प के भार से बोझिल होकर जिनकी शाखाएँ अत्यधिक झुक गई थीं। मानो वे वृक उस धायरूप पृथ्वी की वन्दना कर रहे थे और नल उनको देखकर उनका बभिनन्दन करने लगे। जैसे लोक में जिस धाय की गोद में पल कर पुत्र बढ़ा होता है और पुण्य जन्य गौरव से युक्त होकर वह नतमस्तक होकर उसकी वन्दना करता है, ऐसा पुत्र अभिनन्दन के योग्य होता है। अतः नल उन फल- भारान्वित वृक्षों को देखकर बहुत प्रसन्न हुए ।

नृपाय तस्मै हिमितं वनानिलः सुधीकृतं पुष्परसैः सुधीकृतं पुष्परसैरहर्महः।

विनिर्मितं केतकरेणुभिः सितं वियोगिने{दत्त न कौमुदीमुदः। 99 ।।

सरलार्थ-

उपवन की आयु से शीतल किया गया, पुष्पों के पराग से अमृत तुल्य किया गया तथा केतकी के फूलों के परागों से श्वेत वर्ण किया गया भी दिन का तेज उस विरही राजा नल के लिए चाँदनी के सदृश आनन्द को नहीं दे सका। इस पद्य में शीतल वायु आदि कारणोके रहने पर भी नल के लिए सुख रूप् कार्य न होने से विाीतल वायु आदि कारणों के रहने पर भी नल के लिए सुख रूप् कार्य न होने से विशेषोक्ति अलंकार है।

भावार्थ-

यद्यपि दिन की घूष उपवन की हया से शीतल, पुष्प रसों से सुगन्धित एवं केतकी के रज से श्वेत वर्ण को होने से उसमें चाँदनी के समस्त गुण, शैत्य, सौगन्ध्य एवं श्वेतिमा विद्यमान थे, परन्तु राजा नल को उसमें चाँदनी का आनन्द नहीं प्राप्त हो रहा था, क्योंकि विरही व्यक्ति के लिए तो प्रत्येक सुखद बस्तु दुःख का ही कारण बननी है। दिन की धूप में वे चन्द्रिका गुण ही उगे और अधिक वेदना दायक हो रहे थे

वियोगभाजोऽपि नृपसय पश्यता तदेवप साक्षादमृतांशुमाननम्।

पिकेन रोषारुणचक्षुषा मुहुः कुहूरुताऽऽहूयत चन्द्रवैरिणी।। 100 ।।

सरलार्थ-

वियोगयुक्त होते हुए भी राजा नल के मुख को साक्षात् चन्द्रमा के रूप् में ही देखती हुई क्रोध से लाल नेत्रें वाली कोयल बार-बार कुहू शब्द से मानो चन्द्र वैरिणी (चन्द्रकला रहित अमावस्या) को बुला रही थी। इस पद्य में कोयल के कुहू-कुहू शब्द से अमावस्या के आह्नान की सम्भावना करने से उत्प्रेक्षा अलंकार है।

भावार्थ –

उस उपवन में अत्यधिक कामोद्दीपक परिस्तिथियों और वातावरण के होने पर भी बिरही राजा नल का मुख बन्द्रमा के समान सुन्दर दिख रहा बा। बन में 'कुहू कुहू' शब्द करती हुई लाल नेत्रों वाली कोयल ऐसी प्रतीत हो रही थी, मानो नल के मुख को चन्द्रमा समझ कर अत्यन्त क्रोध के साथ अपने शब्द चन्द्र वैरिणी अर्थात् चन्द्रकला से रहित अमावस्या तिथि को बुला रही हो। भाव यह हुआ कि राजा नल के वियोगी होते हुए भी उनके मुख की कान्ति नष्ट नहीं हुई थी और वह चन्द्रमा के समान सुन्दर था ।

अशोकमर्थान्वितनामताशया गतान् शरण्यं गृहशोचिनोऽध्वगान्।

अमन्यतावन्तमिवैष पल्लवैः प्रतीष्टकामज्वलदस्त्रजालकम्।। 101 ।।

सरलार्थ-

इस राजा नल ने पल्लवों के द्वारा कामदेव के जलते हुए अस्त्रसमूह को धारण किये हुए अशोकवृक्ष को यथार्थ नाम से युक्त होने की आशा से शरणागतों के लिए साधु तथा समीप आये हुए प्रियतमा की चिन्ता करने वाले पथिकों की रक्षा करता हुआ सा माना। अथवा कामदेव के जलते हुए अस्त्र को स्वीकार कर पथिकों को मारते हुए अशोक को नल ने वध करने में श्रेष्ठ माना। इस पद्य में इव शब्द का प्रयोग सम्भावना अर्थ में होने के कारण उत्प्रेक्षा अलंकार है।

भावार्थ-

नल ने लाल-लाल पल्लवों वाले अशोक वृक्ष को जब देखा, तबउन्हें ऐसा लगा कि मानो जहाँ शोक नहीं है, उसे अशोक कहते हैं' ऐसे सार्थक नाम की बाणा से पत्नी की

चिन्ता करने वाले पथिक इसके पास आते हैं। रक्षा करने में समर्थ यह अशोक उन पथिकों की रक्षा के लिए कामदेव के जलते हुए अस्त्रसमूह को अपने ही अंगो पर स्वीकार कर लिया है। क्योंकि सज्जन व्यक्ति अपने ऊपर शत्रुओं के प्रहार को सह कर भी शरणागत की रक्षा करते हैं।

विलासवापीतटवीचिवादनात् पिकालिगीतेः शिखिलास्यलाघवात्।
वनेऽपि तौर्यत्रिक माररराध तं क्व भोगमाप्नोति न भाग्यभाग्जनः।। 102 ।।

सरलार्थ-

क्रीडा सम्बन्धी बावली के तट पर तरंगों के वादन से, कोयलों और भ्रमरों के गीत से तथा मयूरों के विशेष नृत्य से नृत्य-गीत एवं वाद्य रूप संगीत ने नल की अराधना की। भाग्यशाली पुरुष को भोग कहाँ नहीं प्राप्त होता है? इस पद्य में पूर्वार्द्ध में वर्णित विशेष का उत्तरार्द्ध में वर्णित सामान्य के साथ समर्थन होने से अर्थान्तरन्यास अलंकार है।

भावार्थ-

उस वन में क्रीडा बावली के तट पर तरङ्गों के बाजे बज रहे थे । कोयल पञ्चमस्वर में कूजन कर रही थी, अमर गुजार कर रहे थे और मसूर लास्य नृत्य प्रस्तुत कर रहे थे। इस प्रकार भीत, नृत्य एवं बाद्य तीनों से तैयार किया गश संगीत वन में भी राजा नल की आराधना कर रहे थे। क्यों- कि भाग्यवान् मनुष्य को भोग विलास के साधन सर्वत्र प्राप्त हो जाते हैं। यद्यपि कामपीडित नल के लिए ये संगोत सुखद नहीं थे, परन्तु हैं तो ये सुख केके साधन ही। भले ही वे राजा नल को उस समय सुख न दे पा रहे हों।

इसका दूसरी प्रकार से भी अर्थ किया जा सकता है। खेद है कि (उक्त) नृत्य, गीत एवं वाय इस त्रितय संगीत ने वन में भो राजा नल को पीड़ित किया । विरह दशा में सभी सुखद वस्तुएँ दुःख का कारण बनती है। अतएव राजा नल राजमहल छोड़कर उपवन में चले आये थे, परन्तु यहाँ पर भी संगीतं सुख ने उनको दुःखी किया। वस्तुतः मनुष्य के भाग्य के अनुसार सुख- दुःख आदि के भोग सब जगह भोगने पड़ते हैं, चाहे जंगल हो या घर।

तदर्थमध्याप्य जनेन तद्वने शुका विमुक्ताः पटवस्तमस्तुवन्।
स्वरामृतेनोपजगुश्च सारिकास्तथैव तत्पौरुष गायनीकृताः।। 103 ।।

सरलार्थ-

लोगोंके द्वारा उस नल की स्तुति के लिए पढ़ाकर उस वन में छोड़े गये स्पष्ट वाणी से युक्त शुकों ने उनकी स्तुति की तथा उसी प्रकार उनके पौरुष की गायिका बनाई गई सारिकाओं ने अमृत तुल्य स्वर से गान किया।

भावार्थ –

उत्स वन में शुक-सारिकाओं को राजा नल की स्तुति करने के लिए तथा उनके पराक्रम का वर्णन करने के लिए सिखाया पढ़ाया गया था । अतः नल के पहुँ बने पर णुकों ने राजा की स्तुति की और सारिकाओं ने अपने मधुर स्वर में उनके पराक्रम का वर्णन किया।

इतीष्टगन्धाढ्यमटन्नसौवनं पिकोऽपिगीतोऽपि शुकस्तुतोऽपि च।
अविन्दतामोदभरं बहिश्चरं विदर्भसुभ्रूविरहेणनान्तरम्।। 104 ।।

सरलार्थ-

इस प्रकार अभीष्ट गन्ध से युक्त वन में भ्रमण करते हुए कोयलों के द्वारा गाये जाने पर तथा तोतों के द्वारा स्तुति किये जाने पर राजा नल ने बाह्य रूप से अतिशय आनन्द को प्राप्त किया, परन्तु दमयन्ती के विरह के कारण आन्तरिक रूप से आनन्द को प्राप्त नहीं किया। इस पद्य में सुख के कारणों के होने पर भी सुख की प्राप्ति न होने के कारण विशेषोक्ति अलंकार है।

भावार्थ-

जिस वन में चारों ओर खिले हुए फूलों से वातावरण सौरभ सम्पन्न यः, कोयतें कू-कू का गान कर रही थी और शुक राजा की स्तुति कर रहे थे। उस वन में राजा नल बाहरी रूप से अत्यधिक आनन्दित हो रहे थे, परन्तु दमयन्ती के विरह के कारण आन्तरिक रूर से वे अत्यधिक पीडित हो रहे थे। क्योंकि विरहावस्था में प्रत्येक सुखद सामग्री कप्ट ही प्रदान करती है।

करेण मीनं निजकेतनं दधद्द्रुमालवालाम्बुनिवेश शङ्कया।
व्यतर्कि सर्वर्तुघनेवने मधुं स मित्रमत्रनुसरन्निव स्मरः।। 105 ।।

सरलार्थ-

उस नल ने अपने चक्रवर्तित्व चिह्न मत्स्य को वृक्षों के थावलों के जल में प्रवेश करने की शङ्का से हाथ से धारण किये हुए, सभी ऋतुओं से सम्पन्न उस वन में अपने मित्र वसन्त को ढूँढते हुए कामदेव समझा। इस पद्य में नल को अपने मित्र वसन्त का अनुसरण करता हुआ कामदेव समझा। अतः उत्प्रेक्षा अलंकार है।

भावार्थ-

नल एक चक्रवर्ती राजा था। उसके हाथ में मत्स्य रेखा थी, जो बक्रवर्ती होने की सूचक मानी जाती है। मछली को जल से ही सर्वाधिक स्नेह होता है। अतः वह मछली कहीं पेड़ों के थालों के जल में न घुस जाय, इस आशंका से मानों नल उसे अपने हाथ में धारण किये हुए था। उस जंगल में सभी ऋतुएँ एक साथ विद्यमान थीं और मछली कामदेव की पताका मानी बाती है। अतः राजा नल ने मत्स्य रूपी पताका के कारण उस वन में अपनेमित्र वसन्त का अनुसरण करते हुए कामदेव समझा ।

स्वयं आकलन कीजिये-

अभ्यास प्रश्न 2

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये-

1. श्रीहर्ष के अनुसार ---- के अस्त्र से सन्तप्त होकर ब्रह्मा ने कमल का आश्रय लिया है।
2. कमदेव के पुत्र का नाम ---- है।
3. व्यलोकयच्चम्पक-----स शम्बरारेर्बलिदीपिका इव।
4. उच्चैःश्रवा और चन्द्रमा को समुद्र से उत्पन्न होने के कारण श्रीहर्ष ने उन्हें ----- कहा है।
5. तमिस्रपक्षत्रुटिकुट भक्षितं कलाकलापं किल ---- वमन्।

19.4 सारांश

इस इकाई में वन के प्राकृतिक शोभा का चित्रण किया गया है। जिसके अन्तर्गत कवि ने वन के विभिन्न फलों और फूलों की शोभा के विषय में कवि ने अरण्यपाल के माध्यम से अवगत करवाने का प्रयास किया गया है। इसमें केतकी, पलाश, चमेली और अनार और आम के वृक्षों का वर्णन किया गया है।

19.5 कठिन शब्दावली

अलिस्त्रजा=भ्रमरों की पंक्तियाँ
चाम्पेय=चम्पा की कली
धूमकेतु=अशुभ सूचक
नागकेशरम्=नागकेशर के फूलों को
पातुका:=दौड़ने वाले
मालूरफलं=बेल फल
क्षतं=फैलते हुए
मुनिद्रुम:=अगस्त्य के वृक्ष
कोरकित:=कलियों से युक्त
पिकेन=कोयल
चंद्रवैरिणी=अमावस्या को
शिखिलास्यलाघवात्=मयूरों के नृत्य की निपुणता

19.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न- 1 1. चम्पा की कली 2. कामदेव से 3. कामदेव 4. विल्व फल 5. नल

अभ्यास प्रश्न- 2 1. कामदेव 2. अनिरुद्ध 3. कोरकावली: 4. सहोदर 5. वैधवं

19.7 सहायक ग्रन्थ

1. नैषधचरितमहाकाव्यम् (प्रथम सर्ग) श्रीहर्ष, व्याख्याकार: डॉ- सुरेन्द्र देव शास्त्री, चौखम्बा संस्कृत सीरीज वाराणसी।

2. नैषधचरितमहाकाव्यम् (प्रथम सर्ग) श्रीहर्ष, व्याख्याकार: डॉ- देवनारायण मिश्र, साहित्य भण्डार सुभाष बाजार मेरठ।
3. संस्कृत साहित्य का इतिहास, बलदेव उपाध्याय, शारदा निकेतन वाराणसी।
4. संस्कृत साहित्य कोश, राजवंश सहाय हीरा, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

19.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. नैषधीयचरित के नायक नल के पराक्रम का वर्णन कीजिए।
2. निम्नलिखित पद्यों की व्याख्या कीजिये-

   प्रथमसर्ग- 92, 93, 95,96, 97 100,101, 103, 105

विंशति अध्याय
इकाई-20
नैषधीयचरित : प्रथम सर्ग (पद्य 106-120)

संरचना

20.1 प्रस्तावना

20.2 उद्देश्य

20.3 नैषधीयचरित महाकाव्य के प्रथम सर्ग के 106-112 पद्यों का सरलार्थ

- स्वयं आकलन कीजिए

20.4 नैषधीयचरित महाकाव्य के प्रथम सर्ग के 113-120 पद्यों का सरलार्थ

- स्वयं आकलन कीजिए

20.5 सारांश

20.6 कठिन शब्दावली

20.7 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

20.8 सहायक ग्रन्थ

20.9 अभ्यास के लिए प्रश्न

20.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों, इस इकाई में नैषधीयचरित के प्रथम सर्ग के 106-120 पद्यों का अलंकार सहित अध्ययन किया जायेगा। इसके अन्तर्गत भी प्राकृतिक सौन्दर्य का वर्णन प्रस्तुत किया जायेगा।

20.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जानने में सक्षम होंगे-

- नैषधीयचरित के प्रथम सर्ग के पद्यों का सरलार्थ।
- नैषधीयचरित में प्रयुक्त अलंकारों के वर्णन भी भी सक्षम हो जायेंगे।
- नैषधीयचरित में प्रयुक्त सूक्तियों को समझने में सक्षम हो जायेंगे।
- प्रथम सर्ग की व्याख्या करने में भी निपुण हो जायेंगे।

20-3 नैषधीयचरित महाकाव्य के प्रथम सर्ग के 106-120 पद्यों का सरलार्थ

लताऽबलालास्यकलागुरुस्तरु प्रसूनगन्धोत्करपश्यतो हरः।
असेवतामुं मधुगन्ध वारिणि प्रणीतलीलाप्लवनो वनानिलः।। 106 ।।

सरलार्थ-

लता रूपी अबलाओं के नृत्य कला का गुरु, वृक्षों के पुष्पों के गन्ध समूह को चुराने वाले तथा मधु से सुगन्धित जल में जलक्रीडा करने वाले वन की वायु ने उस नल की सेवा की। इस पद्य में लता में अबला का वायु में पश्यतोहर अर्थात् चोर का आरोप होने से रूपक अलंकार है।

भावार्थ –

उस वन में हवा से लतायें झूम रही थीं, जिससे ऐसा प्रतीत होता था कि मानो पवन लता रूपिणी नायिकाओं को मधुर नृत्य सिखाने का गुरु है। खिले हुए पुष्पों की गन्ध से वायु सुगन्धित थी। पुष्प रस रूपी या पुष्प रस से युक्त अतएव सुगन्धित जल में अथवा 'मधुगन्ध' नामक सरोवर के अल में जल क्रीडा करने वाला वन पवन उस राजा नल की रोबा कर रहा था।

अथस्वमादाय भयेन मन्थनाच्चिरत्नरत्नाधिकमुच्चितं चिरात्।
निलीय तस्मिनन्निवसन्नपान्निधिर्वने तडागो ददृशेऽवनी भुजा।। 107 ।।

सरलार्थ-

इसके बाद मानो मन्थन के भय से चिरकाल से संचित प्राचीन रत्नों से युक्त सम्पत्ति को लेकर उस वन में छिपकर निवास करते हुए समुद्र के समान जलाशय को राजा नल ने देखा। इस पद्य में विशाल जलाशय द्वारा उस वन में छिपने की सम्भावना होने से उत्प्रेक्षा अलंकार है।

भावार्थ-

उसके बाद राजा नल ने उम उपवन में विशाल जलाशय को देखा । वह जलाशय मानो समूद्र हो, और कहीं उसके द्वारा संचित किये गये प्राचीन रत्न रूप मम्पत्ति को प्राप्त करने के लिये उमका पुनः मन्थन न किया जाय, इस भय से वह उस वन में प्रियकर निवास कर रहा था। लोक में भी कोई धनवान् व्यक्ति अपने धन को लेकर चोरी के भय से कहीं छिपकर रहता है। वह जलाशय वस्तुतः राजा नल का क्रीडा सरोवर था, जो समुद्र के समान अत्यन्त गम्भीर तथा विविध रलों से युक्त था ।

पयोनिलीनाभ्रमुकामुकावली रदाननन्तोरगपुच्छसुच्छवीन्।
जलार्धरुद्धस्य तटान्तभूमिदो मृणालजालस्य मिषाद् बभार यः।। 108 ।।

सरलार्थ-

जो तालाब पानी से आधे ढके हुए तथा तटप्रान्त भूमि का भेदन करने वाले मृणाल समूह के बहाने से शेषनाग की पूँछ की छवि वाले, जल में डूबे हुए अभ्रमुकामुक (ऐरावत) के समूह के दाँतों को धारण किये हुए था। अभ्रमु ऐरावत की पत्नी का नाम है। समुद्र में

एक ऐरावत था, यहाँ एक है। इसलिए इस पद्य में उपमान की अपेक्षा उपमेय के आधिक्य के कारण व्यतिरेक अलंकार है।

भावार्थ-

पूर्व श्लोक में कहा गया है कि उस उपवन के तालाब ने समुद्र की शोभा को बुरा लिया है। अतः उनके द्वारा समुद्र धर्मों को धारण किया जाता है उसी का वर्णन करते हुए कवि कहता है कि समुद्र में एक ऐरावत निकला था, परन्तु उस तालाब में अनेकों ऐरावत हुये हुए थे । अतः वह समुद्र में भी घेरेट था। उम तालाब में पानी में आधे हिने हुए था तट की भूमि के ऊपर आये निकले हुन् मृणाल समूह ऐसे मालुम पड़ते थे कि वे गवनाग की पूंछ के समान पानी में डूबे हुए ऐरावतों के दाँत ममूह हो । अतः वह नहाय अनेकों ऐगवनों से युक्त था ।

तटान्तविश्रान्त तुरङ्गमच्छटास्फुटानुबिम्बोदयचुम्बनेन यः।

बभौचलद्वीचिकशान्तशातनैः सहस्त्रमुच्चैःश्रवसामिव श्रयन्।। 109 ।।

सरलार्थ-

वह तालाब तट पर विश्राम करने वाले घोड़ों की पंक्तियों के स्पष्ट प्रतिबिम्ब के सम्पर्क से तरंगरूपी चाबुक की छोर के प्रहारों से चञ्चल हजारों उच्चैःश्रवस नामक घोड़ों को मानो धारण करता हुआ सा सुशोभित हो रहा था। इस पद्य में अश्वों के प्रतिबिम्ब में उच्चैःश्रवा की सम्भावना की गई है, अतः उत्प्रेक्षा अलंकार है।

भावार्थ -

चावुक के प्रहार से घोडे चञ्चल होकर बलते हैं। नल के द्वारा लाए गये हजारों घोड़े उस जलाशय के तट पर विश्राम कर रहे थे, जिनकी परछाई उसमें पड़ रही थी और उस तालाब में उठती हुई चाबुक रूप तरंगे मानो उन प्रतिविम्बित अश्वों पर प्रहार कर रही थी. जिसमे वे चञ्चल होकर उच्चैः श्रवा के समान तेज भामते हुए लग रहे थे । अतः उस तालाब में हजारों उच्चैः श्रवाओं के होने के कारण वह समुद्र से भी श्रेष्ठ था, क्योंकि समुद्र में तो एक ही उच्चैः श्रवा था, जबकि उसमें अनेकों उच्चैः श्रवा थे ।

सिताम्बुजानां निवहस्य यश्छलाद् बभावलिश्यामलितोदरश्रियाम्।

तमः समच्छायकलङ्कसङ्कुलं कुलं सुधांशोर्बहलं वहन् बहु।। 110 ।।

सरलार्थ-

जो तालाब भ्रमरों से श्यामवर्ण की मध्यभाग की कान्ति से युक्त, श्वेत कमलों के समूह के बहाने से अन्धकार के समान कृष्ण वर्ण के कलघङ्क से युक्त चन्द्रमा के परिवार समूह को धारण करता हुआ अत्यन्त सुशोभित हो रहा था। इस पद्य में तालाब को अनेक

श्वेत कमलरूपी चन्द्रमा को धारण करने वाला कहा है, इसलिए समुद्र की अपेक्षा इस तालाब की श्रेष्ठता बताने से व्यतिरेक अलंकार है।

भावार्थ-

उस तालाब में अत्यधिक सफेद कमल खिले हुए थे और उन पर काले-काले भ्रमर बैठे थे, इससे वे कमल समूह कल युक्त चन्द्रमा के समान प्रतीत हो रहे थे । एतावत। श्वेत कमल रूप चन्द्र समूह को धारण करने वाला वह तालावं एक ही चन्द्रमा को धारण करने वाले समुद्र से श्रेष्ठ था ।

रथाङ्गभाजा कमलानुषङ्गिणा शिलीमुखस्तोमसखेन शार्ङ्गिणा।
सरोजिनीस्तम्ब कदम्बकैतवान्मृणाल शेषाहिभुवान्वयायि यः।। 111 ।।

सरलार्थ-

जो तालाब चक्रवाक से युक्त, कमलों से सम्पृक्त भ्रमर समूह रूप सहचर वाले तथा मृणालरूप शेषनाग से उत्पत्ति स्थल होने से कमलिनी के गुच्छों के समूह के कपट से सुदर्शन चक्रयुक्त, लक्ष्मी से संसक्त, भ्रमर समूह के समान तथा मृणाल शेषनाग की शैया वाले विष्णु से अनुगत था। इस पद्य में शिलीमुखस्तोम सखेन तथा मृणालशेषाहिभुवा में उपमा अलंकार है।

भावार्थ –

जो सरोवर कमलिनी के गुच्छों के समूह के व्याज से विष्णु से अनुरत था, क्योंकि विष्णु वक्त सुदर्शन से मुक्त है, लक्ष्मी उनके साथ रहती है, भ्रमर के समान श्याम वर्ष के हैं तथा मृणाल सदृश शेष नाग की शैय्या पर पायन करते हैं, उसी तात कमलिनी समूह भी चक्रवाक पत्नी से युक्त है, कमलों से संसक्त है, भ्रमर रूपी सहचरों से युक्त है तथा शेषनाग के समान मृणाल का उत्पत्ति स्थल है। इस प्रकार विष्णु की सभ्पूर्ण विशेषताओं से विशिष्ट होने के कारण कमलिनी स्तम्ब समूह के बहाने से वह जलाशय विष्णु से अनुगत होता हुआ प्रतीत हो रहा था।

तरङ्गिणीरङ्कजुषः स्ववल्लभातरघलेखा बिभराम्बभूवयः।
दरोद्गतैः कोकनदौघकोरकैर्धृतप्रवालाघ्कुरसंचयश्च यः।। 112 ।।

सरलार्थ-

जो तालाब गोद में स्थित अपनी प्रिया तरग लेखा रूपिणी नदियों को धारण करता था तथा जो कुछ खिले हुए लाल कमलों की कलियों से मूँगों के अघ्कुर समूह को धारण कर रहा था। इस पद्य में तरगों में नदियों तथा लाल कमल की कलियों में मूँगों के अंकुरों का आरोप होने से रूपक अलंकार है।

भावार्थ –

समुद्र में अनेकों नदियाँ आकर मिलती है, जो उसकी प्रियतमा हैं और वह लाल-लाल मूगों के अंकुर समूह को धारण करता है। उसी प्रकार वह जलाशय तरङ्ग लेखा रुगिणी नदियों को धारण करता था, जो उसकी प्रियतमा थीं और दाल कमलों की अधखिली कलियाँ ही विद्रुम (मूंगा) थीं । ५९. कार मूंगा रूप रक्त कमल की अघखिली कलियों तथा पिया तरंग रूप नदियों को धारण करने वाला वह जलाशय सागर के समान था ।

स्वयं आकलन कीजिए –

अभ्यास प्रश्न 1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए –

1. वन में किसने राजा नल की सेवा की थी?
2. किसने प्राचीन रत्नों से युक्त सम्पति को छिपकर रखने वाले जलाशय को देखा?
3. ऐरावत की पत्नी का नाम क्या था?
4. कौन अनेक श्वेत कमलरूपी चंद्रमा को धारण करने वाला है?
5. कौन प्रिय नदियों को धारण करने वाला है?

20.4 नैषधीयचरित महाकाव्य के प्रथम सर्ग के 113-120 पद्यों का सरलार्थ

महीयसः पङ्कजमण्डलस्य यश्छलेन गौरस्य च मेचकस्य च।
नलेन मेने सलिले निलीनयोस्त्विषं विमुञ्चन्विधुकालकूटयोः।। 113 ।।

सरलार्थ-

जो तालाब नल के द्वारा महान् श्वेत एवं नील कमल समूह के छल से जल में छिपे हुए चन्द्रमा एवं कालकूट नामक विष की कान्ति को छोड़ता हुआ समझा। इस पद्य में श्वेत और नील कमल में श्वेत और नीली कान्ति को छोड़ने की सम्भावना होने से उत्प्रेक्षा अलंकार है।

भावार्थ-

उस जलाशय में अत्यधिक श्वेत एवं नील कमल खिले हुए थे. जिनकी शुभ एवं नोली कान्ति उस पर पड़ी थी। इससे ऐगा लगता था मानो यह जलाशय इन शुभ एवं नील कमलों के बहाने चन्टमा और हलाहल को धारण कर रहा है। यह श्वेत एवं शीनीकान्त नहीं की है। अतः यह जलाशय चन्द्रमा और कालकुट को धारण हुन वा । गमुद्र के समान है।

चलीकृता यत्र तरङ्गरिघणैरबालशैवाललता परम्पराः।
ध्रुवं दधुर्वाडवहव्यवाडवस्थितिप्ररोहत्तमभूमधूमताम्।। 114 ।।

सरलार्थ-

जिस तालाब में लहरों के चलने से चलायमान बड़े-बड़े शैवाल लता समूहों ने वाडवानल के निवास से अत्यधिक निकलती हुई घनी धूम राशि के स्वरूप को धारण कर लिया था, ऐसा प्रतीत होता है। इस पद्य में शैवाल लता समूह में वडवाग्नि की सम्भावना होने से उत्प्रेक्षा अलंकार है।

भावार्थ-

उस जलाशय में बड़ी-बड़ी शैवाल-लताएँ (सेंबार) थीं, जो चञ्चल तरंगों से चलायमान थी और उनका रंग धूमिल था। इससे ऐमा प्रतीत होता था. मानो उस तालाब के भीतर वाहवाग्नि का निवास हो, और ये शैवाल लता? उसी की धनी धूम राशि हैं, जो नल के ऊपर दिखाई दे रही हैं।

प्रकाममादित्यमवाप्यकण्टकैः करम्बितामोदभरं विवृण्वती।
धृतस्फुटश्रीगृहविग्रहा दिवा सरोजिनी यत्प्रभवाऽप्सरायिता।। 115 ।।

सरलार्थ-

जिस तालाब में उत्पन्न सूर्य को प्राप्त करके, अतिशय कण्टकों से युक्त, सुगन्ध रूप सम्पत्ति को प्रकट करती हुई तथा दिन में विकसित कमल पुष्प रूप शरीर को धारण करने वाली कमलिनी, इन्द्र देव को प्राप्त करके, अतिशय रोमा×चों से युक्त, आनन्दातिशय को प्रकट करती हुई तथा स्वर्ग से धारण किये गए स्पष्ट शोभा धाम शरीर को धारण करने वाली अप्सराओं के समान आचरण करती थी। इस पद्य में कमलिनी अप्सराओं के समान आचरण कर रही थी, अतः उपमा अलंकार है।

भावार्थ-

उस जलाशय में उत्पन्न कमलिनी अप्सराओं के समान आचरण कर रही थीं। जिस प्रकार इन्द्र को प्राप्त कर, रोमाञ्चों से व्याप्त अतिशय आनन्द को प्रकट करती हुई तथा स्वर्ग से धारण किये प्रकाशमान शोभा-धाग मष शरीर वाली अग्भरायें सुशोभित होती हैं, उसी प्रकार गुर्व को प्राप्त कर, कोटों से व्याप्त, सुगन्ध रंग आनन्द को प्रकट करती हुई तथा दिन में विकसित कमल पुष्य रूप पारीर को धारण करने वाली कमलिनी उरा जलाशय में गुशोभित हो रही थी।

यदम्बुपूरप्रतिबिम्बितायतिः मरुत्तरङ्गैस्तरलस्तटद्रुमः।
निमज्ज्य मैनाकमहीभृतः सतस्तातान पक्षान्धुवतः सपक्षताम्।। 116 ।।

सरलार्थ-

जिसके जल प्रवाह में प्रतिबिम्बित लम्बाई वाला तथा वायु से चालित तरंगों से चञ्चल किनारे का वृक्ष (समुद्र के) भीतर छिपकर स्थित (अपने) पंखों को हिलाते हुए

मैनाक पर्वत की समानता को विस्तृत कर रहा था। इस पद्य में वृक्ष की पर्वत से समानता बताने से उपमा अलंकार है।

भावार्थ-

जलाशय के तट के जदा उसके जन में प्रतिबिम्बित हो रहे थे। बायु से चालित तरंगों ने वृत्तों की परछाई चञ्चन श्री अर्थात् हिंज रही थी। इससे ऐसा प्रतीत होता था कि जिस प्रकार समुद्र के जल में कर मैनाकपरन्तु अपने पंखों को हिलाता है, उसी प्रकार ये वृक्ष रूपी पर्वत अपने पंख को हिला रहे थे। यदि समुद्र में मैनाक रहता है तो यहाँ भी वृक्षों के प्रतिविम्व विद्यमान थे। इससे वह जलाशय समुद्र के समान था ।

पयोधिलक्ष्मीमुषि केलिपल्लवे रिरंसुहंसीकलनादसादरम्।
स तत्र चित्रं विचरन्तमन्तिके हिरण्यमयं हंसमबोधि नैषध।। 117 ।।
प्रियासु बालासु रतिक्षमासु च द्विपत्रितं पल्लवितय्च विभ्रतम्।
स्मरार्जितं रागमहीरुहाड्कूरं मिषेण चंच्वोश्चरणद्वयस्य च।। 118 ।।

सरलार्थ-

उस राजा नल ने समुᵃद्र की शोभा को चुराने वाले क्रीड़ासरोवर में रमण की इच्छुक हँसिनियों के अव्यक्त मधुर ध्वनि के प्रति आदर भाव रखने वाले, समीप में ही विचरण करने वाले, अद्‌भुत, सौवर्णिक तथा बालाओं और रमणयोग्य प्रियाओं के विषय में दो चोंचों और दो चरणों के बहाने दो पत्तों और किसलयों वाले कामदेव द्वारा सम्मोहित अनुराग रूपी वृक्ष के अंकुर को धारण करने वाले हँस को देखा। इस पद्य में अनुराग में वृक्षाघ्कुर का आरोप होने से रूपक अलंकार है।

भावार्थ-

समुद्र को शोभा के समान शोभा बाले उस क्रीडा सरोवर के निकट हो विचरण करने वाले एक अद्‌भुत और सुवर्णमय हस को राजा नल ने देखा। वह हंस हंसियों की व्यक्त मधुर रुवनि को सुनने का इच्छुक तथा बालाप्रियाओं का सुरात क्रीडा में स्मथ युवती, प्रियाओं के विषय मेंदोनों चरणों के बहाने से दो पत्तों और किसलयों से युक्त कामोत्पन्न अनुराग रूपी वृक्ष के अंकुर को धारण करने वाला था। बाला प्रियाओं में काम भावना कम होने से कामोंत्पादित अनुराग रूपी वृक्ष का अंकुर केवल दो पत्तियों वाला था। जिसे वह हंस चच्चुपुट के बहाने से धारण करता था।

प्रथम श्लोक का अर्थ आत्मिक पक्ष में भी किया जाता है- समुद्र की लक्ष्मी को चुराने वाले तथा क्रीडा सरोवर रुप अर्थात् विस्तृत होने के कारण समुद्र के समान नवा विनाश मील होने के कारण सरोवर तुल्य मरीर में विचरण बोर करन बान अर्थात् परमात्मा को कोई योगी देखता है, जो हंस (परनारमा) हगो (यक्ति) के कननाद को मुनने के लिए

इच्छुक रहता है और जो हिरण्मय । वेद में पश्यामा कोहि गया है। जैसे कोई मोक्षावा गर गोध्या को देखता है, वैसे ही नल ने दूरा हुन को देखा।

महीमहेन्द्रस्तमवेक्ष्य स क्षणं शकुन्तमेकान्तमनोविनोदिनम्।
प्रिया वियोगाद्विधुरोऽपि निर्भरं कुतूहलाकानतमना मनागभूत।। 119 ।।

सरलार्थ-

पृथ्वीपति नल अत्यन्त मनोविनोदकारी उस पक्षी को क्षणभर देखकर प्रिया के वियोग से अत्यधिक व्याकुल होते हुए भी कुछ कौतुक से आक्रान्त चित्त वाले हो गये। इस पद्य में अनुप्रास अलंकार है।

भावार्थ –

अत्यन्त मनोविनोदी उस विचित्र सीनिक हंस को देखकर प्रिया के वियोग से दुखी होने पर भी राजा नल थोड़ी देर के लिये जानन्दित हो उठे।

अवश्यभव्येष्वनवग्रहा यया दिशा धावति वेधसः स्पृहा।
तृणेन वात्येव तयाऽनुगम्यते जनस्य चित्तेन भृशावशात्मना।। 120 ।।

सरलार्थ-

अवश्यम्भावी विषयों में निर्बाध विधाता की इच्छा जिस दिशा की ओर चलती है, उसी ओर अति पराधीन आत्मा वाले व्यक्तियों का चित्त आँधी के पीछे तिनके के समान चलता है। इस पद्य में मनुष्य का मन विधि के विधि की इच्छा का अनुगमन वैसे ही करता है जैसे तृण वात्या का अनुगमन करता है। अतः उपमा अलंकार है।

भावार्थ –

शुभाशुभादि विषयों में विधाता की इच्छा प्रमुख होती है, उसमें कोई बाधा नहीं बाती है व्यक्ति का मन विवश होकर विधि के अनुकूल ही कार्य करता है, उसकी बंसी ही बुद्धि हो जाती है। जैसे तिनका तेज चायु के भोगे से उड़कर हवा को दिशा में ही जाता है। वैसे ही व्यक्ति पामने था विधि प्रेरित होकर तदनुकूल ही कार्य करता है। तभी तो दमयन्ती के विवाह के अनुकूलरी विधि प्रति होकर राजा नल श्री एस के विषय में कोनुक हुआ ।

स्वयं आकलन कीजिए –

अभ्यास प्रश्न 2

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए –

1. किसने श्वेत एवं नील कमल समूह के छल से छुपे चंद्रमा को देखा?
2. किसने धूम राशि के स्वरूप को धारण कर लिया था?
3. किसमे अप्सराये आचरण करती थी?

4. किसके जल प्रवाह में मैनाक पर्वत विचरण कर रहा था?
5. किसने समुन्द्र की शोभा को चुराने वाली हँसनियों को देखा?

20.5 सारांश

इस इकाई में वन की सुन्दरता का वर्णन करते हुए कहा गया है कि वन की हवाएँ लताओं को इस प्रकार झूमने पर विवश करती है जिसप्रकार एक गुरु अपने नृत्य से शिष्य को झूमने पर विवस करता है। खिले हुए पुष्पों की सुगन्ध से वायु भी सुगन्धित हुई दर्शायी गई है। इसमें राजा नल को विशाल जलाशय का अवलोकन करते हुए कवि ने दर्शाया गया है। कवि ने इस जलाशय की शोभा के आगे समुद्र की शोभा को भी तुच्छ प्रकट किया है। यही इस इकाई का सार भी है।

20-6 कठिन शब्दावली

मधुं=वसंत ऋतु	वेधस:=ब्रह्म की
चिरात्=बहुत समय से	अपानिधि=समुद्र के समान
सुधांशोबर्हुलं=चंद्रों को धारण करने वाला	स्पृहा=इच्छा
पंकजमण्डलस्य=कमलसमूह	सलिले=जल में
तरंगङ्गिगणै=तरंगों के कम्पन से	दधु:=धारण करना
सरोजिनी=तालाब से उत्पन्न कमलिनी	केलिप्लवले=विहार सरोवर
मधुगन्धवारिणी=मकरंद के सौरभ से पूर्ण	
रथाङ्गभाजा=सुदर्शन चक्र को धारण करने वाला	

20.7 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न- 1	1. वनरक्षक ने	2. नल ने	3. अभ्रमु
	4. तालाब को	5. तालाब	
अभ्यास प्रश्न- 2	1. नल ने	2. तालाब ने	3. कमल पुष्प
	4. तालाब के	5. नल ने	

20.8 सहायक ग्रन्थ

1. नैषधचरितमहाकाव्यम् (प्रथम सर्ग) श्रीहर्ष, व्याख्याकार: डॉ- सुरेन्द्र देव शास्त्री, चौखम्बा संस्कृत सीरीज वाराणसी।
2. नैषधचरितमहाकाव्यम् (प्रथम सर्ग) श्रीहर्ष, व्याख्याकार: डॉ- देवनारायण मिश्र, साहित्य भण्डार सुभाष बाजार मेरठ।
3. संस्कृत साहित्य का इतिहास, बलदेव उपाध्याय, शारदा निकेतन वाराणसी।

4. संस्कृत साहित्य कोश, राजवंश सहाय हीरा, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

20.9 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. नैषधीयचरित की नायिका दमयन्ती पर संक्षिप्त निबन्ध लिखिए।
2. निम्नलिखित पद्यों की व्याख्या कीजिये-

   प्रथमसर्ग- 109, 111, 112, 114 , 115, 117, 118, 120

एकविंशति अध्याय
इकाई-21
नैषधीयचरित : प्रथम सर्ग (पद्य 121-135)

संरचना

21.1 प्रस्तावना
21.2 उद्देश्य
21.3 नैषधीयचरित महाकाव्य के प्रथम सर्ग के 121-127 पद्यों का सरलार्थ
- स्वयं आकलन कीजिए

21.4 नैषधीयचरित महाकाव्य के प्रथम सर्ग के 128-135 पद्यों का सरलार्थ
- स्वयं आकलन कीजिए

21.5 सारांश
21.6 कठिन शब्दावली
21.7 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर
21.8 सहायक ग्रन्थ
21.9 अभ्यास के लिए प्रश्न

21.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों इस इकाई में नैषधीयचरित के प्रथम सर्ग के 121-135 पद्यों का अलंकार सहित अध्ययन किया जायेगा। इसमें हँस की सुन्दरता को चित्रित करने का प्रयास किया गया है। कवि ने हँस को स्वर्णकमल के समान दर्शाया गया है। कवि ने राजा नल के द्वारा हँस को पकड़वाकर एक कारुणिक दृश्य को पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

21.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जानने में सक्षम होंगे-

- नैषधीयचरित के प्रथम सर्ग के पद्यों का सरलार्थ।
- नैषधीयचरित में प्रयुक्त अलंकारों के वर्णन भी भी सक्षम हो जायेंगे।
- नैषधीयचरित में प्रयुक्त सूक्तियों को समझने में सक्षम हो जायेंगे।
- प्रथम सर्ग की व्याख्या करने में भी निपुण हो जायेंगे।

21.3 नैषधीयचरित महाकाव्य के प्रथम सर्ग के 121-127 पद्यों का सरलार्थ

अथावलम्ब्य क्षणमेकपादिकां तदा निदद्रावुपपल्वलं खगः।
स तिर्यगावर्जितकन्धरः शिरः पिधाय पक्षेण रतिक्लमालसः।। 121 ।।

सरलार्थ-

इसके पश्चात् उस समय रति जन्य खेद से अलसाया हुआ वह पक्षी (हंस) एक पैर की स्थिति का आश्रय लेकर, गर्दन तिरछी किये हुए तथा पंख से सिर को ढककर क्षणभर के लिए जलाशय के तट पर सो गया। इस पद्य में हंस की निद्रा की क्रिया का यथावत् वर्णन होने से स्वभावोक्ति अलंकार है।

भावार्थ-

रति क्रीडा के अनन्तर तज्जन्य खेद से अलसाया हुआ वह पक्षी एक पैर की स्थिति का आश्रय लेकर, गर्दन तिरछी करके तथा एक पैर से सिर ढक कर वहीं तालाब के किनारे पर सो गया। यह घटना नल की अभीष्ट सिद्धि के अनुकूल थी।

स नालमात्मानननिर्जितप्रभंयानतं काय्चनमम्बुजनम किम्।

अबुद्ध तं विद्रुमदण्डमण्डितं स पीतमम्भः प्रभुचामरं नु किम्।। 122 ।।

सरलार्थ-

उस नल ने उस हँस को अपने मुख की कान्ति से जीते गये लज्जा से नत नाल सहित स्वर्णमय कमल समझा क्या? अथवा मूँगों के दण्ड से मण्डित पीला जल के स्वामी वरुण का चामर समझा क्या? इस पद्य में नल को हँस के विषय में कमल अथवा वाय में कमल अथवा वण का चँवर होने का सन्देह होने से सन्देहालंकार है।

भावार्थ –

अपने लाल एक चरण से बैठे रहने के कारण, तथा नीचे मुख किये हुए होने के कारण उस हंस को नल ने अपने मूख की शोभा से पराजित अतएव नीचे मूख किये हुए नाल सहित स्वर्ण कमल समझा अथवा नल ने उसे लाल मूंगों से जटिल दण्ड वाला वरुण का चमर समझा। अर्थात् एक पैर से सोया हुआ वह हंस रक्त नाल वाले सुवर्णमय कमल के समान तथाविद्रुम दण्ड बाले सुवर्णमय बरुण के चमार के समान प्रतीत हो रहा था ।

कृतावरोहस्य हयादुपानहौ ततः पदे रेजतुरस्य बिभ्रती।

तयोःप्रवालैर्वजयोस्तथाम्बुजैर्नियोद्धकामे किमु बद्धवर्मणो।। 123 ।।

सरलार्थ-

तदनन्तर घोड़े से उतरे हुए उनके (नल के) जूते धारण किये हुए पैर मानों उन दोनों वनों (उपवन और जल) के किसलयों और कमलों से युद्ध करने की इच्छा से कवच बाँधे हुए शोभित हो रहे थे। इस पद्य में पैरों के द्वारा युद्ध की सम्भावना होने से उत्प्रेक्षा अलंकार है।

भावार्थ-

जब राजा नल अपने घोड़े से नीचे पृथ्वी पर उतरे तो पैरों में जूते पहने हुए थे। अतः जूते को धारण किये हुए नल के पैर ऐसे लग रहे थे मानो उपवन के किसलयों और

सरोवर के कमलों से युद्ध करने की इच्छा से कवच धारण किये हुए थे। चूंकि नल के चरण नव किसलय तथा कमल के समान सुन्दर थे । अतः वे अपने प्रति पक्षी को देखकर उनके सौन्दर्य वैभव को कैसे सहन कर सकते थे ? इस लिए उनसे युद्ध के लिए उद्यत हो गये ।

विधायमूर्तिकपटेन वामनीं स्वयं बलिध्वंसि विडम्बिनीमयम्।
उपेतपार्श्वश्चरणेन मौनिना नृपः पतङ्ग समधत्त पाणिना।। 124 ।।

सरलार्थ-

यह राजा नल स्वयं कपट से नारायण के समान लघु मूर्ति को धारण करके शब्द रहित चरण से पास जाकर हाथ से पक्षी (हँस) को पकड़ लिया। इस पद्य में नल ने नारायण के समान मूर्ति को धारण किया। अतः उपमा अलंकार है।

भावार्थ-

जब भगवान् विष्णु को बलि को पकड़ने के लिए बामन मूति अर्थात् वामनावतार धारण करना पड़ा था। उसी प्रकार राजा नल को भी हंस को पकड़ने के लिए अपने शरीर को छोटा करना पड़ा और अपने शरीर को छोटा करके उन्होंने चुपचाप धीरे-धीरे दबे पाँव से हंस के पास जाकर उसे अपने हाथ से पकड़ लिया ।

तदात्तमात्मानमवेत्य संभ्रमात् पुनः पुनः प्रायसदुत्प्लवाय सः।
गतो विरुत्योड्डयने निराशतां करौ निरोद्धुर्दशतिसम केवलम्।। 125 ।।

सरलार्थ-

तब वह (हँस) अपने को पकड़ा हुआ जानकर भय से बार-बार उड़ने के लिए प्रयास करने लगा। उड़ने में निराशा को प्राप्त हुआ विशिष्ट शब्द करके ग्रहीता के हाथों को केवल काटने लगा। इस पद्य में हँस की स्वाभाविक क्रिया का वर्णन होने से स्वभावोक्ति अलंकार है।

भावार्थ-

हस अपने को पकडा समझकर घबड़ाहट से बार-बार उड़ने का प्रयास करने लगा और उड़ने में असमर्थ होने पर चिल्ला-चिल्ला कर राजा नल के हाथों को काटने लगा ।

स सम्भ्रमोत्पातिपतत्कुलाकुलं सरः प्रपाद्योत्कयतानुकम्पिताम्।
तनूर्मिलोलैः पतगग्रहान्नृपं न्यवारयद्वारिरुहैः करैरिव।। 126 ।।

सरलार्थ-

भयपूर्वक उड़ते हुए पक्षी-समूह से व्याप्त तथा ऊपर उठते हुए जल के कारण उन्मन होने के कारण दयाभाव को प्राप्त अथवा कम्पन को प्राप्त वह सरोवर लहरों से च×चल कमलरूपी हाथें से उस नल को पक्षी पकड़ने से मना सा कर रहा था। इस पद्य में जलाशय के द्वारा नल को पक्षी के पकड़ने से रोकने की सम्भावना होने से उत्प्रेक्षा अलंकार है।

भावार्थ –

नल के द्वारा हंस के पकड़े जाने पर उस सरोवर में रहने वाले सभी पक्षी श्रय के कारण एक साथ उड़ने लगे। उनके पंचों की हवा से तालाच का जस्र चञ्चले हो उठा और कमल हिलने लगे। इससे ऐसा लग रहा था। बानो बहु जलाशय राजा नल को पक्षी पकड़ने से मना कर रहा है। जैसे किलोक में किसी व्यक्ति के द्वारा किसी निरपराध व्यक्ति को परेशान करने पर कोई दयालु व्यक्ति हाथ हिलाकर वैसा कार्य करने से उसे रोकता है। उसी प्रकार वह जलाशय दयाभाव से युक्त होकर अपने कमल रूपी हाथों से नल को निरपराधी हंस को पकड़ने से मना कर रहा था ।

पतत्त्रिणा तद्रुचिरेण विय्चतं श्रियः प्रयान्त्याः प्रविहाय पल्वलम्।

चलत्पदाम्भोरुहनूपुरोपमा चुकूजकूले कलहंस मण्डली।। 127 ।।

सरलार्थ-

मनोहर पक्षी से रहित उस तालाब को छोड़कर जाती हुई लक्ष्मी के च×चल चरण कमल के नूपुर के समान कलहंसों का झुण्ड तट पर शब्द करने लगा। इस पद्य में हंसों के कूजन को नूपुर की ध्वनि के समान बताया है, अतः उपमा अलंकार है।

भावार्थ –

राजा नल के द्वारा हंस के पकड़ लिए जाने पर उसके साथ ही उस तालाब की शोभा भी समाप्त हो गई। उस जाती हुई लक्ष्मी के चलाय- मानं चरण रूप कमल थे और उसके नूपुर की ध्वनि के समान तालाब के तट के कलहंसों का झुण्ड कूजन करने लगा। अपने झुण्ड से किसी हंस के अलग हो जाने पर कूजन करने लगना हंसों का स्वभाव है। लोक में भी प्रिय विरंहित स्थान को छोड़कर जाती हुई नायिका के नूपुर शब्द करते हैं।

स्वयं आकलन कीजिए –

अभ्यास प्रश्न 1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए –

1. कौन क्षणभर के लिए जलाशय के तट पर सो गया था?
2. किसने हंस को स्वर्णमय कमल समझा था?
3. राजा नल ने किसके कपट के समान हंस को पकड़ लिया?
4. कौन नल को पक्षी पकड़ने से मना कर रहा था?
5. उस तालाब के कमलों पर कौन निवास करती थी?

20.4 नैषधीयचरित महाकाव्य के प्रथम सर्ग के 128-135 पद्यों का सरलार्थ

न वासयोग्या वसुधेयमीदृशस्त्वमङ्ग यस्याः पतिरुज्झितस्थितिः।

इति प्रहाय क्षितिमाश्रिताः नभः खगास्तमाचुक्रुशुरारवैः खलु।। 128 ।।

सरलार्थ-

हे नल! यह पृथ्वी निवास के योग्य नहीं है, जिसके मर्यादा रहित इस प्रकार के आप स्वामी हैं, इस प्रकार पृथ्वी को छोड़कर आकाश का आश्रम प्राप्त करने वाले पक्षियों ने नल की उच्च स्वर से निन्दा की। इस पद्य में भय के कारण उड़कर पक्षियों के द्वारा किये गये शब्दों में नल की निन्दा करने की सम्भावना की गई है। अतः उत्प्रेक्षा अलंकार है।

भावार्थ-

हंस के पकड़े जाने पर अन्य पक्षी भयभीत होकर शब्द करते हुए आकाश में उड़ गये । ऐसा लग रहा था मानो वे नल से कह रहे हों कि 'यह पृथ्वी हम लोगों के रहने योग्य नही है। जहाँ तुम जैसे मर्यादा हीन और अविवेकी राजा हो, वहाँ पर रहना सर्वथा हानिकर होता है।" इस प्रकार वे पक्षी राजा नल की निन्दा कर रहे थे ।

न जातरूपच्छदजातरूपता द्विजसय दृष्टेयमितिस्तुवन्मुहुः।

अवादि तेनाथ स मानसौकसां जनाधिनाथः करपय्जरस्पृशः।। 129 ।।

सरलार्थ-

पक्षी की यह स्वर्णमय पंखों की सुन्दरता नहीं देखी गई है, इस प्रकार बार-बार प्रशंसा करते हुए राजा नल हाथ रूपी पिंजड़े का स्पर्श करने वाले उस हंस ने कहा। इस पद्य में करपंजर में रूपक अलंकार है।

भावार्थ –

राजा नल उस हंस को देखकर मोहित हो गये और 'इस प्रकार सोने के पंख से उत्पन्न सुन्दरता किसी पक्षी की कभी नहीं देखी है ऐसा कहते हुए उसकी बार-बार प्रशंसा कर रहे थे। तभी वह हंस राजा नल से बोला । नल के हाथ रूपी पिंजरे में स्थित होने से यह सूचित होता है कि हाथ की पकड़ ढीली थी, जिससे वह हंस पीडित नहीं था। इसका अर्थ इस प्रकार भी हो सकता है कि ब्राह्मण की सुवर्ण सामग्री से उत्पन्न सुन्दरता कहीं नहीं देखी गई है, अर्थात् ब्राह्मण प्रायः धन हीन होते हैं। उसी प्रकार पक्षी का भी पंख सुवर्ण का नहीं होता है।

धिगस्तु तृष्णा तरलं भवन्मनः समीक्ष्य पक्षान्मम हेमजन्मनः।

तवार्णवस्येव तुषारसीकरैर्भवेदमीभिः कमलोदयः कियान्।। 130 ।।

सरलार्थ-

मेरे सोने के बने हुए पंखों को देखकर लोभ से चञ्चल आप के मन को धिक्कार है। हिम के कणों से समुद्र के समान आपकी इन पंखों से कितनी श्रीवृद्धि होगी। इस पद्य में नल की समुद्र से समानता करने से उपमा अलंकार है।

भावार्थ-

हंस राजा नल से कहता है कि है राजन् मेरे सुवर्णमेय पंच को देखकर आपका मन लोभ से चञ्चल हो गया। अतः आपके ऐसे मन को धिक्कार है। क्योंकि जिस प्रकार हिम कणों से समुद्र के जल की वृद्धि नहीं होती है, उसी प्रकार समस्त ऐश्वर्य से सम्पन्न तुम्हारा धन मेरे सुवर्णमय पंचों से कदापि नहीं बढ़ सकता है। अतः इस प्रकार का तुच्छ लोभ तुम्हारे लिए उचित नहीं है।

न केवलं प्राणिवधो वधो मम त्वदीक्षणाद्विश्वसितान्तरात्मनः।

विगर्हितं धर्मधनैर्निबर्हणं विशिष्य विश्वासजुषां द्विषामपि।। 131 ।।

सरलार्थ-

आप के दर्शन से विश्वस्त मन वाले मेरा वध केवल प्राणिमात्र का वध नहीं होगा, विश्वास युक्त शत्रुओं का भी वध धर्माचार्यों के द्वारा विशेष रूप से निन्दित किया गया है। इस पद्य में अनुप्रास अलंकार है।

भावार्थ-

हंस कहता है कि हे राजन् ! मेरा वध करने से आप को केवल प्राणि-वध का ही पातक नही लगेगा अपितु विश्वासघात का भी पातक लगेगा, क्योंकि विश्वास करके आये हुए शत्रुओं के वध को भी धर्माचायों ने निन्दित किया है।

पदे पदे सन्ति भटा रणोद्भटा न तेषु हिंसारस एष पूर्यते।

धिगीदृशं ते नृपतेः कुविक्रमं कृपाश्रये यः कृपणे पतत्रिणि।। 132 ।।

सरलार्थ-

पग-पग पर रण प्रचण्ड योद्धा है, उनमें तुम्हारा हिंसानुराग नहीं पूरा हुआ? तुम्हारे (जैसे) राजा के इस कुत्सित पराक्रम को धिक्कार है, जो कृपा के पात्र मुझ पक्षी पर प्रकट हो रहा है। इस पद्य में भी अनुप्रास अलंकार है।

भावार्थ-

हंस कहता है कि राजन् ! स्थान-स्थान पर युद्ध करने वाले उद्धट योद्धा है। क्या उनके साथ युद्ध में आपका हत्या करने का व्यसन पूरा नहीं होता है ? क्या उनके साथ युद्ध करने में असमर्थ हो ? हत्या करनी है, तो शत्रुओं की करो, यदि वीर और पराक्रमी हो तो रण योद्धाओं से युद्ध करो। आपका यह कैसा पराक्रम है ? कि मुझ जैसे तुच्छ जीव, एक दीन पक्षी को सोते हुए पकड़ कर तुम उसकी हिंसा करना चाहते हो। अपनी हिंसक वृत्ति को पूरा करना चाहते हो। आपके ऐसे पराक्रम को धिक्कार है। अथवा आपके ऐसे पृथ्वी पर प्रसिद्ध विक्रम (कु+ विक्रम) को धिक्कार है।

फलेन मूलेन च वारिभूरुहां मुनेरिवेत्थं मम यस्यवृत्तयः।

त्वाद्य तस्मिन्नपि दण्डधारिणा कथं न पत्या धरणी हृणीयते।। 133 ।।

सरलार्थ-

मुझ जिस (हंस) की जीविका मुनि के समान कमलों के फल और मूल से है, उस (हंस) पर दण्ड धारण करने वाले आप जैसे पति से आज पृथ्वी क्यों नहीं लज्जित होती है। इस पद्य में हँस की मुनि से समानता के कारण उपमा अलंकार है।

भावार्थ-

हंस कहता है कि मेरी जीविका मुनि के समान है। जिस प्रकार मुनि फल-मूल आदि खाकर जीवन निर्वाह करते हैं, उसी प्रकार में भी कमल के फल (कमल गट्ट) तथा मूल (कमल नाल की जड़) से अथवा जल में उत्पन्न होने वाले कमलादि तथा भूमि में उत्पन्न होने बाले आआदि के फल और मूल से जीवन यापन करता है। ऐसे दया के पात्र मुझ पर भी यदि आप दण्ड का प्रयोग करते हैं, तो पत्नी रूया पृथ्वी आग से लज्जित क्यों नहीं होती है ? बसत्-आचरण करने वाले तथा दीनों को कष्ट देने वाले पति से जिस प्रकार पत्नी लज्जित होती है, उसी प्रकार मुनि सदृश मुझको कष्ट देते हुए आप से पृथ्वी को भी लज्जित होना चाहिए ।

इतीदृशैस्तं विरच्यवाङ्मयैः सचित्रवैलक्ष्य कृपं नृपं खगः।

दयासमुद्रे स तदाशयेऽतिथीचकार कारुण्यरसा पगा गिरः।। 134 ।।

सरलार्थ-

इस प्रकार ऐसे वचनों से उस राजा को आश्चर्य, लज्जा और कृपा से युक्त करके वह पक्षी (हंस) दया के सागर नल के हृदय में करुण रस की नदी रूपी वाणी को प्रवेश कराया। इस पद्य में दया में समुद्र तथा कारुण्य रस में नदी के आरोप से रूपक अलंकार है।

भावार्थ –

इस प्रकार हंस के बचनों को सुनकर राजा नल आश्चर्य, लज्जा और कृपा से भर गये। तब हंस दयात् राजा से करुणापूर्ण वचन उसी प्रकार कहने लगा, जिस प्रकार नदियाँ जल से पूर्ण समुद्र में प्रवेश करती हैं।

मदेक पुत्र जननी जरातुरा नवप्रसूतिर्वरटातपस्विनी।

गतिस्तयोरेष जनस्तमर्दयन्नहो विधे त्वां करुणा रुणद्धि न।। 135 ।।

सरलार्थ-

हाय! मुझ इकलौते पुत्र वाली तथा वृद्धावस्था से पीड़ित मेरी माता है, नवप्रसूता तथा पतिव्रता मेरी पत्नी है। यह व्यक्ति ही उन दोनों का अवलम्ब है। हे विधे! उस व्यक्ति को पीड़ित करते हुए करुणा तुमको रोकती नहीं है। इस पद्य में मदेकपुत्र, जरातुरा आदि विशेषणों से स्पष्ट है कि सभी साभिप्राय है। अतः परिकर अलंकार है।

भावार्थ-

हंस कारुणिक भाव से कहता है कि हाय विधाता ! अपनी माता का मैं अकेला ही पुत्र हूँ और वह भी वृद्धावस्था से पीड़ित है। मेरी पत्नी नवप्रसूता एवं पतिवता है। इस प्रकार अपनी माता तथा पत्नी दोनों की जीविका चलाने वाला मैं ही हूँ। ऐसी स्थिति में भी मुझको मारते हुए तुमको दया नहीं आती है। जरा पीड़ित माता और नवप्रसूता पत्नी दोनों हो स्वयं जीविका अर्जित करने में असमर्थ है तथा एक दूसरे की भी सहायता नही कर सकती हैं। मेरी पत्नी पतिव्रता है, इसलिए मेरे मरने के बाद वह न तो दूसरा विवाह कर सकती है, (अत.) न ही दूसरी सन्तान पैदा कर सकती है। और उन दोनों का एक मात्र आश्रय मैं मर ही रहा हूँ। तब भी हे भाग्य तुम्हें दया नहीं आती है, कितना आश्चर्य है। इस श्लोक का इस प्रकार भी अर्थ किया जा सकता है

(अहो गदेकपुत्रा, अजननी, जरातुरा न, तपस्विनी, व प्रसूतिः वरटा, एप जनः लयोः गतिः, तम् अर्दयन् विधे! त्वां करुणा न रुणद्धि । अर्थात् मुझसे एक पुत्र बाली, मेरे मरने के बाद पुनः जननी न हो सकने वाली, वृद्धावस्था से जो पीड़ित नहीं है, पतिव्रता, वप्र में चेष्टावली अर्थात् पर्वत शिखरों पर घूमने बाली मेरी पत्नी है। मैं अकेला उन दोनों (पत्नी-पुत्र) का अवलम्ब है। ऐ भाग्य ! ऐसे मुझको भी मारते हुए तुमको दया नहीं आती है। आशय यह है कि मेरी पत्नी हसी बुढ़ापे से पौड़ित नहीं है, फिर भी तप- स्विनी, (पतिव्रत।) होने से मेरे मरने पर पुनः विवाह न करके पुत्रोत्पादन नहीं करेगी और सवंदा पर्वत शिखरों पर घूम-घूम कर आत्म रक्षा करेगी । अपने प्रिय निवास मान सरोवर में कभी नहीं जायेगी। अतः ऐसी अपनी पत्नी और पुत्र दोनों के जौबिका बाहक मुलको मारते हुए हे भाग्य ! तुम्हें दया नहीं आती है।

स्वयं आकलन कीजिए –

अभ्यास प्रश्न 2

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए –

1. किसने राजा नल की निन्दा की थी?
2. करपज्जर शब्द में कौन सा अलंकार है?
3. हंस के पंख किसके समान दिख रहे थे?
4. राजा नल को किसने धिक्कारा था?
5. किसकी पत्नी नवप्रसूता है?

21.5 सांराश

इस इकाई में जलाशय की सुन्दरता का वर्णन प्रस्तुत किया गया है। जलाशय में सुन्दर हंसों को देखते हुए नल को चित्रित किया है। जलाशय में कमलों की विद्यमानता के कारण उसे लक्ष्मी का निवास भी कवि ने कहा है। इस इकाई के अन्त में हंस के सौन्दर्य को भी चित्रित किया गया है।

21.6 कठिन शब्दावली

उपप्लवलं=तालाब के किनारे क्रीडा	ह्निया=लज्जा से
पीतमम्भ:=पीला वरुण देव	हयात=घोड़े से
अम्बुजै:=कमलों से	संभ्रमात्=घबराहट से
ऊर्मिलोलै:=तरंगों से चञ्चल	वसुधा=पृथ्वी
आचुकुशु:=निन्दा कर	हेमजन्मन:=सुनहरे पंखों वाले
रणोद्धटा=युद्ध में प्रचण्ड	वाड़्मयै:=वचनों से आश्चर्य

21.6 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न- 1	1. राजा नल	2. नल ने	3. नारायण
	4. सरोवर	5. लक्ष्मी	
अभ्यास प्रश्न- 2	1. हंस ने	2. रूपक	3. स्वर्ण
	4. हंस ने	5- हंस की	

21.7 सहायक ग्रन्थ

1. नैषधचरितमहाकाव्यम् (प्रथम सर्ग) श्रीहर्ष, व्याख्याकार: डॉ- सुरेन्द्र देव शास्त्री, चौखम्बा संस्कृत सीरीज वाराणसी।
2. नैषधचरितमहाकाव्यम् (प्रथम सर्ग) श्रीहर्ष, व्याख्याकार: डॉ- देवनारायण मिश्र, साहित्य भण्डार सुभाष बाजार मेरठ।
3. संस्कृत साहित्य का इतिहास, बलदेव उपाध्याय, शारदा निकेतन वाराणसी।
4. संस्कृत साहित्य कोश, राजवंश सहाय हीरा, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

21.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

1- नैषधीयचरित में वर्णित अलंकारों का वर्णन कीजिए।

2- निम्नलिखित पद्यों की व्याख्या कीजिये-

प्रथमसर्ग-,126, 128, 130, 131, 133, 134, 135

द्वाविंशति अध्याय
इकाई- 22
नैषधीयचरित : प्रथम सर्ग (पद्य 136-145)

संरचना

22.1 प्रस्तावना

22.2 उद्देश्य

22.3 नैषधीयचरित महाकाव्य के प्रथम सर्ग के 136-140 पद्यों का सरलार्थ

- स्वयं आकलन कीजिए

22.4 नैषधीयचरित महाकाव्य के प्रथम सर्ग के 141-145 पद्यों का सरलार्थ

- स्वयं आकलन कीजिए

22.5 सारांश

22.6 कठिन शब्दावली

22.7 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

22.8 सहायक ग्रन्थ

22.9 अभ्यास के लिए प्रश्न

22.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों इस इकाई में नैषधीयचरित के प्रथम सर्ग के 136-145 पद्यों का अलंकार सहित अध्ययन किया जायेगा। इस इकाई में हंस के कारुणिक पीड़ा का वर्णन प्रस्तुत किया जायेगा। इसमें हंस राजा नल से मुक्त करने की प्रार्थना करते हुए अपने प्रियजनों से वियुक्त होने की पीड़ा को व्यक्त करता है। इसे इस इकाई में प्रस्तुत करने का प्रयास किया जायेगा।

22.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जानने में सक्षम होंगे-

- नैषधीयचरित के प्रथम सर्ग के पद्यों का सरलार्थ।
- नैषधीयचरित में प्रयुक्त अलंकारों के वर्णन भी भी सक्षम हो जायेंगे।
- नैषधीयचरित में प्रयुक्त सूक्तियों को समझने में सक्षम हो जायेंगे।
- प्रथम सर्ग की व्याख्या करने में भी निपुण हो जायेंगे।

22.3 नैषधीयचरित महाकाव्य के प्रथम सर्ग के 136-140 पद्यों का सरलार्थ

मुहूर्त्तमात्रं भव निन्दया दयासखाः सखायः स्त्रवदश्रवो मम।

निवृतिमेष्यन्ति परं दुरुत्तरस्त्वयैव मातः सुतशोकसागरः।। 136 ।।

सरलार्थ-

हे माता! मेरे दयालु मित्र आँसू बहाते हुए क्षणभर संसार की निन्दा से शान्ति प्राप्त कर लेंगे, परन्तु तुम्हारे द्वारा पुत्र शोक का सागर पार करना कठिन होगा। इस पद्य में सुतशोक में सागर का आरोप होने से रूपक अलंकार है।

भावार्थ–

हंस कहता है कि है माता मेरे दयालु मित्र भी क्षण भर आँसू बहाते हुए तथा यह संसार अनित्य है, यहाँ सब की यह गति है, राजा नल बढ़ादुराचारी है. इत्यादि संसार के आवरण और स्वभाव की निन्दा करते हुए मेरे मृत्युजन्य शोकको भूल जायेगे, परन्तु पुत्र पर माता का असीम स्नेह होता है, इसलिय तुम मेरे मृत्युजन्य शोक सागर में जिन्दगी भर डूबी रहोगी अर्थात तुम्हें जीवनभर कष्ट सहना पड़ेगा।

मदर्थसन्देशमृणालमन्थरः प्रियः कियद्दूर इति त्वयोदिते।

विलोकयन्त्या रुदतोऽथपक्षिणः प्रिये स कीदृग्भविता तव क्षण।। 137 ।।

सरलार्थ-

मेरे लिए सन्देश तथा मृणाल भेजने में सुस्त प्रियतम कितनी दूर है? हे प्रिये! ऐसा तुम्हारे कहने पर रोते हुए पक्षियों को देखकर तुम्हारा वह क्षण कैसा होगा?

भावार्थ-

हंस विलाप करता हुआ कहता है कि हे प्रिये ! जब मेरे साथी पक्षी तुम्हारे पास पहुँचेगे और तुम उनसे पूछोगी कि 'मेरे प्रियतम जो सन्देश और मृणाल भेजने में अधता लाने में घुस्त हैं. वे कितनी दूर है' तब ने पक्षी कुछ न कहकर केवल रोने लगेगे। तब उनको रोता हुआ देखकर तुम न कहे गये अनिष्ट को भी समझ जाओगी, तब तुम्हारी क्या दणा होगी? अर्थात् तुम्हारे लिये वह बहुत ही कष्ट का क्षण होगा ।

कथं विधातर्मयि पाणिपङ्कजा त्तवप्रियाशैत्त्य मृदुत्वशिल्पिनः।

वियोक्ष्यसे वल्लभयेति निर्गता लिपिर्ललाटन्तपनिष्ठुराक्षरा।। 138 ।।

सरलार्थ-

हे विधाता! प्रिया की शीतलता और मृदुता को बनाने वाले तुम्हारे कर कमल से मेरे विषय में 'प्रिया से वियुक्त होगे' ऐसा ललाट को तपाने वाले निष्ठुर अक्षरों से युक्त लेख कैसे निकला? इस पद्य हाथ में कमल का आरोप होने से रूपक अलंकार है।

भावार्थ-

हंस कहता है कि हे ब्रह्मा ! तुमने अपने जिन हाथों से मेरी रिया की शीतलता और कोमलता की रचना की है, तुम्हारे वे कमल समान कोमल हाथ शीतलता और कोमलता की रचना के चतुर कारीगर है। अतः उनसे शीतल और कोमल दस्तु की ही रचना उचित और सम्मत है। उसके विपरीत उष्ण और कठोर वस्तु की रचना या लेख उचित नहीं है, फिर तुमने मेरे विश्व में प्रियतमा में वियोग सम्बन्धी अति कठोर और ललाटन्तप लेख पैसे लिख दिया ? ऐसा करना सर्वचा स्वभाव विरुद्ध है।

अयिस्वयूथ्यैरशनिक्षतोपमं ममाद्यवृत्तान्तमिमंबतोदिता।

मुखनि लोलाक्षि दिशामसंशयं दशापि शून्यानि विलोकयिष्यसि।। 139 ।।

सरलार्थ-

हे चञ्चल नेत्रें वाली! आज अपने झुण्डों के द्वारा वज्रप्रहार के समान मेरे इस वृत्तान्त के कहे जाने पर खेद है कि निश्चय रूप से दिशाओं के दशों मुखों को शून्य देखोगी। इस पद्य में हँस के वृत्तान्त को वज्रपात के समान बताने से उपमा अलंकार है।

भावार्थ-

हंस कहता है कि चपलनयने प्रिये ! आज जब मेरे झुण्ड वाले हंस तुम्हारे पास पहुँचेगे और वखपात करने वाले मेरे मृत्यु के दुःखद समाचार को तुम से कहेंगे तो निश्चित ही तुम्हें असह्य दुःख होगा । तुम्हें सारी दिशाएँ सूनी लगेंगी । बयोंकि तुम्हारे लिए कोई सहारा नहीं रह जायगा ।

ममैव शोकेन विदीर्णवक्षसा त्वया विचित्रिङ्गिविपद्यते यदि।

तदास्मि दैवेन हतोऽपि हा हतः स्फुटं यतस्ते शिशवः परासवः।। 140 ।।

सरलार्थ-

हे सुन्दर अंगों वाली! यदि मेरे ही शोक से विदीर्ण हृदयवाली तुम मर जाती हो तो कष्ट है कि दैव से मारा गया मैं पुनः मारा जाऊँगा क्योंकि तुम्हारे बच्चे निष्प्राण हो जायेंगे। इस पद्य में हँस के दुःख की अधिकता का कारण का निर्देश होने से काव्यलिगं अलंकार है।

भावार्थ-

हंस कहता है कि हे सुन्दरि । मेरे मरने के बाद तुम्हारा भी जीवित रहना मुझे असम्भव लगता है कि अनि गुमार दवाली अङ्गनाओं का हृदय पति के बावन्ति दियोग से विदो जाता है। अतः तुम्हारा भी हृदय विदीर्ण हो जायगा। तुम्हारे मरने के बाद बच्चों का पालन- पोषण करने वाला कोई नहीं रहेगा और में अनाथ बच्चे भी मर जायेंगे । इस प्रकार मेरे मरने में पूरा परिवार ही नष्ट हो जायगा। अतः मेरे दुर्गाव ने मुझे बड़ा दुःसह दुःख दिया है।

स्वयं आकलन कीजिए –

अभ्यास प्रश्न 1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए –

1. कौन पुत्र शोक की बात कर रहा था?
2. कौन संदेश भेजने की बात पर दुखी हो रहा था?
3. हंस किस के समक्ष वियोग की बात कर रहा था?
4. कौन निश्चय रूप से दिशाओ के दशों मुखों को शून्य देखेगी ?
5. किसके बच्चे निष्प्राण हो जायेगे?

22.4 नैषधीयचरित महाकाव्य के प्रथम सर्ग के 141-145 पद्यों का सरलार्थ

तवापि हा हा विरहात्क्षुधाकुलाः कुलायकूलेषु विलुठ्य तेषु ते।
चिरेणलब्धा बहुभिर्मनोरथैः गताः क्षणेनास्फुटितेक्षणा मम।। 141 ।।

सरलार्थ-

हाय! अनेक मनोरथों से बहुत देर प्राप्त अस्फुटित नेत्रें वाले मेरे वे बच्चे तुम्हारे भी विरह से व्याकुल होकर उन घोसलों के समीप छटपटाकर क्षणभर में मर जायेंगे।

भावार्थ -

हंस अति करुणा से विलाप करता है कि हे प्रिये ! मेरे मरने के बाद जब तुम भी मर जाओगी, तब बहुत देर से अनेकों मनोरथों से प्राप्त हुए मेरे वे बच्चे,शैशव के कारण जिनकी भाँखें भी अभी खुली नहीं है, निश्चित ही तुम्हारा भी सहारा न होने से, भूख-प्यास से व्याकुल होकर घोसलो के पास ही तड़प-तड़प कर मर जायेंगे ।

सुताः कमाहूय चिराय चुड्कृतैः विधाय कम्प्राणि मुखनि कं प्रति।
कथासु शिष्यध्वमिति प्रमील्य स स्त्रुतस्य सेकाद् बुबुधे नृपाश्रुणः।। 142 ।।

सरलार्थ-

हे पुत्र! चूँ चूँ शब्दों से किसको देर तक बुलाकर किसके प्रति मुखों को कम्पित करके कथाओं में शेष रह जाओगे, इस प्रकार मूर्च्छित होकर वह हँस बहे हुए राजा के आँसुओं के सेचन से होश में आया। इस पद्य में स्वभावोक्ति अलंकार है।
से होश में आया ।

भावार्थ –

इस पहले प्रिया को सम्बोधित करके कहने के बाद पुत्रों को सम्बोधित करके कहता है कि हे पुत्रों ! तुम लोग चुं-चुं शब्दों से देर तक बुला करके किमसे भोजनादि मांगोगे और किसके प्रति अपने मुखों को कम्पित करके बोलना सीखोगे? अर्थात् गुझ पिता और माता के न रहने पर न तो तुशको कोई भोजनादि देने वाला होगा और ना ही चलना-बोलना आदि सिखाने वाला होगा। भूख-प्यास से तड़प-तड़प कर तुम सब कथावशेष रह जाओगे अर्थात् तुम लोग भी जीवित नहीं रह सकोगे। इतना कहते हुए वह

हंस मूच्छित हो गया। इधर हंस के बिलाप से करुणा से आई हुए राजा नल के आँसू बह रहे थे, जिसके प्रवाह से वह हंस भीग कर सहसा होश में आ गया ।

इत्थममुं विलपन्तममुय्चद्दीनदयालतया{वनिपालः।

रूपमदर्शि धृतोऽसि यदर्थं गच्छ यथेच्छमथेत्यभिधाय।। 143 ।।

सरलार्थ-

दीनों के प्रति दयालु होने के कारण राजा ने, 'जिसके लिये पकड़े गये हो, वह रूप देख लिया है' ऐसा कहकर इस प्रकार विलाप करते हुए उस हँस को छोड़ दिया। इस पद्य में अनुप्रास अलंकार है।

भावार्थ-

अपनी पहली और बच्चों के प्रति विलाप करने बाते उस हंस से राजा नल ने कहा कि तुन्हारे किस रूप को देखने के लिये मैंने पकड़ा था, वह रूप देख लिया, अब तुम अपनी इच्छा के अनुसार जहाँ चाहो वहाँ जा सकते हो और उसको छोड़ दिया। इस प्रकार हंस के द्वारा उपालम्भित राजा ने दयालुता का परिचय दे दिया ।

आनन्दजाश्रुभिरनुस्त्रियमाण मार्गान् प्राक्शोकनिर्गमितनेत्रपयः प्रवाहन्।

चक्रे स चक्रनिभघ्क्रमणच्छलेन नीराजनां जनयतां निजवान्धवानाम्।। 144 ।।

सरलार्थ-

उस हँस ने चक्राकार भ्रमण के छल से आरती करते हुए अपने बन्धुओं के पहले शोक से निकलते हुए नेत्रश्रु प्रवाहों को आनन्द से उत्पन्न आँसुओं से अनुसरण किये जाते हुए मार्गों वाला बना लिया। इस पद्य में अनुप्रास अलंकार है।

भावार्थ –

राजा नल ने जब हंस को पकड़ लिया तब उसके सहचर शोक के कारण आंसु बहा रहे थे और जब उसको छोड़ दिया तो वही आंसू हर्ष से उत्पन्न आँसू हो गये। उस हंस के पर उसके सहचर जो चक्राकार भ्रमण कर रहे थे अर्थात् गहरा रहे थे, तो ऐसा लग रहा था मानो उसके छूटने की खुशी में वे सब उनकी आरती कर रहे हों। लोग में भी किसी केपकड़े जाने पर उसके बान्धव जन कष्ट से आंसू बहाते हैं और उसके छूटने पर हर्ष के आँसू बहाते हैं तथा उसकी आरती करते हैं।

श्रीहर्षं कविराजराजिमुकुटालङ्कारहीरः सुतं
श्रीहीरः सुषवे जितेन्द्रिचयं मामल्लदेवी च यम्।
तच्चिन्तामणिमन्त्रचिन्तनफले श्रृंगार भङ्ग्या
महाकाव्ये चारुणि नैषधीयचरिते सर्गोऽमादिर्गतः।। 145 ।।

सरलार्थ-

कविवरों की पंक्ति के मुकुट के अलङ्कार रूप हीर मणि के समान श्री हीर तथा मामल्ल देवी ने जिस जितेन्द्रिय श्रीहर्ष नामक पुत्र को उत्पन्न किया, उनके चिन्तामणि मन्त्र के चिन्तन के फलस्वरूप शृंगार रस की रचना से सुन्दर नैषधीय चरित नामक महाकाव्य में यह प्रथम सर्ग समाप्त हुआ।

भावार्थ –

महाकवि श्री हर्ष अपने माता-पिता के नाम स्मरण पूर्वक अपना परिचय देते हुए कहते हैं कि उनके पिता श्री होर कविवरों में अग्रणी थे तथा उनकी माता का नाम मामस्त देवी था, जिन्होंने अपने पुत्र श्री हर्ष को उत्पन्न किया था। कवि का कथन है कि शृंगार प्रधान नैषधीय चरितम् महाकाव्य की रचता ३२। रोया का परिणाम है। उस काव्य का यह पहला सग समाप्त हुआ ।

स्वयं आकलन कीजिये-

अभ्यास प्रश्न 2

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिये-

1. नैषध काव्य में लता रूपिणी नायिकाओं को मधुर नृत्य सिखाने के लिए किसे गुरु कहा है?
2. नैषधकाव्य के 116वें पद्य में श्रीहर्ष ने वृक्ष की समानता किस पर्वत से की है?
3. न वासयोग्या वसुधेयमीदृशस्त्वमघयस्याः पतिरुज्झितस्थितिः --इस पद्य में पक्षी किसकी निन्दा करते हैं?
4. मदेक पुत्र जननी जरातुरा नवप्रसूतिर्वरटातपस्विनी--- यह किस ग्रन्थ से सम्बन्धित है?
5. नैषधीयचरित महाकाव्य के प्रथम सर्ग में (अन्तिम तीन पद्यों को छोड़कर) कौन सा छन्द प्रयुक्त हुआ है?

22.5 सारांश

इस इकाई में हंस के करुण क्रन्दन को कवि ने प्रस्तुत किया है। इसमें हंस राजा नल से मुक्ति की प्रार्थना करते हुए कहता है कि वह अपने परिवार की आजिविका का एकमाज्ञ साधन है। यदि आप मुझे मार दोगे तो मेरा परिवार मेरे बिना यूँ ही मर जायेगा क्योंकि मेरी माता अब वृद्ध है और पत्नी नवप्रसूता है। इसलिए आप मुझे मुक्त करने की कृपा करें। हंस की याचना सुनकर राजा नल आश्चर्य, लज्जा से भरकर उसे मुक्त कर देते हैं। यही इस इकाई का सारांश है।

22.6 कठिन शब्दावली

नवप्रसूति=नए प्रसव वाली　　　स्त्रवदश्रव:=आँसुओ को गिराते हुए
लोलाक्षि=हे चञ्चल नयन वाली　　　परासव:=मृत्यु
दैवेन्=भाग्य से　　　क्षुधाकुला:=भूख से पीड़ित

22.7 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न -1　1. हंस　2. हंस　3. नल　4. हंसनी　5. हंस के

अभ्यास प्रश्न -2　1. वनानिल को　2. मैनाक　3. नल　4. नैषधीयचारित　5. वंशस्थ

22.8 सहायक ग्रन्थ

1. नैषधचरितमहाकाव्यम् (प्रथम सर्ग) श्रीहर्ष, व्याख्याकार: डॉ- सुरेन्द्र देव शास्त्री, चौखम्बा संस्कृत सीरीज वाराणसी।
2. नैषधचरितमहाकाव्यम् (प्रथम सर्ग) श्रीहर्ष, व्याख्याकार: डॉ- देवनारायण मिश्र, साहित्य भण्डार सुभाष बाजार मेरठ।
3. संस्कृत साहित्य का इतिहास, बलदेव उपाध्याय, शारदा निकेतन वाराणसी।
4. संस्कृत साहित्य कोश, राजवंश सहाय हीरा, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

22.9 अभ्यास के लिए प्रश्न

1- नैषधीयचरित के रचयिता श्री हर्ष की कृतियों का वर्णन कीजिए।

2- निम्नलिखित पद्यों की व्याख्या कीजिये-
प्रथमसर्ग- 136, 137, 140, 141, 143, 144, 145